ज्योतिष पुस्तक माला

खगोल शास्त्र

खगोल शास्त्र

ज्योतिष पुस्तक माला

खगोल शास्त्र

वी. पी. जैन

प्रकाशक

भारतीय प्राच्य एवं सनातन विज्ञान संस्थान

खगोल शास्त्र

मूल्य : ₹ 150.00

© प्रकाशक, भारतीय प्राच्य एवं सनातन विज्ञान संस्थान, (पंजी0)
4649/21 दरियागंज, नई दिल्ली-110002 दूरभाष : 23271975

लेखक :

वी. पी. जैन

एम.ए. (गणित व खगोल शास्त्र) सेवानिवृत लेखा परीक्षा अधिकारी

दूरभाष : 23959437, 22722152, 27551029

पंचम, संशोधित संस्करण, मकर संक्रांति सम्वत् 2071 तदानुसार जनवरी 2015

षष्ठम संशोधित संस्करण, मार्च 2018

प्रकाशक :

भारतीय प्राच्य एवं सनातन विज्ञान संस्थान (पंजी.)

4649/21 दरियागंज, नई दिल्ली-110002

दूरभाष : 23271975, 23256911

लेजर टाइपसैटिंग :

एब्रो एन्टरप्राईजिज

2369, छत्ता शाहजी, चावड़ी बाजार,

दिल्ली-110006

दूरभाष : 23284462

मुद्रण :

अशोक प्रिंटिंग प्रेस

2810, गली माता वाली, नई सड़क,

दिल्ली-110006

दूरभाष : 23264968, 9810377836

वितरण कर्ता :

आर.वी.एस. डिस्ट्रीब्यूटर्स

जी-4/30, गली न. 3, सोनिया विहार

पाँचवाँ पुस्ता, दिल्ली-110094

पुस्तक भारती,

भारतीय विद्या भवन

कस्तूरबा गांधी मार्ग

नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 23381369

प्रस्तावना

प्रस्तुत पाठ इस आशय से लिखे गए हैं कि इनसे उन विद्यार्थियों की खगोल शास्त्र की आवश्यकताएं पूरी हो सकें जो हिन्दू ज्योतिष शास्त्र का अध्ययन करना चाहते हैं और जिनका गणित में उच्चतम माध्यमिक स्तर तक का गणित, ज्योमिति तथा बीजगणित में प्रारंभिक स्तर का ज्ञान है। यद्यपि इन पाठों में समझाए गये परिदृश्य तीन आयाम के हैं, विद्यार्थी इन्हें अपनी कल्पना से समझ सकते हैं तथा स्पष्ट किए गए मुद्दों को आत्मसात कर सकते हैं।

इन पाठों को तैयार करने में श्री आर.एन. वशिष्ठ भा. ले. तथा ले. प. (सेवानिवृत) द्वारा दिए गए क्लास नोट, जार्ज डब्लयू पार्कर द्वारा लिखित "एलिमेन्ट्स आफ एस्ट्रोनामी, डब्लयू एम. स्मार्ट द्वारा लिखित "स्फेरिकल एस्ट्रोनामी" तथा पेट्रिक मूरे द्वारा लिखित "ए टू जेड एस्ट्रोनामी" से मदद ली गई है। श्री चन्द्र भूषण प्रसाद ज्योतिष विशारद ने इसका अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद किया है।

इसमें कुछ सामग्री मेरी पुस्तक 'खगोल और ज्योतिषीय गणित' जो अल्फा पवलिकेशन्स ने छापी है, से ली गई है।

मुझे आशा है कि विद्यार्थियों को खगोल शास्त्र को समझने तथा ज्योतिष में इसके उपयोग में इससे काफी लाभ होगा।

कुल मिलाकर इसमें ग्यारह अध्याय हैं जिनमें निम्न विषयों पर चर्चा की गई है–

अध्याय 1	खगोल शास्त्र क्या है तथा इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि।
अध्याय 2	परिभाषाएं
अध्याय 3 व 4	पृथ्वी और सौर प्रणाली तथा शनि और अन्य ग्रह आन्तरिक तथा वाह्य ग्रह ग्रहों की वक्री गति सप्ताह के सात दिनों के नाम किस प्रकार रखे गए धूमकेतु आदि।

अध्याय 5	चल और अचल भचक्र अचल और अक्ष विचलन अयनांश।
अध्याय 6	चन्द्रमा की कलाएं-इसका संयुति काल राहु और केतु।
अध्याय 7	चन्द्र और सूर्य ग्रहण ग्रहों का अस्त होना।
अध्याय 8	स्थानीय समय-क्षेत्रीय समय-भारतीय मानक समय समय की अलग-अलग इकाइयां (यूनिट) सौर वर्ष-चन्द्र वर्ष।
अध्याय 9	पंचांग-तिथि, दिन, करण, योग और नक्षत्र।
अध्याय 10	उपग्रह, क्रांतिवृत पर खगोलीय बिन्दु, सूर्य और तारे।
अध्याय 11	ग्रहों का उदय और अस्त।

इस पुस्तक में ICAS के कोर्स के मुताविक सारा खगोल शास्त्र दिया गया है सिवाय, उपग्रहों का प्रश्न, होरा और मुहुर्त में प्रयोग के क्योंकि यह फलित ज्योतिष का भाग है।

वी.पी. जैन
305, टैकनॉलाजी अपार्टमैन्टस
24 इन्द्रप्रस्थ विस्तार, दिल्ली—110092

विषय-सूची

प्रस्तावना — पृष्ठ

अध्याय–1
सामान्य

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि	1
ज्योतिष के लाभ	2
भारतीय खगोल विज्ञान	5
आधुनिक पाश्चात्य खगोल–विज्ञान एवं पुरातन भारतीय खगोल-शास्त्र में मुख्य अंतर	13

अध्याय–2
परिभाषायें

गोल	17
आकाशीय गोल	17
बड़ा वृत्त	17
लघु वृत्त	18
समतल	18
ध्रुव	18
विषुवत् रेखा/भूमध्य रेखा	19
मध्यान्ह रेखा	20
भौगोलिक देशांतर/भौगोलिक अक्षांश	20
खगोलीय ध्रुव	20
नाड़ी वृत्त या विषुवत् वृत्त	21
क्रांति वृत्त	21
भचक्र	21
विक्षेप/शर	22
भोगांश	22
क्रांति	22
विषुवांश	22
क्रांति का चक्र	23
होरा-कोण	23
उन्नतांश	24
दिग्गांश	24

शिरो बिन्दु 24
अधो बिन्दु 24
खगोलीय याम्योत्तर वृत्त 24
उद्वृत्त/मुख्यउद् वृत्त 24
सूर्य की क्रांति में परिवर्तन 25
क्रांति वृत्त का विषुवत वृत्त से तिरक्षा होना 27

अध्याय–3

सौर-मंडल-सामान्य परिचय

28
तारे 28
ग्रह 28
उपग्रह 28
सौरमंडल 29
आन्तरिक एवं वाह्य ग्रह/ग्रहों की कक्षा 30
सूर्य 30
क्रांति वृत्त 31
पृथ्वी 31
पृथ्वी पर प्रेक्षक द्वारा दृष्ट आकाश की स्थितियां 32
ऋतुओं का होना 33
पृथ्वी संपात (उत्तरायण विन्दु) पर 35
वसंत संपात तथा शरत संपात पर पृथ्वी की स्थिति 35
चन्द्रमा 36
चन्द्रमा का चक्र 37

अध्याय–4

सौरमंडल-सामान्य परिचय

(अनुक्रम में) 38
वाह्य एवं अन्तर्युति 38
बुध 38
शुक्र 39
मंगल 39
वृहस्पति 40
शनि 40

हर्शल/यूरेनस (अरुण) 40
नेपचून (वरुण) 40
प्लूटो (यम) 40
धुमकेतु 41
हेली का धुमकेतु/एन्के का धुमकेतु/अनावधिक धुमकेतु 41
लघु ग्रह या ग्रहिका 41
केपलर के नियम 42
सप्ताह के दिनों की नामकरण की योजना 42
ग्रह वक्री क्यों होते हैं 44

अध्याय–5

संपात का अयन

संपात का अयन 48
अक्ष विचलन या विदोलन 49
चल एवं स्थिर भचक्र 50
राशि एवं नक्षत्रों का बंटवारा 51

अध्याय–6

चन्द्रमा की कलाएं

चंद्रमा की कलाएं 54
पात 56
राहु एवं केतु 56
साम्पात काल 57
साम्पातिक समय 57
संयुति-काल 59

अध्याय–7

ग्रहण

चन्द्र ग्रहण 62
सूर्य ग्रहण 64
तारा-प्रच्छागन 66
अस्तंगत 66

अध्याय–8

समय

मध्यमान सौर दिवस	67
स्थानीय मध्यमान समय	68
समय की ईकाइयां	69
प्रकाश-वर्ष	70
खगोलीय ईकाई	70
पार-सेक	71
नागर दिन	71
साम्पात दिवस	72
चान्द्र दिवस या तिथि	72
मास	72
सौरमास/चान्द्रमास	72
परिमास	72
पात-मास	73
वर्ष	73
सम्पात वर्ष	73
सायन वर्ष	73
कैलेण्डर वर्ष	73
परिवर्ष	73
चान्द्र सौर वर्ष	74

अध्याय–9

पंचांग

पंचांग के अंग	77
वार	77
तिथि	79
नक्षत्र	84
करण	86
योग	88

अध्याय–10

उपग्रह एवं तारे

उपग्रह एवं प्रकाशहीन ग्रह	90
(ज्योतिषीय बिन्दु)	91
तारे	92
धुमकेतु	95
मंदाकिनी	95
नीहारिका	96
भचक्र में तारों की स्थिति	97

अध्याय–11

उदय और अस्त

ग्रहों की दैनिक गति	98
भोगांशीय गति	99
वाह्य ग्रहों का अस्त होना	100
अन्तर ग्रहों का अस्त होना	101
ICAS की पिछली परीक्षाओं में दिए गए प्रश्नों के उत्तर	105
खगोल शास्त्र में प्रयुक्त तकनीकी शव्द	108
आत्ममूल्यांकन	124
ग्रहों के स्थिरांकों की सारणी	127

अध्याय 1

मंगलाचरण

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

ओंकारं विन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैवं ओंकाराय नमो नमः।।1।।
अविरलशब्दघनौघाः प्रक्षालितसकलभूतलमलकलंकाः।
मुनिभिरुपासिततीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितमान्।।2।।
अज्ञानतिमिराधानां ज्ञानांजनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
श्रीपरमगुरवे नमः परम्पराचार्य श्रीगुरवे नमः।

1.1 ज्योतिष का इतिहास

मानव स्वभाव कुछ ऐसा है कि वह देखता है, उसके बारे में जानना चाहता है। आकाश की ओर देखकर उसे उत्कण्ठा होती है, कि तारे क्या हैं? तारे क्यों चमकते हैं? तारे टूटकर क्यों गिरते हैं? सूर्य क्यों उदय और अस्त होता है? चन्द्रमा क्यों कभी छोटा, कभी बड़ा, कभी पूर्ण और कभी बिल्कुल नहीं दिखाई देता! इनका संसार पर क्या प्रभाव पड़ता है? इत्यादि। इस जिज्ञासा ने ही ज्योतिष-शास्त्र को जन्म दिया।

1.2 ज्योतिष का आरम्भ तब से ही हो गया जब से आदि मानव ने सूर्य और चंद्रमा को देखा। सूर्य के उदय होने से प्रकाश फैला और उष्मा मिली, अर्थात् दिन निकला। सूर्य के अस्त होने से प्रकाश लुप्त हुआ, अर्थात् रात्रि हो गई। इस प्रकार सूर्य के साथ दिन व रात्रि का सम्बन्ध स्थापित किया। उसने देखा चन्द्रमा कभी सारी रात्रि पूरा दिखाई देता है, कभी थोड़ा-सा दिखाई देता है और फिर ऐसा समय आता है तव चंद्रमा बिल्कुल नहीं दिखाई देता। जिस रात्रि को बिल्कुल दिखाई नहीं देता, उसे अमावस्या और जब पूर्ण दिखाई देता है उसे पूणिमा कहते हैं। मनुष्य ने एक अमावस्या से दूसरी अमावस्या तक या एक पूर्णिमा से दूसरी पूर्णिमा तक

के समय के बारे में एक मास की कल्पना की। इस प्रकार तारों को लगातार देखते रहने पर महसूस पड़ा कि कुछ तारे ऐसे भी हैं जो केवल पूर्व से पश्चिम को ही नहीं बल्कि वह स्थिर तारों की अपेक्षा चलते दिखाई देते हैं, उन्हें मनुष्य ने ग्रह कहा। ज्योतिष सब विज्ञानों से पहले सीखा गया। इसके कारण ही समय का ज्ञान हो सका और गणित-शास्त्र के अनेक अंगों की उत्पत्ति हुई। सूर्य, चन्द्र और नक्षत्रों के उदायस्त, सर्दी, गर्मी वर्षा इत्यादि के क्रम से मनुष्य ने जाना कि संसार परिवर्तनशील है और इसके नियम भी हैं। यदि इसे सब विज्ञानों का पिता कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

1.3 ज्योतिष के लाभ

अगर सूक्ष्मता से देखा जावे तब लगेगा कि ज्योतिष का मनुष्य जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है और इसके अध्ययन से मनुष्य जाति को अनेक लाभ होते हैं। यथा–

1. सूर्योदय से दिन का व सूर्यास्त से रात्रि का सम्बन्ध होने से दिवारात्रि मानना।
2. समय का ज्ञान खगोल शास्त्र द्वारा ही होता है। समय की इकाईयां का ज्ञान भी इसी से हुआ। समय व दूरी की छोटी बड़ी इकाईयां इसके कारण ही बन पाईं।
3. सूर्य की वार्षिक गति से ऋतुओं का ज्ञान भी इससे ही होता है।
4. पुराने समय में नक्षत्रों की स्थिति देचाकर किसान बुवाई के समय का अनुमान लगाया करते थे।
5. नदियों में किस मौसम में बाढ़ आवेगी और कब सूखेंगी इसका अनुमान भी इससे ही होता है।
6. ज्योतिपीय वेधशालाओं में कार्य करने वालों को ज्योतिष के लिये सूक्ष्मरूप से माप और वेध करने से हाथ की सफाई और आंखों की रोशनी बढ़ती है। इन मापों व वेधों पर तर्क-वितर्क करने से सिद्धांत निकालने से बुद्धि प्रखर होती है।
7. इसके अध्ययन से मनुष्य को ज्ञात होता है कि वह इस ब्रह्मांड में कितना तुच्छ है। इस ब्रह्मांड में बहुत सारी आकाशगंगाएं और प्रत्येक आकाशगंगा में असंख्य तारे हैं। हमारा सूर्य एक छोटा सा तारा है। हमारी पृथ्वी सौरमंडल में बहुत छोटी है। इस धरा पर कोई कितना भी शक्तिशाली, वैभवशाली आदि हो वह ब्रह्मांड की तुलना में बालू के कण के समान भी नहीं है। इस कारण मनुष्य इसके अध्ययन से आध्यात्म की ओर जाता है।

8. इसके अध्ययन से मानव ज्ञान पाता है कि संसार परिवर्तनशील है। सूर्य प्रातः उदय होता है, मध्यान्ह में सबसे अधिक ऊँचाई पर होता है और पूरी गर्मी देता है मगर संध्या की बेला में नीचे आकर छुप जाता है। यह प्राणी को बोध कराता है कि मनुष्य जन्म लेता है, जवान होता है और बूढ़ा होकर मृत्यु को प्राप्त होता है। ज्योतिष धर्म की आधारशिला है।
9. ज्योतिष के प्रश्नों को हल करने के लिये गणित-शास्त्र के अनेक अंगों की उत्पत्ति हुई और आजकल इसके कारण गणित व दूसरे वैज्ञानिक विषयों की उन्नति हो रही है।
10. बहुत बार गणित शास्त्र के नियमों की सत्यता की परख ज्योतिष के द्वारा ही हुई। जैसे आइन्सटाईन के प्रसिद्ध सापेक्षवाद का समर्थन खगोल-शास्त्र द्वारा ही हुआ।
11. ज्योतिष के ज्ञान के बगैर समुद्र की लम्बी यात्राएं सफल नहीं हो सकती। खगोल शास्त्र से ही समुद्र में दिशाओं का ज्ञान होता है।
12. सूर्य ग्रहण व चन्द्र ग्रहण आदि के समय ज्योतिषीय गणनाओं से ज्ञात होता हैं।

इस प्रकार खगोल शास्त्र के अनेकों लाभ हैं।

भास्कराचार्य ने लिखा है–

रहस्यं परमं पुन्यं जिज्ञासोर्ज्ञान मुत्तमम्।
वेदाङ्गमग्रयमखिलं ज्योतिषा गति कारणम्।।

व्याकरण वेद का मुख है। ज्योतिष आंख, निरुक्त कान, कल्प हाथ, शिक्षा नासिका और छंद पांव हैं। जिस प्रकार अंगों में आंख श्रेष्ठ है, उसी प्रकार वेदाङ्गों में ज्योतिष-शास्त्र श्रेष्ठ है।

1.4 प्राचीन काल में ज्योतिष के तीन भाग माने जाते थे–सिद्धांत, होरा और संहिता–बाद में पांच भाग हो गए–सिद्धांत या गणित, होरा, संहिता, प्रश्न और शकुन।

1. सिद्धांत या गणित

यह ज्योतिष का वह भाग है जिससे समय की गणना, आकाशीय पिंडों की दूरी, उनका द्रव्यमान, उनकी गति आदि का ज्ञान प्राप्त होता है। यह शुद्ध वैज्ञानिक है। यह बहुत से विश्वविद्यालयों में गणित-शास्त्र आदि के भाग के रूप में सम्मिलित

हैं। इसमें यन्त्रों के निर्माण व उनसे ग्रहों आदि का वेध करना और आकाशीय पिंडों के बारे में ज्ञान प्राप्त करना आता है। आधुनिक गणित, भौतिक-शास्त्र आदि व वेधशालाओं के निरीक्षण से यह बहुत आगे चला गया है। अब इसमें पहले जैसी स्थूलता नहीं है। काफी समय से भारतीय ज्योतिष में वेध के माध्यम से ग्रहों की गणनाओं के जो सूत्र हैं, उनमें बीज संस्कार नहीं किये गए हैं। इस कारण ग्रहों के भोगांश आदि में वेध और सूत्रों द्वारा ज्ञात किये गए मानों में अंतर आ जाता है।

2. होरा या जातक-शास्त्र

होरा शब्द अहोरात्रि से बना है। अहोरात्रि के प्रथम अक्षर अ और अंतिम अक्षर त्रि को हटाने से होरा शब्द बना है। इस भाग में ग्रहों की स्थिति के अनुसार जातक के भविष्यफल का अनुमान किया जाता है। इस भाग को फलित ज्योतिष का भाग भी कह सकते हैं। होरा-शास्त्र की अनेक स्वतंत्र रचनाएं हैं।

3. संहिता

इसमें जीवनोपयोगी सभी वस्तुओं के फलाफल प्रतिपादन को सम्मिलित किया है। मुहूर्त, वर्षा, ऋतुओं, भूचाल, किसी देश या समूह के लिये भविष्यवाणियां, तेजी-मंदी, आयुर्वेद की चर्चाएं आदि शामिल हैं।

4. प्रश्न-शास्त्र

इस भाग में प्रश्न-कर्त्ता की चेष्टा, हाव-भाव, प्रश्न समय की कुण्डली आदि द्वारा फलाफल निरुपण का ज्ञान आता है।

5. शकुन या निमित-शास्त्र

इस शाखा में किसी कार्य अथवा प्रश्न आदि के समय के शकुन देखकर फलाफल की व्याख्या की जाती है।

1.5 भारतीय ज्योतिष-शास्त्र

अब हम भारत में ज्योतिष-शास्त्र के इतिहास का संक्षिप्त वर्णन करेंगे। भारतीय ही ज्योतिष-शास्त्र के आदि आविष्कार करने वाले हैं। यहां के ऋषियों व मुनियों ने योगाभ्यास द्वारा अपने शरीर के अन्दर ब्रह्मांड का अनुभव किया (यत् पिंडे तत् ब्रह्मांडे)। ऋग्वेद में चक्र शब्द आया है जो राशिचक्र के लिये प्रयोग किया गया है। ऋग्वेद आदि से ज्ञात होता है कि भारतीयों को खगोल-शास्त्र व

ज्योतिष-शास्त्र का कम से कम 28,000 वर्षों से ज्ञान है। यह एक सर्वमान्य सत्य है कि भारतीयों ने ही 0 का अंक संसार को दिया जो कि ज्योतिष की गणनाओं के लिये अत्यावश्यक है। इसके बगैर खगोल शास्त्र आदि की उन्नति की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

1.6 भारतीय खगोल-शास्त्र के स्रोत

भारतीय खगोलशास्त्र सम्बन्धी महत्वपूर्ण सिद्धान्त विभिन्न ऋषियों के दिव्य ज्ञान पर आधारित माना गया है। कुछ प्रमुख सिद्धान्त इस प्रकार हैं–

1. सूर्य सिद्धान्त	10. मरीचि सिद्धान्त
2. पितामह सिद्धान्त	11. मनु सिद्धान्त
3. व्यास सिद्धान्त	12. अंगिरा सिद्धान्त
4. वशिष्ठ सिद्धान्त	13. लोमश सिद्धान्त
5. अत्रि सिद्धान्त	14. पौलिश सिद्धान्त
6. पराशर सिद्धान्त	15. च्यवन सिद्धान्त
7. कश्यप सिद्धान्त	16. यवन सिद्धान्त
8. नारद सिद्धान्त	17. भृगु सिद्धान्त
9. गर्ग सिद्धान्त	18. शौनक सिद्धान्त

आधुनिक संस्कृत–ज्ञान कोप 'शब्द-कल्पद्रुम' में नौ शोधग्रंथों का वर्णन है जो सिद्धान्त के नाम से जाना जाना है। ये हैं–ब्रह्म, सूर्य, सोम, वृहस्पति, गर्ग, नारद, पाराशर, पुलत्स्य, वशिष्ठ सिद्धान्त। इनमें उपर्युक्त सिद्धान्तों की सूची के क्रमांक 1, 4, 6, 8, 9 की पुनरावृत्ति है। इनके स्त्रोत, काल एवं वास्तविक लेखक के बारे में काफी अनुसंधान की आवश्यकता है। तथापि अपर्याप्त इतिहास के परिप्रेक्ष्य में तथा जब तक अधिक जानकारी उपलब्ध होती है, हम इन सिद्धान्तों को चार श्रेणियों में बांट सकते हैं। प्रथम श्रेणी में उन सिद्धान्तों को रख सकते हैं जिनके लेखक के बारे में कुछ ठीक से ज्ञात नहीं है, जो अति प्राचीन है तथा जो वास्तव में रहस्य को उजागर करने वाले सिद्धान्त प्रतीत होते हैं। इस श्रेणी में ब्रह्म, सूर्य, सोम, वृहस्पति एवं नारद सिद्धान्तों को रख सकते हैं।

(ख) ब्रह्म सिद्धान्त–यह विष्णुधर्मात्तारा पुराण का एक अंग माना जाता है, जो स्वयं लुप्तप्राय है। ब्रह्मा ने नारद को इसका रहस्य बताया था, ऐसा मानते हैं।

(ग) सोम (चंद्र) सिद्धान्त–यह विष्णुधर्मात्तारा पुराण का एक अंग माना जाता है। इसकी एक हस्तलिपि बर्लिन के पुस्तकालय में है। (Weber Catalogue No. 840)

(घ) बृहस्पति सिद्धान्त–देवताओं के गुरु, बृहस्पति ने इसे उद्घाटित किया है, ऐसा मानते हैं। इसकी प्रति कहीं उपलब्ध नहीं है, परन्तु खगोल शास्त्र में कई भारतीय टीकाओं/उल्लेखों में इस सिद्धान्त का अधिकाधिक रूप से उदाहरण दिया गया है।

(ङ) नारद सिद्धान्त–खगोलशास्त्र के कुछ टीकाओं/उल्लेख में इस सिद्धान्त के बारे में उदारहण दिया गया है। अन्यत्र यह उपलब्ध नहीं है। तथापि बर्लिन के पुस्तकालय में (Weber Catalogue No. 862) नारद संहिता नामक ज्योतिषशास्त्र का एक ग्रन्थ उपलब्ध था।

दूसरी श्रेणी में हम गर्ग, पराशर, व्यास, पुलत्स्य एवं वशिष्ठ जैसे पुरातन एवं सुविख्यात ऋषियों के कार्यों को रख सकते हैं। इनमें से अन्तिम नाम (वशिष्ठ) उन सप्तऋषि (जिसके आधार पर एक नक्षत्र का नामकरण हुआ है) में से एक है।

(क) गर्ग सिद्धान्त–उपलब्ध नहीं है। केवल खगोलशास्त्र में कुछ पुस्तकों में इसका उल्लेख मिलता है।

(ख) व्यास सिद्धान्त–उपलब्ध नहीं है।

(ग) पराशर सिद्धान्त–'आर्य सिद्धान्त' के द्वितीय अध्याय में इस सिद्धान्त का एक खण्ड मिलता है। तथापि 'बृहत पराशर' ! (ज्योतिष की एक परम्परा का सन्दर्भ ग्रंथ) नामक ग्रन्थ मैकेंजी संग्रह (विल्सन कैटेलाग (i) 120) में उपलब्ध था।

(घ) पुलत्स्य–उपलब्ध नहीं है। इसे कभी-कभी गलती से पौलिश सिद्धान्त समझ लिया जाता है जो कि आर्यभट्ट के समय का एक ग्रीक खगोलशास्त्री था।

तीसरी श्रेणी में हम बाद के इन ग्रंथकारों के द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों को रख सकते हैं--आर्यभट्ट, वाराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त, रोमक सिद्धान्त।

(क) आर्य सिद्धान्त–आर्यभट्ट 1 (499 A.D.) की प्रमुख प्रस्तुति थी–'आर्य अष्टक-शतः' (800 श्लोक) तथा 'दश गीतिका' (10 सर्ग) बर्लिन लाईब्रेरी में 'दश-गीतिका' पर एक टीका (वेबर सं 834) की प्रति उपलब्ध थी। वेन्टली ने दो शोध ग्रन्थ लिखे थे जिनके नाम थे–'आर्य सिद्धान्त' तथा लघु आर्य सिद्धान्त।

(ख) वाराह सिद्धान्त–वाराह मिहिर (550 A.D.) ने 'पंच-सिद्धान्तिका' (5 खगोलीय सिद्धान्तों का संकलन) नामक महान खगोलीय ग्रन्थ लिखा था जो ब्रह्म सूर्य पौलिश, वशिष्ठ एवं रोमक सिद्धान्तों पर आधारित था। इस सिद्धान्त की पुस्तक उपलब्ध नहीं है, परन्तु वाराहमिहिर के अन्य ज्योतिषशास्त्र की पुस्तकें उपलब्ध हैं।

(ग) ब्रह्म सिद्धान्त–ब्रह्मगुप्त (628 A.D.) द्वारा प्रतिपादित। इसका पूर्ण नाम 'ब्रह्म-स्फुट सिद्धान्त है। कोलब्रुक एवं बेन्टले के पास इसकी प्रति उपलब्ध थी। भास्कर (1150 A.D.) द्वारा रचित "सिद्धान्त शिरोमणी" इसी पर आधारित थी। ब्रह्मगुप्त की अन्य महत्वपूर्ण रचना 'खण्डकाध्याका' थी।

(घ) रोमक सिद्धान्त–कोलब्रुक ने इसका श्रीसेना नामक लेखक से सम्वन्ध बताया है तथा यह आंशिक रूप से वशिष्ठ सिद्धान्त पर आधारित है। वाराह मिहिर के पंच सिद्धान्तिका में भी इसका उल्लेख आया है।

1. सूर्य सिद्धांत

सूर्य सिद्धांत प्राचीन सिद्धांतों में से एक है। सूर्य सिद्धांत के पहले अध्याय के श्लोक 2 से 9 तक में बताया गया है कि सतयुग के अन्त में मय नामक असुर ने ज्योतिप सीखने के लिए सूर्य भगवान की तपस्या की। उसकी तपस्या से संतुष्ट और प्रसन्न होकर सूर्य भगवान ने कहा–मेरा तेज कोई नहीं सह सकता, इसलिए यह पुरुष, जो मेरा अंश है, तुझे भली भांति उपदेश देगा। सूर्यांश पुरुष ने जिस शास्त्र का उपदेश दिया वही यह सूर्य सिद्धांत है। काल परिवर्तन से कुछ भेद पड़ गया है। यह ग्रन्थ ज्योतिष शास्त्र की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यह सब ग्रन्थों से प्राचीन है। इस ग्रन्थ में ग्रहों के भोगांश, चन्द्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण, ग्रहों के उदयास्त, पातों का ज्ञान आदि उपलब्ध है।

2. पितामह सिद्धांत

ब्रह्मगुप्त और भस्कराचार्य ने पितामह सिद्धांत को ही आधार माना है। इसमें सूर्य और चंद्रमा के अतिरिक्त दूसरे ग्रहों का गणित नहीं है।

3. वशिष्ठ सिद्धांत

इसमें भी सूर्य और चंद्रमा के अतिरिक्त दूसरे ग्रहों का गणित नहीं है। यह पितामह सिद्धांत का ही संशोधित रूप है।

4. रोमक सिद्धांत

ब्रह्मगुप्त, लाट, वशिष्ठ, विजयनन्दी और आर्यभट्ट के आधर पर कुछ विद्वान इसे श्रीषेण द्वारा लिखा गया बतलाते हैं।

5. ज्योतिष्करण्डक

यह एक प्राचीन मौलिक ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ 300-400 ई. पू. लिखा गया प्रतीत होता है; इसमें अश्विनी और स्वाति नक्षत्र विषुव के लग्न बतलाए गए हैं।

6. सूर्य प्रज्ञप्ति

यह वेदांग ज्योतिष के समान प्राचीन ज्योतिष का मौलिक जैन ग्रन्थ है। यह प्राकृत भाषा में लिखा गया है। मलयागिरि सूरि ने इसकी संस्कृत टीका लिखी थी। इसमें सूर्य की गति, भ्रमण, दिन, मास, पक्ष आदि बताए गए हैं। इसमें सूर्य परिवार और भ्रमण-वृत्तों के सम्बन्ध में बताया गया है।

7. चंद्र प्रज्ञप्ति

यह भी एक जैन ग्रन्थ है और प्राकृत भाषा में लिखा हुआ है। यह सूर्य-प्रज्ञप्ति की अपेक्षा परिष्कृत है। इसमें सूर्य और चंद्रमा की गति निश्चित की है। चंद्र प्रज्ञिप्ति में छाया से दिनमान का समय भी निकाला है।

1.7 कुछ महत्त्वपूर्ण ज्योतिषियों का परिचय

1. **महर्षि पाराशर**—नारद और वसिष्ठ के उपरान्त फलित ज्योतिष में महर्षि-पद पाने वाले पराशर हुए हैं। इन्होंने बृहत्पाराशर होरा-शास्त्र की रचना की। यह ग्रन्थ फलित-ज्योतिष का प्रामाणिक ग्रन्थ है।

2. **ऋषिपुत्र**—यह जैन धर्मानुयायी ज्योतिष के प्रकाण्ड विद्वान थे। Catalogus Catalogosum के अनुसार यह आचार्य गर्ग मुनि के पुत्र थे। इन आचार्य के उद्धरण बृहत्संहिता की भट्टोत्पली टीका में भी मिलते हैं। इन्होंने एक संहिता की रचना की और शकुन शास्त्र व निमित्त शास्त्र से फलाफल का निरुपण किया।

3. **आर्य भट्ट (प्रथम)**—इनका जन्म 476 ई. में हुआ। इन्होंने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'आर्यभटीय' लिखा। इसमें सूर्य और तारों के स्थिर होने तथा पृथ्वी के घूमने के कारण दिन और रात होने का वर्णन है। इन्होंने खगोल शास्त्र और गणितीय शास्त्र के लिये बहुत अधिक योगदान किया।

4. **कालकाचार्य**–यह जैन परम्परा में निमित्त और ज्योतिष के प्रकाण्ड विद्वान थे। इनका तीसरी शताब्दी में गौरवपूर्ण स्थान था। इन्होंने निमित्त शास्त्र और संहिता के ग्रन्थों की भी रचना की। वराहमिहिर ने वृहज्जातक में कालक-संहिता का उल्लेख किया है।

5. **आर्य भट्ट (द्वितीय)**–इनका सिद्धांत 'महाआर्यभट्टीय या महाआर्यसिद्धांत' के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें वीज गणित, ग्रह भाग आदि सम्मिलित हैं। इनका यह ग्रन्थ ज्योतिष के लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और यह सिद्धांत इनके पश्चात् अनेक ज्योतिषियों ने अपनाया।

6. **लल्लाचार्य** के पिता का नाम भट्टत्रिविक्रम था। इनका जन्म शक सं. 421 से हुआ। लल्लाचार्य गणित, जातक और संहित इन तीनों में पूर्ण प्रवीण थे। यह आर्यभट्ट के सिद्धांतों को लेकर चले हैं। इनकी रचना शिष्यवृद्धि में प्रधान रूप से गणिताध्याय और गोलाध्याय हैं। इनका रत्नकोष नामक संहिता ग्रंथ भी मिलता है।

7. **वराहमिहिर** का जन्म 505 ई. में हुआ। इन्होंने अपने पिता आदित्यदास से ज्योतिष की शिक्षा प्राप्त की और उज्जैन में जाकर रहने लगे और वृहज्जातक की रचना की। इनकी अन्य रचनाएं वृहत्संहिता, लघुजातक, विवाह-पटल, योगयात्रा और समास-संहिता हैं। इनकी संहिता अद्वितीय है। फलित ज्योतिप के भी यह बहुत बड़े विद्वान हुए हैं।

8. **कल्याणवर्मा** का जन्म समय सन् 578 ई. माना जाता है। इन्होंने 'सारावली' की रचना की जो जातक शास्त्र के लिये एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है।

9. **ब्रह्मगुप्त** का जन्म 'भिलनालका' में 598 ई. में हुआ था। ब्रह्मगुप्त ज्योतिष के वड़े विद्वान थे। इन्होंने 'ब्रह्मस्फुट सिद्धांत' और 'खण्डकाद्यक' ग्रन्थों की रचना की। इन्होंने वीजगणित (Algebra) के कई नवीन नियमों का आविष्कार किया।

10. **भास्कराचार्य** का जन्म सन् 1114 ई. में विज्जडविड नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम महेश्वर था। वह इनके गुरु भी थे। इन्होंने लीलावती, वीजगणित, सिद्धांतशिरोमणि, करणकुतूहल और सर्वतोभद्र ग्रन्थों की रचना की थी। वराहमिहिर और ब्रह्मगुप्त के बाद इनके समान प्रभावशाली और सर्वगुणसम्पन्न दूसरा ज्योतिर्विद नहीं हुआ। भास्कराचार्य और महेन्द्रसूरि ने यन्त्रों के निर्माण की विधि और यन्त्रों द्वारा ग्रह वेध प्रणाली का निरुपण किया।

11. **गणेश** का जन्म 1517 ई. में हुआ माना जाता है। इनकी माता का नाम लक्ष्मी और पिता का नाम केशव था। इन्होंने 13 वर्ष की उम्र में ही ग्रह-लाघव जैसे ग्रन्थ की रचना की थी। इस ग्रन्थ में ज्या-चाप के बिना अंकों द्वारा ही सारा ग्रह-गणित किया जाता है। इनके द्वारा रचित अन्य ग्रन्थों में लघुतिथिचिन्तामणि, वृहात्तिथिचिन्तामणि आदि कई ग्रन्थ हैं।

12. **ढुण्डिराज** का जन्म 1541 ई. में हुआ था। यह पार्थपुरा के रहने वाले नृसिंह दैवज्ञ के पुत्र और ज्ञानराज के शिष्य थे। इन्होंने फलित ज्योतिष के ग्रन्थ जातकाभरणम की रचना की थी।

    इस ग्रन्थ से जन्मपत्रिका के फलाफल का ज्ञान भली प्रकार प्राप्त किया जा सकता है।

13. रंगनाथ का जन्म काशी में 1575 ई. में हुआ था। इनके पिता का नाम वल्लाल और माता का नाम गोजि था। इन्होंने सूर्य सिद्धान्त की टीका लिखी थी और इस ग्रन्थ को अधिक परिवर्तन से बचाया था।

    इन ज्योतिर्विदों के अतिरिक्त 'मुंजाल, महावीराचार्य, भट्टोत्पल, श्रीपति, श्रीधर आदि भी प्रसिद्ध ज्योतिषी हुए हैं, जिन्हें भारतीय ज्योतिष में सम्मानजनक स्थान प्राप्त हैं।

1.8 पाश्चात्य देशों के खगोल विज्ञान का इतिहास

खगोलीय खोजों ने विचारों में बहुत बड़ी क्रांति लाई है और बौद्धिक स्वतंत्रता के लिये बहुत बड़ा काम किया है। किसी समय यह मान्यता थी कि पृथ्वी ब्रह्मांड के केन्द्र में स्थिर है। अरिस्टोटल (Aristotle) पद्धति में सूर्य, चन्द्र और ग्रह, पृथ्वी की परिक्रमा करते हैं। अब कुछ महत्त्वपूर्ण खगोलविदों और उनकी खोजों का वर्णन करते हैं।

1. हिप्पारकस (Hippar Chus) (190 से 120 ई. पू.) ने तारों की एक तालिका बनाई। उसकी कृतियाँ उपलब्ध नहीं हैं। उनके कार्य टालसी (Plotemy) (190 से 120 ई. पू.) ने आमतौर पर उल्लेख किया ओर वह उसके प्रशंसक थे। टालमी ने अधिचक्रीय या भूचक्रीय (Epicycle) सिद्धांत का प्रतिपादन किया जिसमें पृथ्वी केन्द्र में है और ग्रह पृथ्वी के चारों ओर बड़े चक्र में छोटे चक्र लगाते हुए धूम रहे हैं। यह सिद्धांत लगभग 1400 वर्षों तक काम में आता रहा। यूरोप में जब बौद्धिक-क्रांति (Intellectual Renaissance) आई और ग्रहों का सूर्य के चारों ओर घूमने का सिद्धांत आया तब तक टालमी का यह सिद्धांत ही मान्य रहा।

2. निकोलस कापरनिक्स (Nicholad Copernicus) का जन्म टोरन (पोलैंड) में 1473 ई. में हुआ। जब यह दस वर्ष के थे तब इनके पिता का देहान्त हो गया। इनके मामा ने इन्हें गोद ले लिया। कापरनिक्स ने दवाइयों और चर्च के कानून का अध्ययन किया, मगर यह खगोल शास्त्र और गणित के दीवाने थे, जिसके लिये यह जीवन भर सारा अतिरिक्त समय लगाते रहे। कापरनिक्स ने सूर्य को ब्रह्मांड का केन्द्र माना और कहा कि सारे ग्रह पृथ्वी सहित, सूर्य की परिक्रमा करते हैं। उसका विश्वास था कि ब्रह्मांड और पृथ्वी गोलाकार (Spherical) हैं। इनकी पुस्तक 'आकाशीय गोलों के घूमने पर' (On the Revelutions of the Heavenly spheres) उस दिन छपी जब इनका देहान्त (1543) हुआ।

3. ताईकोब्राहे (Tycho Brahe) (1546-1601) का जन्म डेन्मार्क में 1546 में हुआ। इनका झुकाव खगोल शास्त्र की ओर छोटी उम्र में ही हो गया और इन्होंने बहुत-सी रात्रियां बजाय कानून की पुस्तकों के आकाश के निरीक्षण में व्यतीत कीं। यह झुकाव इनके ज्योतिष में विश्वास के कारण हुआ। यह देखकर डेन्मार्क के राजा ने इन्हें एक छोटा द्वीप दे दिया। जिस पर इन्होंने वेधशाला बनाई। इन्होंने तारों कि स्थितियां नापने के लिये कई यन्त्रों की रूपरेखा बनाई और कई यन्त्र बनाए जो कि पहले वाले यन्त्रों से बहुत अधिक अच्छे थे। 1599 में यह प्राग (Prague), वहाँ के राजा के संरक्षण में चले गए।

4. गैलीलियो (1564-1642) का जन्म पीसा में 1564 में हुआ। उन्होंने 1581 में पीसा यूनिवर्सिटी में औषधिशास्त्र में प्रवेश लिया। उन्होंने शीघ्र ही गणित और भौतिक शास्त्र में अपनी चातुरी दिखलाई और दिखाया कि पैन्डुलम के एक बार डोलने की अवधि उसकी लम्बाई पर निर्भर करती है। **गैलीलियो ने सन् 1609 तक एक दूरदर्शी (Telescope) बनाया जिससे कोई वस्तु 30 गुना समीप दिखाई देती थी।** जब इससे आकाश को देखा तब आश्चर्यजनक खोजें कीं। उन्होंने गुरु ग्रह के चार चन्द्रमाओं की खोज की। यह उपग्रह गुरु की परिक्रमा उसी प्रकार करते हैं जिस प्रकार गुरु सूर्य की करता है। गैलीलियो ने 1632 में एक पुस्तक **(Dialogue on the Two Chief World Systems)** निकाली जिसमें कापरनिक्स के तर्कों को माना था। इस पुस्तक की बिक्री पर चर्च ने प्रतिबंध लगा दिया। और शेष पुस्तकें जब्त कर लीं। उन्हें रोम बुलाया गया। वहाँ उन्होंने दबाव में आकर अपने विचारों का खंडन किया मगर कमरे से बाहर आते हुए वह बड़बड़ा रहे थे कि 'लेकिन पृथ्वी अवश्य घूमती है।' शेष सारा जीवन वह अपने गांव आरसटरी (Arcetri) में ग्रह कारावास (House Arrest) में रहे। 'Dialogue Concerning Two New Sciences' उनकी अन्तिम और सर्वोत्तम कृति थी।

5. जोहन्स केपलर Johannes Kepler (1571-1630) का जन्म वरटैमबर्ग (Wirtemberg) में 1571 में हुआ। वह टुबिनगन विश्वविद्यालय (University of Tubingen) में पढ़े और कापरनिक्स के ब्रह्मांडीय सिद्धांतों के मानने वाले हो गए। 1594 में वह स्टीरया (Styria) जो अब आस्ट्रिया का भाग है, गये और उन्होंने गणित पढ़ाया। कैपलर भी ताईको की तरह ज्योतिष पर विश्वास करते थे। स्टीरया कैथोलिक था और कैपलर प्रोटस्टैंट पर वहां धार्मिक सहिष्णुता नहीं थी। सन् 1600 में वह प्राग आ गए। यहां उन्होंने और ताइको ने साथ काम किया। सन् 1601 में ताइको के देहान्त के पश्चात् भी उन्होंने ताइको के निरीक्षणों पर कार्य किया। सन् 1609 में उनकी पुस्तक 'मंगल की गति के बारे में' (Commentaries on the Motion of Mars) प्रकाशित हुई और उसमें कैपलर के पहले दो नियम बताए गए। इसके एक दशाब्दि पश्चात् तीसरा नियम भी मालूम हुआ।

6. सर आइज़क न्यूटन (Sir Issac Newton 1642–1727) ने प्रसिद्ध गतियों के नियमों का प्रतिपादन किया। न्यूटन का सर्वाधिक अंशदान उनके गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत व नियम हैं। इन्होंने 'परावर्तनीय दूरदर्शी' (Reflector Type Telescope) बनाया जिसे 'न्यूटोनियन दूरदर्शी' कहा गया।

7. एडमन्ड हेली (Edmund Halley 1656–1742) ने न्यूटन के सिद्धांतों का कई ऐतिहासिक धूमकेतुओं (जिनकी गणना सावधानीपूर्वक रिकार्ड की गई थी) के बारे में प्रयोग किया और पाया कि जो धूमकेतु सन् 1531, 1607 और 1682 में देखे गए थे, उन धूमकेतुओं ने लगभग एक-सा ही पथ अपनाया था और परिणाम निकाला कि वह एक ही धूमकेतु था। उसके पुनः 1758 में दिखाई देने की भविष्यवाणी की। यह कथन सत्य सिद्ध हुआ और वह धूमकेतु 1759 में दिखाई दिया। इस धूमकेतु का नाम 'हेली धूमकेतु' दिया।

इसके पश्चात् ग्रह, तारों के वेध करने की नई-नई तकनीकें आती गईं। आधुनिक उपकरण, शक्तिशाली दूरदर्शियां, स्पैक्ट्रोस्कोपी तथा फोटोग्राफी के अत्याधिक विकास के कारण प्रायोगिक एवं वेध के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आए।

8. विलियम हर्षल एक संगीतज्ञ और शौकिया खगोलज्ञ थे। हर्षल ने दूरदर्शी और विशेष प्रकार से परावर्ती दूरदर्शी (Reflecting Telescope जिसमें दर्पण का प्रयोग किया जाता है) का ज्ञान प्राप्त किया। वह बहुत अच्छी गुणवत्ता की दूरदर्शी बनाते थे। 13 मार्च, 1781 को इन्होंने शनि से भी दूर के एक ग्रह की खोज की, उसे यूरेनस या हर्षल कहते हैं सन् 1787 में इन्होंने यूरेनस के दो उपग्रहों

(टाईटनिया और ओवेरोन) का पता लगाया। इसके पश्चात् शनि के दो उपग्रहों को भी ज्ञात किया।

एक महायुग 4,320,000 वर्षों का होता है।

4,320,000 वर्षों में संपात बिन्दु का (पृथ्वी के अक्ष के झुकाव में खिसकाव के कारण) 600 बार दोलन (oscillation) करता है। अर्थात् एक दोलन पूर्ण होने से 7200 वर्ष लग जाते हैं। कलियुग के प्रारंभ में अयनांश शून्य था। सन् 499 ई. (आर्यभट्ट I का समय) में यह पुनः शून्य था। कलियुग का प्रारंभ (3102 ई. पू) से 3600 वर्ष बाद अयनांश पुनः शून्य हुआ। संपात बिन्दु प्रति सौर औसत वर्ष 54" चाप से पीछे खिसकता है।

सृष्टि के आरंभ से 499 ई. तक पूर्ण हुए वर्षों की संख्या की गणना इस प्रकार की गई है–

सृष्टि के प्रारंभ से पिछले सत्ययुग (कृत युग) के अन्त तक गत वर्षों की संख्या	1953,720,000
त्रेता एवं द्वापर युगों के वर्षों की संख्या	2,160000
499 ई. तक कलियुग के गत वर्षों की संख्या	3,600
जोड	1955,883,600
	(7200)
संपात-बिन्दु का दोलन	271,650½

दोलन के मध्य-बिन्दु पर अयनांश शून्य होता है। 499 A.D. में नक्षत्र मण्डल पूर्व की ओर दोलन प्रारंभ करने वाला था। अतः सूर्य सिद्धान्त आर्यभट्ट-I से 2,163,600 वर्ष पूर्व प्रकट हुआ सिद्ध होता है।

आधुनिक पाश्चात्य खगोल-विज्ञान एवं पुरातन भारतीय खगोलशास्त्र में मुख्य अंतर

1. पाश्चात्य खगोलीय गणनाएं सूर्य केन्द्रित हैं। सूर्य को केन्द्र में स्थिर माना गया है तथा सूर्यमंडल में बाकी सभी ग्रह इसमें चारों और दीर्घवृत्ताकार पथ पर अलग-अलग समयों में एक चक्कर पूरा करता है। अब यह माना जाता है कि सूर्य भी सौरमंडल के ग्रहों के साथ नीहारिका में भ्रमण कर रहा है तथा नीहारिका भी आकाश में भ्रमण कर रही है तथा समस्त ब्रह्माण्ड विस्तार कर रहा है। जबकि भारतीय शास्त्रों के अनुसार गणनाएं भूकेन्द्रीय है जैसा द्रष्टा देखता है के अनुसार

होती है। इस प्रकार सभी ग्रहों की गतियों-(चंद्रमा के पात (Nodes राहु) आदि सहित)-एवं स्थितियों का भूकेन्द्राय अध्ययन किया जाता है।

2. भारतीय विधि में ग्र... एवं अन्य महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं जैसे–शीघ्रोच्च, मन्दोच्च, संपात, पात, युति आदि की सृष्टि के प्रारंभ होने से अन्त तक, कुल परिभ्रमण की संख्याओं का अनुमान किया गया है जबकि पाश्चात्य मत में ऐसा कुछ नहीं है। हालांकि एक सिद्धान्त के अनुसार 200 करोड़ वर्ष पहले एक महा-विस्फोट (Big bang) के साथ ब्रह्माण्ड का प्रारंभ हुआ है। दोनों मतों में किस प्रकार संगति बिठाई जा सकती है, यह एक अनुसंधान का विषय है।

3. भारतीय मत में नक्षत्रमंडल में दूरियों की गणना, एक स्थिर बिन्दु से करते हैं जो मेष राशि (अश्विनी नक्षत्र) का प्रारंभिक बिन्दु है। रेवती नक्षत्र के अन्त में रेवती नामक तारे से अश्विनी नक्षत्र प्रारंभ होता है। चित्रपक्षीय पद्धति, यह शून्य बिन्दु, चित्रा नामक तारे से ठीक 180° सामने नक्षत्र मंडल में स्थित माना गया है। पाश्चात्य मत में यह शून्य बिन्दु स्थिर नहीं वरन् चलायमान है। वसंत-संपात के समय सूर्य नक्षत्र मंडल में जहां होता है उसे मेष का प्रथम बिन्दु मान लेते हैं। पाश्चात्य मत से मेष का प्रथम विन्दु आज वास्तव में भारतीय मत से मीन राशि के 6¼° पर है। स्थिर एवं चलायमान मेष के प्रथम बिन्दु के बीच की कोणीय दूरी को अयनांश कहते हैं। 1-1-93 को लाहिड़ी के चित्रपक्षीय पंचांग के अनुसार अयनांश 23°-45'-51" था।

पाश्चात्य मत में ग्रहों (आकाशीय पिण्ड़ों) के विषुवीय भोगांश (Equatorial longitudes) की गणना करते हैं ... भारतीय मत में नक्षत्रीय भोगांश (स्थिर मेष का प्रथम बिन्दु से क्रांति वृत्त पर भोगांश) का प्रयोग करते हैं। पाश्चात्य मत में सायन भोगांश तथा भारतीय ... में निरायण भोगांश का प्रयोग करते हैं।

निरायण भोगांश = सायन भोगांश - अयनांश

अयनांश प्रतिवर्ष लगभग 50".3 (चाप) पीछे खिसकता है। ऐसा पृथ्वी के अपने अक्ष के एक छोटे वृत्ताकार पथ पर भ्रमण के साथ वसंत-संपात के खिसकने के कारण होता है। पृथ्वी का अक्ष क्रांतिवृत्त पर लम्ब के साथ 23½° का कोण बनाता है परन्तु यह एक कोणीय चक्र (conical rotation) में घूम रहा है।

4. समय के माप में अन्तर है। पाश्चात्य मत में दिन की गणना पृथ्वी के अपने अक्ष पर घूमने के अनुसार की जाती है जबकि भारतीय पद्धति में एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक के समय को एक दिन माना जाता है। इसे सावन दिन (Civil days) भी कहते हैं। मास की गणना पृथ्वी के चारों ओर चंद्रमा के परिभ्रमण पर

आधारित है तथा चंद्रमा की कलाओं के अनुसार है। एक अमावस्या से दूसरी अमावस्या जबकि (चंद्रमा पूर्णतः सूर्य के साथ युति करता है अर्थात् एक भोगांश पर आ जाता है) तक के समय को एक चंद्र मास कहते हैं। वर्ष की गणना, सूर्य द्वारा पृथ्वी के चारों ओर, मेष के प्रथम विन्दु से पुनः उस बिन्दु पर दुबारा आने तक (वसंत संपात बिन्दु से दोबारा वसंत संपत आने तक) के समय के अनुसार करते हैं। इस प्रकार हम सावन दिन (Civil days) चन्द्रमास एवं लगभग 365¼ दिन के सौर वर्ष को मानते हैं प्रत्येक मास 28/29/30 या 31 दिन का होता है तथा एक दिन को 24 घण्टों में बांटा है। (अर्द्धरात्रि से अर्द्धरात्रि तक)। भारतीय पद्धति में स्थानीय समय को मान्यता दी जाती थी जबकि पाश्चात्य देशों में मानक समय का व्यवहार किया जाता है।

5. भारतीय पद्धति में वेध, नंगी आंखों से ही किया जाता था तथा सूर्य घड़ी, ज्योमितिय आकारों, बीजगणित तथा त्रिकोणमिति के सूत्रों द्वारा गणनाएं की जाती थीं। शीघ्रोच्च (जहां ग्रहों की गति सबसे तेज) तथा मन्दोच्च (जहां ग्रहों की गति सबसे कम) आदि बिन्दुओं को देवताओं के प्रतीक देना प्रचलित था क्योंकि ग्रहों की गति उन देवताओं द्वारा लगायी जाने वाली शक्ति से जोड़ा जाता था जिससे ग्रह मार्गी/वक्री आदि भी होते थे। बाद में अधिचक्रीय (Epicyclic) सिद्धान्त को माना जाने लगा।

पाश्चात्य खगोलविज्ञान ग्रहों की गतियों के बारे में केपलर के नियमों को मान्यता देता है साथ ही आधुनिक गणित एवं विस्तृत गणनाओं की सहायता ली गई। दूरदर्शी (Telescope) से वेध किया जाने लगा। आकाशीय पिण्ड़ों/आकाश के चित्र (Photographs) भी लिया जाने लगे। ग्रहों/तारों की गतियों का अध्ययन स्पेक्ट्रोस्कोपी द्वारा किये गये। ग्रहों की रश्मियों में दैर्ध्यकाल (Frequencies) में अन्तर के अनुसार उनकी गतियों का अनुमान किया गया। ग्रहों की बनावट का भी इससे पता चला। पैरेलक्स के अध्ययन द्वारा ग्रहों, तारों नीहारिकाएं, सुपरनोवा आदि की दूरियां मापी गई। शक्तिशाली दूरबीनों की मदद से युग्म तारे (Twin star) की खोज हुई।

6. भारतीय परम्परा में खगोलशास्त्र एवं ज्योतिष शास्त्र, मानों शरीर एवं आत्मा की तरह एक दूसरे से जुड़े थे। एक दैवी विद्या की तरह उनका विकास हुआ। इन दोनों विद्याओं को अलग करना संभव नहीं है। इस विद्या का सम्बन्ध ब्रह्मा द्वारा सृष्टि की रचना, विकास एवं विनाश जैसे दार्शनिक मत से जोड़ा गया। ज्योतिष वेदों का भी अंग है।

पश्चिम में खगोल का ज्ञान एक भौतिक विज्ञान की तरह विकसित हुआ। दोनों ही ग्रहों/मतों की गति एवं स्थिति को मापने की कोशिश की गई। परन्तु भारतीय पद्धति जहां कोणीय स्थिति एवं कोणीय गति पर आधारित रही, पाश्चात्य पद्धति में इनकी रैखिक दूरी एवं रैखिक गति का भी अध्ययन किया गयां।

7. भारतीय पद्धति में भौतिक पिण्ड़ों के अतिरिक्त कई खगोलीय बिन्दुओं, जैसे–चंद्रमा एवं अन्य ग्रहों के पात (Nodes) कक्षा का मन्दोच्च बिन्दु, युति-बिन्दुओं, मान्दी, उपग्रह आदि बिन्दुओं की स्थिति एवं गतियों का भी अध्ययन किया गया। योग, करण, राशिमान में अंतर, विपुवांश, मध्याह्न बिन्दु आदि का भी खगोलशास्त्र के अनुसार गणना की गई।

अध्याय 2

परिभाषाएं

2.1 गोल (Sphere)—यदि एक वृत्त को उसके एक व्यास के चारों ओर घुमाया जाए तो जो आकृति बनेगी उसे गोल कहते हैं। बाल (गेंद), फुटबाल, संतरा आदि ऐसे गोल के कुछ उदाहरण हैं।

एक वृत्त का केन्द्र, उस वृत्त की परिधि के हर बिन्दु से समान दूरी पर होता है। वृत्त का केन्द्र उस वृत्त से बने गोल का भी केन्द्र होता है तथा यह केन्द्र गोल के सतह के किसी भी बिन्दु से समान दूरी पर होता है।

अर्धव्यास या त्रिज्या—वृत्त या गोल के व्यास का आधा अर्धव्यास या त्रिज्या कहलाता है। वृत्त की परिधि/गोल की सतह के किसी भी बिन्दु से केन्द्र तक की दूरी को अर्धव्यास कहते हैं।

2.2 आकाशीय गोल (Celestial sphere)—पृथ्वी गोल है। पृथ्वी की सतह को यदि अनन्त आकाश में फैला दिया जाय तो जो आकृति बनेगी उसे आकाशीय गोल कहेंगे।

दूसरे शब्दों में, आकाशीय गोल एक ऐसा गोल है जिसकी त्रिज्या, पृथ्वी की किसी भी दूरी की अपेक्षा अनन्त होगी और पृथ्वी मानों इस काल्पनिक गोल के केन्द्र पर स्थित होगी।

इसे इस प्रकार से समझें—

यदि दो व्यक्ति पृथ्वी के किसी एक व्यास के दो छोरों पर अलग-अलग खड़े हो तो उनमें से प्रत्येक अपने सिर के ऊपर आकाश का अर्धगोलाकार हिस्सा कटोरी के आकार का देखेगा। यदि दोनों अर्धगोलाकार आकाश के हिस्सों को मिला दिया जाए तो आकाशीय गोल (पूर्ण गोलाकार) बन जायेगा।

2.3 वृहत् या बड़ा वृत्त (Great Circle)—जब कोई समतल, एक गोल को इस तरह काटे कि वह तल गोल के केन्द्र से होकर गुजरे तो गोल की सतह के जिन बिन्दुओं से होकर गुजरेगा उससे बना वृत्त बड़ा वृत्त कहलाता है।

एक बड़ा वृत्त गोल को दो समान अर्धगोलाकार भागों में बांटता है।

चित्र 1. में अ ई ब एक बड़ा वृत्त है। अ क ब उसका व्यास है, जो गोल का भी व्यास है।

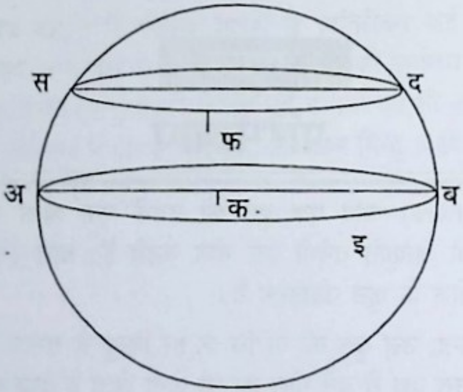

चित्र सं. 1

2.4 लघु वृत्त (Small Circle)–कोई भी समतल गोल को इस तरह विभाजित करे कि वह उसके केन्द्र से होकर नहीं गुजरे तो वह तल गोल कीसतह के जिन बिन्दुओं से मिलेगा उनसे बना वृत्त लघु वृत्त या छोटा वृत्त कहलायेंगे। इसकी त्रिज्या/व्यास, गोल/वृहत्त वृत्त की त्रिज्या/व्यास से छोटी होगी।

चित्र में स फ द एक लघु वृत्त है।

2.5 समतल (Plane)–तल में लम्बाई, चौड़ाई होती है पर मोटाई नहीं होती तल दो प्रकार के होते हैं–समतल, वक्रतल। समतल में किसी भी दो बिन्दुओं को एक सरल रेखा से मिलाया जा सकता है जो उसी तल में स्थित हो। ऐसे रेखाओं से बने तल को समतल कहते हैं जैसे टेबल की सतह, फर्श, कागज का पन्ना जब सीधा रखा जाए। ऐसे सतह को अनन्त आकाश में फेला दें तो उसे गणित की भाषा में तल या समतल कहते हैं। वक्र-तल का उदाहरण एक गोल घड़े, शंकु आदि की सतह है।

2.6 गोल के किसी वृत्त के ध्रुव–

चित्र सं. 2 को ध्यान से देखें। अ प ब य एक गोल है जिसका केन्द्र क है। इसे तल अ ल ब काटता है और वृहत् वृत्त अ ल ब बनाता है। जिसका केन्द्र भी क होगा। दूसरा तल स फ द, जो तल अ ल ब के समानान्तर है, भी गोल को, काटकर एक छोटा वृत्त स फ द बना रहा है जिसका केन्द्र क' है। यदि केन्द्र क

और क' को मिलाकर दोनों को बढ़ाया जाए तो वह गोल के सतह पर दो बिन्दुओं प एव य पर मिलेगा। प एवं य बिन्दु वृत्त अ ल ब एवं स फ द तथा उन सभी वृत्तों के जो इन दो वृत्तों के समानान्तर हों; उनके ध्रुव हैं।

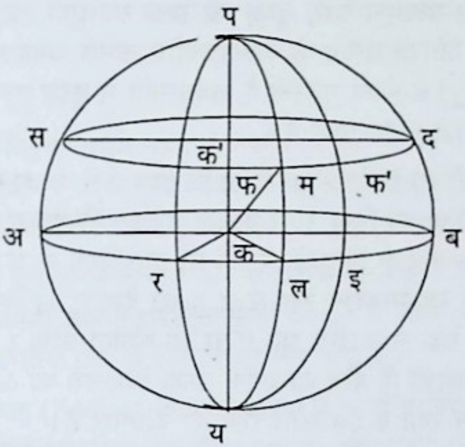

चित्र सं. 2

ध्रुव की विशेषताएं हैं–

(1) ध्रुव के बिन्दुओं को मिलाने वाली रेखा उन सभी वृत्तों को समकोण पर (लम्बवत्) काटैगी, जिन वृत्तों के वे ध्रुव हैं।

(2) ध्रुव के बिन्दुओं को मिलाते हुए गोल क़ी सतह पर खींची गई प्रत्येक रेखा भी उन वृत्तों को लम्बवत् (समकोण पर) काटेगी, जिनके वे बिन्दु ध्रुव हैं।

(3) एक ध्रुवीय विन्दु के लिए सिर्फ एक ही वृहत् वृत्त होता है जिसको दोनों ध्रुवों को मिलाने वाली रेखा लम्ववत् काटती है।

(4) प्रत्येक वृहत् वृत्त के दो विपरीत दिशाओं में गोल की सतह पर स्थित दो ध्रुवीय बिन्दु होंगे और उस वृहत् वृत्त के प्रत्येक बिन्दु से गोल की सतह पर खींची गई रेखायें, लम्ववत् क्रमशः दोनों ध्रुवों पर मिलेंगी।

2.7 पृथ्वी की गोलाकार आकृति को terrestrial sphere कहते हैं। (भौगोलिक) विपुवत् रेखा या भूमध्य रेखा–चित्र 2 में गोल को हम पृथ्वी मान लें तो प एवं य पृथ्वी के दो ध्रुव हैं। वृहत् रेखा अ ल ब विपुवत् रेखा या भूमध्य रेखा है। भूमध्य रेखा एक ऐसा वृहत् वृत्त है जो पृथ्वी के चारों ओर इसके अक्ष (जिसके चारों ओर पृथ्वी घूमती है) पर लम्ववत् है। पृथ्वी का अक्ष वस्तुतः उत्तरी ध्रुव प तथा दक्षिणी ध्रुव य को मिलाने वाली रेखा ही है। चित्र 2 में प एवं य को भौगोलिक ध्रुव कहेंगे।

(भौगोलिक मध्याह्न रेखा)–पृथ्वी की सतह पर भौगोलिक ध्रुवों प एवं य को मिलाने वाली प्रत्येक काल्पनिक रेखा, भौगोलिक मध्याह्न रेखा है। ये मध्याह्न रेखाएं भूमध्य रेखा को लम्बवत् काटती हुई गुजरेंगी।

प्रधान/प्रथम मध्याह्न रेखा; पृथ्वी की सतह पर ध्रुवों को मिलाने वाली उस कालपिक रेखा को जो लन्दन के पास ग्रीनवीच नामक जगह पर स्थित वेधशाला (Obsorratory) से होकर गुजरती है, सर्वसम्मति से मुख्य मध्याह्न रेखा (Principal Meridian) माना गया है।

2.8 (भौगोलिक) देशांतर–मान लिया कि चित्र 2 में प र य मुख्य मध्याह्न रेखा है जो भूमध्य रेखा को बिन्दु र पर काटता है। इन दो मध्याह्न रेखाओं के भूमध्य रेखा पर मिलने वाले बिन्दुओं (र एवं ल) द्वारा पृथ्वी के केन्द्र क पर जो कोण र क ल बनेगा वह मध्याह्न रेखा प ल य का देशांतर या रेखांश कहा जायेगा। यदि मध्याह्न रेखा ल प द्वारा ध्रुव प पर जो गोलीय कोण र प ल बनता है वह भी मध्याह्न रेखाओं के बीच का कोण उनके देशान्तरों का अन्तर है। अगर एक प्रधान मध्याह्न रेखा है तब कोण रेखा का देशान्तर है।

2.9 (भौगोलिक) अक्षांश–चित्र 2 में मध्याह्न रेखा प ल य पर म एक स्थान है। यह मध्याह्न रेखा भूमध्य रेखा को बिन्दु ल पर काटता है। मध्याह्न रेखा प म ल य पर म ल एक चाप होगा। यह म स्थान का अक्षांश है। इसे चाप द्वारा पृथ्वी के केन्द्र पर जो म क ल कोण बनेगा वह स्थान म का अक्षांश है क्योंकि चाप म ल को कोण म क ल द्वारा ही दर्शाया जा सकता है। भूमध्य रेखा पर अक्षांश 0 (शून्य) होता है। उत्तरी गोलार्द्ध (भूमध्य रेखा से उत्तरी ध्रुव तक का हिस्सा) में जो स्थान होगा उसका अक्षांश उत्तर एवं दक्षिणी गोलार्ध में जो स्थान होगा उसका अक्षांश दक्षिण कहा जाता है। एक ही मध्याह्न रेखा पर विभिन्न स्थानों का देशांतर तो एक होगा तथा उनके अक्षांश भिन्न होगे। इसी प्रकार एक ही अक्षांश पर विभिन्न स्थानों के देशांतर भिन्न होंगे। अक्षांश रेखा वास्तव में पृथ्वी की सतह पर वे काल्पनिक वृत्त है जो भूमध्य रेखा (वृहत् वृत्त) के समानान्तर होते हैं। 90° उत्तरी अक्षांश उत्तरी ध्रुव है तथा 90° दक्षिणी अक्षांश दक्षिणी ध्रुव है।

खगोलीय गोल–पृथ्वी को अनन्त आकाश में फैलाने पर जो गोल बनता है उसे celestial sphere या खगोलीयगोल कहते हैं।

2.10 खगोलीय ध्रुव–पृथ्वी के अक्ष को यदि अनंत आकाश में बढ़ाया जाए तो यह खगोल को जिन दो विन्दुओं पर काटेगा (मिलेगा) उसे खगोलीय ध्रुव कहते हैं। उत्तरी दिशा में जो विन्दु होगा उसे उत्तरी ध्रुव तथा दक्षिणी दिशा में दक्षिणी ध्रुव कहते हैं।

2.11 नाड़ीवृत्त या विषुवत् वृत्त (Celestial equator)–विषुवत् वृत्त, खगोल का वह वृहत् वृत्त है जिसका तल खगोलीय ध्रुवों के मिलाने वाली रेखा को समकोण पर (लम्बवत्) काटता है।

इसे इस तरह भी समझ सकते हैं। पृथ्वी की विषुवत् रेखा या भूमध्य रेखा को यदि अनन्त आकाश में विस्तार कर दिया जाए तो खगोल में जो वृहत् वृत्त बनेगा वह विषुवत् वृत्त होगा।

2.12. **क्रांतिवृत्त**–नक्षत्र मंडल के नेपथ्य में सूर्य एक वर्ष में आकाशीय गोल में जिस पथ पर भ्रमण करता हुआ दिखाई पड़ता है उसे क्रांतिपथ या क्रांतिवृत्त कहते हैं। क्रांतिवृत्त का तल विषुवत् वृत्त के तल के साथ 23°27' का कोण बनाता है।

वास्तव में सूर्य पृथ्वी के चारों ओर नहीं बल्कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करती है। इसलिए क्रांतिवृत्त वस्तुतः पृथ्वी की सूर्य के चारों ओर वार्षिक परिभ्रमण पथ को आकाशीय गोल में विस्तार करने से बना है।

2.13. **भचक्र** (Zodiac)–भचक्र आकाश में वह काल्पनिक पट्टी है जो क्रांतिवृत के 9° उत्तर एवं 9° दक्षिण तक फैला हुआ है। चंद्रमा एवं अन्य ग्रह इसी पट्टी के अन्दर भ्रमण करते हुए दिखाई पड़ते हैं।

चित्र 3 में जो खगोल का चित्र है, उसमें इ य विषुवत् वृत्त हैं। अ ब क्रांतिवृत्त है जो विषुवत् वृत्त पर 23°27' का कोण बनाता है। स द एवं फ ज क्रांतिवृत्त अ ब से 9° उत्तर एवं 9° दक्षिण की दूरी पर दो समानान्तर वृत्त है। स द एवं फ ज के बीच की पट्टी को भचक्र कहते हैं। इस प्रकार क्रांतिवृत्त भचक्र के मध्य में स्थित एक वृत्त है।

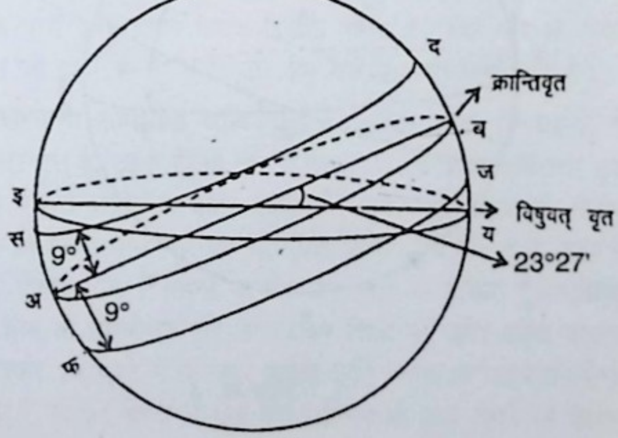

चित्र सं 3

नीचे कुछ परिभाषाएं दी जा रही हैं, जिन्हें बाद में समझाया गया है–

विक्षेप या शर–ब्रह्माण्ड में स्थित किसी पिण्ड (ग्रहादि) का विक्षेप या शर, क्रांतिवृत्त पर उस पिण्ड (ग्रहादि) से खींचा गयी लम्बवत् चाप की कोणीय दूरी होता है।

भोगांश–किसी भी ब्रह्मांडीय पिण्ड (ग्रहादि) का भोगांश, उसका क्रांतिवृत्त पर मेष के प्रथम विन्दु से कोणीय दूरी होता है। अर्थात पिण्ड (ग्रहादि) से लम्बवत् चाप क्रांतिवृत्त को जिस बिन्दु पर काटता है, वह बिन्दु लम्बवत् चाप क्रांतिवृत्त पर स्थित शून्य बिन्दु (अर्थात मेष का प्रथम बिन्दु) से जितने कोणीय दूरी पर होती है, उसे उस ब्रह्मांडीय पिंड (ग्रहादि) का भोगांश कहते हैं।

2.15. क्रांति–किसी भी ब्रह्मांडीय पिंड (ग्रहादि) से विषुवत् वृत्त पर जो लम्बवत् चाप डाला जाएगा, उसके द्वारा केन्द्र (पृथ्वी) पर बना कोण, वह उस पिंड (ग्रहादि) की क्रांति कहलाता है। किसी भी ब्रह्मांडीय पिंड की विषुवत वृत्त से लम्बवत् कोणीय दूरी को क्रांति कहते हैं।

2.16. विषुवांश–विषुवत् वृत्त पर किसी पिंड (ग्रहादि) से डाला गया लम्बवत् चाप जिस विन्दु पर मिलता है उसकी विषुवत् वृत्त पर स्थित (सायन) मेष के प्रथम विन्दु (बसंत संपात बिन्दु) से जो कोणीय दूरी होती है, उसे पिंड (ग्रहादि) का विषुवांश कहते हैं।

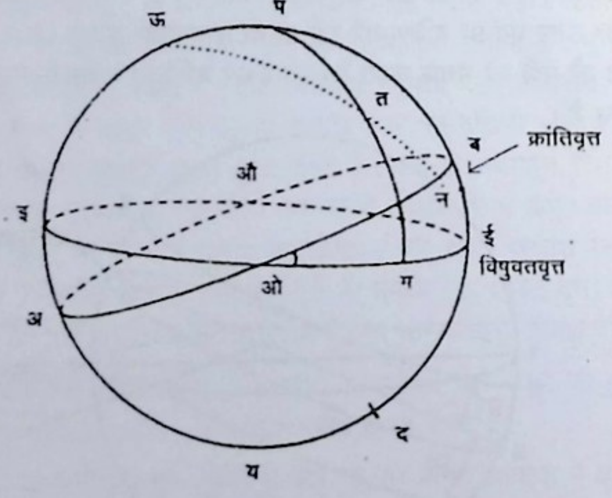

चित्र सं. 4

2.17. चित्र सं 4 में त एक तारा है। इ ओ ई विषुवत वृत्त है।

अ ओ ब क्रांतिवृत्त है।

ओ औ, क्रमशः इ ई एवं अ ब, वृत्तों के कटान (या मिलान) बिन्दु हैं।

ओ सायन मेष का प्रथम बिन्दु है (वसंत-संपात बिन्दु)

प एवं य क्रमशः उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुव है।

ऊ एवं द क्रांति वृत्त के ध्रुव हैं।

ऊ त न, क्रांतिवृत्त अ ओ ब पर, तारे त से लम्बवत् डाली गई चाप है।

प त म विषुवत् वृत्त पर, तारे त से लम्बवत् डाली गई चाप है।

चाप त म - तारे की क्रांति है।

चाप ओ म - विषुवांश है।

चाप त न - विक्षेप या शर है।

चाप ओ न - भोगांश (सायन) है।

टिप्पणी–भौगोलिक देशांतर एवं अक्षांश की तुलना भोगांश एवं विक्षेप या शर से न करें। ये दोनों परिभाषा के अनुसार भी बिल्कुल भिन्नता रखते हैं। (एक पृथ्वी के भूमध्य रेखा के सापेक्ष हैं तो दूसरा क्रांतिवृत्त (आकाश में सूर्य के आकाशीय पथ के सापेक्ष है।)

2.18 **क्रांति का चक्र**–विषुवत् वृत्त के समानान्तर छोटे वृत्त जो किसी तारे से होकर गुजरते हों उन्हें क्रांति के चक्र कहते हैं। इसी वृत्त पर वह तारा 24 घंटे में खगोलीय ध्रुव के चारों ओर भ्रमण करता दिखाइ पड़ता है। एक तारे से होकर गुजरता हुआ वृत्त जो ध्रुवों से भी गुजरे उसे उस तारे का **याम्योत्तार वृत्त** है।

2.19. **होरा-कोण या सामयिक कोण** (Hour angle)–द्रष्टा या दर्शक के सापेक्ष जो याम्योत्तर वृत्त है, उससे किसी तारे से होकर गुजरने वाला याम्योत्तर वृत्त जो कोण बनाता है उसे सामयिक कोण कहते हैं। जब तारा दर्शक के साक्षेप याम्योत्तर वृत्त पर ही हो तो उस तारे का सामयिक कोण शून्य है। तारा, वहां से पश्चिम की ओर जाता दिखाई पड़ेगा अर्थात् उस तारे से होकर गुजरनेवाला याम्योत्तर वृत्त, दर्शक के याम्योत्तर वृत्त से पश्चिम दिशा की ओर कोण वढ़ाता हुआ एक पूरा चक्कर 24 घण्टे में काटकर वापस उसी स्थान पर आयेगा। ऐसा पृथ्वी के अपनी धुरी पर 24 घण्टों में एक बार पश्चिम से पूरब घूमने के कारण होता है।

जव तारा दर्शक के याम्योत्तर वृत्त से पश्चिम की ओर जा रहा है तो सामयिक कोण 0 घं से 12 घं होता है और जब तारा पूर्व की ओर होता है तो सामयिक कोण 12 घं से 24 घं का होता है।

2.20. उन्नतांश (Altitude)–किसी ब्रह्माण्डीय पिंड (ग्रहादि) का उन्नतांश (ऊंचाई) क्षितिज वृत्त से उसकी उस लम्ब वृत्त पर नापी गई कोणीय दूरी है, जो दर्शक के शिरो बिन्दु एवं उस पिंड (ग्रहादि) से होते हुए क्षितिज पर बन रही है।

2.21. दिग्गांश (Azimuth)–किसी ब्रह्माण्डीय पिंड (ग्रहादि) का दिग्गांश, उस पिंड (ग्रहादि) एवं दर्शक के शिरोबिन्दु से होकर गुजरने वाला उद्वृत्त का क्षितिज पर मिलन-बिन्दु एवं क्षितिज पर उत्तरी बिन्दु (अर्थात् जहां पर याम्योत्तर वृत्त उत्तरी दिशा में क्षितिज से मिल रहा है) के बीच की कोणीय दूरी है।

2.22 शिरोबिन्दु (Zenith)–आकाश में शिरोबिन्दु वह बिन्दु है, जो दर्शक के पृथ्वी पर खड़े होने पर उसके सिर से ठीक सीध में एक सरल रेखा को आकाश में ऊपर बढाने पर खगोल से मिलता हुआ प्रतीत हो। दूसरे शब्दों में मिस्त्री के शंकु (Plumb) को जमीन से कुछ ऊपर लटकाने पर जिस सीध में धागा स्थिर होता हे–उसी सीध में आकाश तक धागे को बढ़ाने से जहां वह आकाश (खगोल) से मिलता हुआ प्रतीत हो उसे उस स्थान विशेष के लिए शिरोबिन्दु कहते हैं। यह दर्शक-सापेक्ष है।

2.23. अधो-बिन्दु (Nadir) **या पाताल बिन्दु**–पृथ्वी पर जहां दर्शक खड़ा है, वहां से शिरोबिन्दु तक खींची गई काल्पनिक रेखा को दर्शक के पैर से गुजरते हुए पृथ्वी के नीचे सीध में बढ़ाया जाए तो जहां वह खगोल से मिलता जुलता प्रतीत हो उसे अधो-बिन्दु या पाताल बिन्दु (Nadir) कहते हैं। दूसरे शब्दों में अधोबिन्दु, शिरोबिन्दु का विपरीत है।

2.24. (खगोलीय) याम्योत्तर वृत्त (Celestial meridian)–खगोलीय ध्रुवों एवं दर्शक के शिरोबिन्दु से गुजरता हुआ वृहत् वृत्त उस दर्शक के स्थान पर याम्योत्तर वृत्त है।

2.25. उद्वृत्त या दृगवृत्त–शिरोबिन्दु से गुजरता हुआ प्रत्येक वृहद् वृत्त जो क्षितिज को लम्बवत् (समकोण पर) काटे, उस प्रत्येक वृत्त को उद्-वृत्त कहेंगे।

2.26 मुख्य उद् वृत्त (Prime Vertical)–किसी स्थान के याम्योत्तर वृत्त से समकोण पर बनाता हुआ वह उद्वृत्त जो क्षितिज को पूर्व एवं पश्चिम बिन्दुओं पर काटता हैं, उसे उस स्थान का मुख्य उद्-वृत्त कहते हैं।

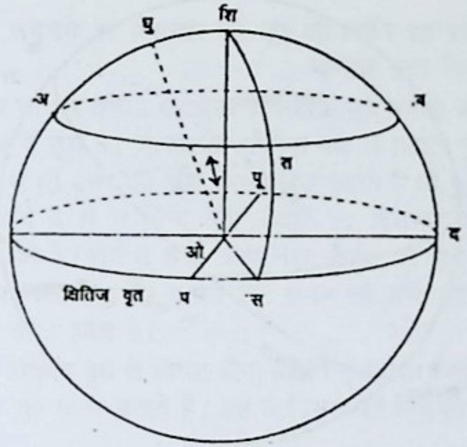

चित्र 5

चित्र 5 में उ स द क्षितिज से मिलता हुआ वृहत् वृत्त अर्थात् क्षितिज (वृत्त) है। दर्शक ओ पर खड़ा है और शि वहां पर शिरोबिन्दु है।

धु उत्तरी ध्रुव है, त एक तारा है।

क्षितिज उ स द, त शि पर लम्बवत् होगा।

वृहत् वृत्त शि त स क्षितिज वृत्त को लम्बवत् काटता हुआ स बिन्दु पर मिलता है।

स त तारे की उन्नतांश (ऊंचाई) (Altitude) है।

अ त ब (क्षुद्र वृत्त) को समोन्नत वृत्त कहेंगे। धु और शि से गुजरता हुआ लम्ब-वृत्त क्षितिज को द एवं उ पर काटता है। द क्षितिज का दक्षिण-बिन्दु तथा उ उत्तर-बिन्दु है। द एवं उ से क्षितिज पर 90° के कोण बनाते हुए पू एवं प, क्रमशः पूर्व एवं पश्चिम बिन्दु है।

चाप उ स, कोणीय मात्रा में, तारे त का पश्चिमी दिग्गांश (Azimuth-w) है क्योंकि यह उ से पश्चिम में स्थित है।

इस प्रकार एक ब्रह्माण्डीय पिंड (ग्रह, तारे) की स्थिति को क्षितिज के सपेक्ष भी दर्शाया/वर्णन किया जा सकता है।

सूर्य की क्रांति में परिवर्तन–वसंत संपात (लगभग 21 मार्च) को सूर्य की क्रांति, शून्य होती है क्योंकि उस दिन सूर्य, विषुवत् वृत्त पर आ जाता है। चित्र सं 6 में सूर्य वसंत संपात के दिन अ पर है। यह बिन्दु सायन (चल भचक्र) पद्धति में मेष

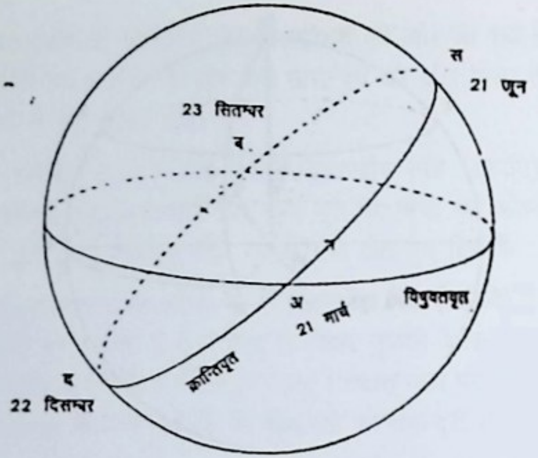

चित्र 6

का प्रथम विन्दु (शून्य-भोगांश बिन्दु) माना जाता है। सूर्य की क्रांति अ से आगे बढ़ाने पर दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती है और वह स विन्दु पर (तीन महीने बाद लगभग 21 जून को) यह अधिकतम होती है। यहां पर सूर्य की क्रांति 23°27' (उ) है जोकि क्रांतिवृत्त का विपुवत वृत्त पर झुकाव भी है। इस विन्दु स पर जब सूर्य होता है, उसे ग्रीष्म संपात या दक्षिणायन विन्दु भी कहते हैं। इसके बाद सूर्य की क्रांति घटने लगती है, क्योंकि सूर्य उत्तर से दक्षिण दिशा की ओर बढ़ने लगता है। क्रांति पुनः 23 सितम्बर के आसपास शून्य हो जाती है, जब सूर्य व विन्दु पर होता है। यह बिंदु क्रांतिवृत्त तथा विपुवत वृत्त का कटान विन्दु भी है। (सायन तुला का प्रारंभ) यहां से सूर्य विपुवत वृत्त से दक्षिण की तरफ जाता है तथा सूर्य की क्रांति दक्षिण की ओर बढ़ने लगती है। द बिन्दु पर सूर्य 22 दिसम्बर या आसपास पहुंचता है जहां इसकी क्रांति एक बार फिर अधिकतम 23°27' (द) होती है। यहां से सूर्य उत्तरायण हो जाता है अर्थात् दक्षिण से उत्तर की ओर आना प्रारंभ हो जाता है। यहां से सूर्य की दक्षिण क्रांति घटने लगती है तथा पुनः अ बिन्दु पर (वही 21 मार्च के लगभग) क्रांतिशून्य हो जाती है।

वसंत संपात (21 मार्च) को सूर्य की क्रांति = 0°

भोगांश तथा विषुवांश = 0°

ग्रीष्म-संपात 21 जून को सूर्य की क्रांति 23°27' उत्तर

भोगांश तथा विषुवांश = 90°

शरद्-संपात (23 सितम्बर) को सूर्य की क्रांति पुनः 0°,

भोगांश तथा विषुवांश = 180°

शिशिर-संपात लगभग 22 दिसम्बर को सूर्य की क्रांति 23°27' दक्षिण
भोगांश तथा विषुवांश = 270°

सूर्य का विक्षेप या शर हमेशा 0° होता है क्योंकि सूर्य हमेशा क्रांति वृत्त पर ही चलता है। वास्तव में सूर्य का आकाशीय वार्षिक पथ ही क्रांति वृत्त है। सूर्य जब बिन्दु द से (चित्र सं 6) उत्तर की ओर चलना शुरू करता है तो सूर्य का उत्तरायण होना कहते हैं। सूर्य द से स विन्दु तक अर्थात् 22 दिसम्बर से 21 जून तक उत्तरायण होना कहते हैं। सूर्य स से द बिन्दु तक अर्थात् 21 जून से 22 दिसम्बर तक सूर्य दक्षिणायन कहलाता है। स पर उत्तर अयन का अन्त होता है और द पर दक्षिण अयन का अन्त होता है।

क्रांति वृत्त का विषुवत वृत्त से तिरछा होना–क्रांति वृत्त तथा विपुवत वृत्त के तल आपस में 23°27' का कोण बनाते हैं। यह क्रांतिवृत्त का विपुवत वृत्त पर वक्रता या झुकाव है।

वर्ष में दो दिन ऐसा आता है जब सूर्य विषुवत वृत्त को पार करता है और इस दिन सूर्य का आकाश में भ्रमण पथ, विपुवत वृत्त से होकर ही गुजरता है और ठीक पूर्व से उदय होकर ठीक पश्चिम में अस्त होता है। सूर्य के इस दिन का भ्रमण पथ का आधा भाग पृथ्वी के क्षितिज के ऊपर दिखाई पड़ता है, दूसरा आधा क्षितिज से नीचे (पृथ्वी के दूसरी ओर होता है) इन दो दिनों में रात और दिन बराबर होते हैं इन दो दिनों को वसंत संपात तथा शरद्-संपात कहते हैं। जब सूर्य दक्षिण से उत्तर जाते हुए विषुवत वृत्त को काटता है तो इसे वसंत संपात (सायन मेप का आरंभिक विन्दु) कहते हैं जो 21मार्च या उसके पास में होता है तथा जब सूर्य उत्तर से दक्षिण जाते हुए विपुवत वृत्त को काटता है तो उसे शरद्-संपात (सायन तुला का प्रारंभिक बिन्दु) कहते हैं जो 23 सितम्बर या उसके पास ही होता है।

किसी भी तारे (आकाशीय पिंड) की ऊंचाई (altitude) उस समय अधिकतम होगी जब वह उस स्थान के याम्योत्तर वृत्त (Meridian) पर होगा। इस विन्दु को पार करने के बाद उसकी ऊंचाई घटने लगेगी। पृथ्वी के किसी स्थानपर खगोलीय ध्रुव की ऊंचाई उतनी होगी जितना उस स्थान का अक्षांश होगा। इस प्रकार भूमध्य रेखा पर ध्रुवों की ऊंचाई शून्य होगी। दूसरे शब्दों में भूमध्यरेखा पर दोनों ध्रुव-क्षितिज पर दिखाई पड़ेंगे।

Perelion सूर्योच्च = कोई ग्रह जब सूर्य के निकटतम हो तब वह Prelion सूर्योच्च पर होता है।

Aphelion सूर्यनीच = कोई ग्रह जब सूर्य से अधिकतम दूरी पर होता है तब वह Aphelion सूर्यनीच पर होता है।

कोई पिंड जब पृथ्वी के निकटतम होता है तब वह Perigee या पृथ्वी उच्च पर होता है। जब वह पृथ्वी से अधिकतम दूरी पर होता है तब Akogee या पृथ्वी नीच पर होता है।

अध्याय 3

सौर मंडल-सामान्य परिचय

अव हम सौरमंडल का अध्ययन करेंगे। पहले हम तारे, ग्रह एवं उपग्रहोंके बारे में जानकारी करें।

तारे–तारे स्वतः दीप्त पिंड है, और अन्तरिक्ष में प्रकाश तथा गर्मी उत्सर्जित करते हैं। सूर्य एक तारा है। नक्षत्र-मंडल तारों के समूहों से बना है।

ग्रह–तारों, सूर्य एवं चन्द्रमा के अतिरिक्त आंखों से सीधे दिखाई पड़ने वाले अन्य पिंड भी आकाश में हैं जो सूर्य के चारों ओर भ्रमण करते हैं। चूंकि स्थिर तारों के बीच इनकी गति अनिश्चित (उनसे अलग) है अतः इन्हें ग्रह या घुमक्कड़ तारे कहते हैं। स्थिर तारे आकाश में टिमटिमाते हैं जबकि ग्रहों की चमक एक समान (स्थिर) दिखाई पड़ती है। ग्रह जिन्हें हम सीधी आंखों से देख सकते हैं वे हैं–बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति तथा शनि जबकि अरुण वरुण तथा यम या यूरेनस, नेप्च्यून और प्लूटो को हम दूरवीन की मदद से देख सकते हैं।

चंद्रमा/उपग्रह–उपग्रह वे आकाशीय पिंड हैं जो ग्रहों के इर्द गिर्द चक्कर काटते रहते हैं और इस प्रकार वे ग्रहों के साथ सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। साधारणतः इन्हें उन ग्रहों का चांद कहा जाता है। उदाहरणस्वरूप पृथ्वी का एक उपग्रह चन्द्रमा है।

सौर-मंडल–सौरमण्डल सूर्य, ग्रहों, उपग्रहों, धूमकेतु, लघु ग्रहों तथा ग्रहों की धूलकण एवं गैसीय कण आदि से बना है। हमारा सौर मंडल, समूचे ब्रह्माण्ड का एक बहुत ही छोटा भाग है और हमारे लिए यह अति महत्वपूर्ण है, क्योंकि हम इसमें रहते हैं।

चूंकि सूर्य भी एक तारा है तथा इसके चारों ओर परिक्रमा करने वाले ग्रहों की कक्षा (Orbit) के एक नाभि पर स्थित है अतः इसे सौर मंडल कहते हैं। इसमें सिर्फ सूर्य प्रकाश उत्सर्जित कर रहा है। सौर मंडल परिवार के शेष सदस्य सूर्य के इर्द गिर्द परिक्रमा करते हैं तथा वे प्रकाशहीन हैं। इस सौर जगत परिवार के अन्य

महत्वपूर्ण सदस्य अर्थात् ग्रह तथा विभिन्न ग्रहों के उपग्रह, धूमकेतु, लघुग्रह, उल्का, उल्का पिंड आदि भी सौरमण्डल परिवार के सदस्य हैं।

हमारा सौरमण्डल सूर्य के इर्द गिर्द केन्द्रित है तथा सभी ग्रह इसके चारों ओर दीर्घ वृत्ताकार (अंडाकार) (Elliptical) कक्षा में परिक्रमा करते हैं। कुल नौ ग्रह हैं–बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेपचून और प्लूटो (अरूण, वरूण तथा यम) जिसमें से पृथ्वी ग्रह पर हम लोग रहते हैं। हमारे पूर्वजों ने बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति एवं शनि को देख लिया था (सूर्य एवं चंद्रमा के अतिरिक्त जिन्हें ज्योतिष शास्त्र में ग्रह माना जाता है) वास्तव में दोनों ही ग्रह नहीं है। सूर्य एक तारा है जबकि चंद्रमा एक उपग्रह है। परंतु ज्योतिष में 'ग्रह' शब्द का अनुवाद उदारता से किया गया है।

दूरबीन के अविष्कार के बाद कुछ और बड़े एवं छोटे ग्रहों को भी देखना संभव हुआ। सूर्य से दूरी के क्रमानुसार ज्ञात ग्रहों के नाम इस प्रकार हैं–

आन्तरिक ग्रह बुध, शुक्र

पृथ्वी

वाह्य ग्रह या श्रेष्ठ ग्रह	मंगल लघुग्रह बृहस्पति शनि यूरेनस (अरूण) नेपचून (वरूण)

प्लूटो (यम)

इन ग्रहों की सूर्य से दूरी के अनुसार उनकी कक्षा अर्थात् सूर्य से निकटतम कक्षा निकट है तथा अति दूरी वाली कक्षा सूर्य से दूर वाले ग्रह हैं (चित्र 7)।

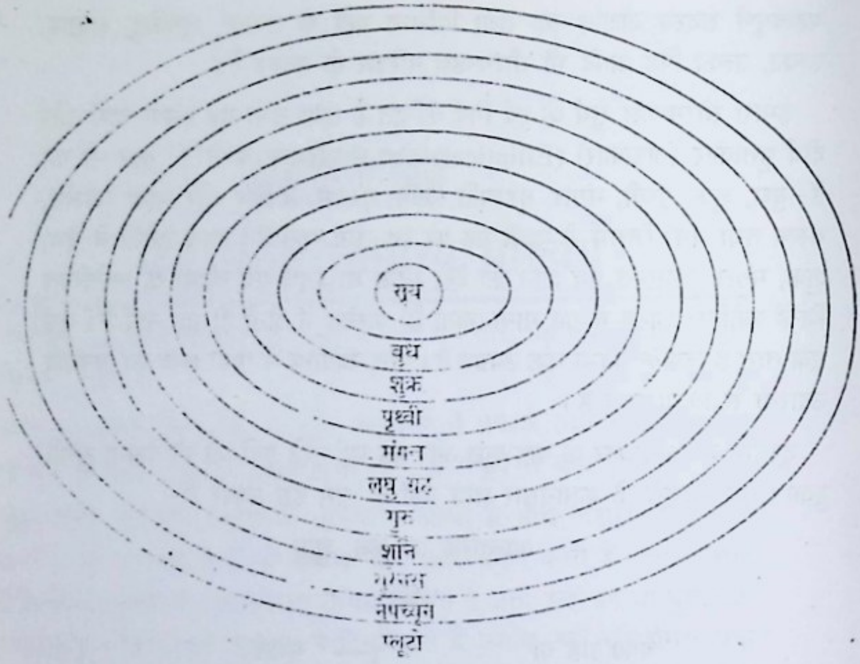

चित्र सं 7

जिन ग्रहों की कक्षा सूर्य और पृथ्वी की कक्षा के बीच में है उन्हें अन्तः ग्रह या आन्तरिक ग्रह या निकृष्ट ग्रह कहते हैं जैसे बुध और शुक्र अन्तः ग्रह है। जबकि जिन ग्रहों की कक्षा पृथ्वी की कक्षा से बाहर है उन्हें बाहरी ग्रह या बाह्य ग्रह या श्रेष्ठ ग्रह कहते हैं। मंगल, क्षुद्र ग्रह/लघु ग्रह बृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेपचून, प्लूटो (अरूण, वरूण तथा यम) बाह्य ग्रह/बाहरी ग्रह/श्रेष्ठ ग्रह है।

सूर्य-पृथ्वीवासियों के लिए सूर्य सबसे महत्वपूर्ण आकाशीय पिंड है। सूर्य प्रकाश तथा गर्मी न सिर्फ पृथ्वी बल्कि सौर परिवार के सभी ग्रहों तथा अन्य पिंडों को देता है। सूर्य अन्य सभी ग्रहों की गतियों को नियंत्रित करता है। हमारे प्रतिदिन के जीवन पर इसका बहुत प्रभाव पड़ता है तथा इसके बिना हमारे अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

इसका व्यास 8,65,000 मील, आयतन पृथ्वी के आयतन से 13,00,000 गुणा तथा इसका द्रव्यमान पृथ्वी के द्रव्यमान से 3,30,000 गुणा ज्यादा है। आणविक प्रतिक्रिया द्वारा हाइड्रोजन को हीलियम में बदलकर यह ऊर्जा का निर्माण करता है तथा इसका द्रव्यमान प्रति सेकण्ड 40 लाख टन कम होता जाता है। यह

आकाश गंगा के केन्द्र से काफी दूर, वलयकार भुजा के अन्तिम छोर पर स्थित है। आकाश गंगा के केन्द्र से इसकी दूरी 30,000 प्रकाश वर्ष है। आकाशगंगा 135 मील प्रति सेकण्ड के दर से सूर्य के साथ घूम रही है तथा सूर्य को एक पूरा चक्कर लगाने में 2250 लाख वर्ष लगते हैं।

क्रांति वृत्त--क्रांति वृत्त आकाशीय गोल (या खगोल) में सूर्य के वार्षिक आभासीय पथ से बना वृहत् वृत्त है, जिसके केन्द्र में पृथ्वी है। यहां हमने यह कल्पना की है (या ऐसा देखने में लगता है) कि सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा करता है। यदि सूर्य पृथ्वी के चारों ओर एक वृत्ताकार कक्षा में घूमता तो इसका व्यास (सूर्य के गोले का पृथ्वी से देखने पर आकार) पूरे वर्ष (एक पूर्ण परिक्रमा के दौरान) में एक सा ही रहना चाहिए था जबकि हम देखते हैं कि यह घटता-बढ़ता रहता है। इसका व्यास जनवरी के प्रारंभ में सबसे ज्यादा अर्थात् 32'36" तथा सबसे कम जुलाई के प्रारंभ में अर्थात 31'32" होता है जिसका अर्थ है कि जनवरी में सूर्य पृथ्वी के समीप तथा जुलाई में दूर होता है। दोनों व्यास में बहुत अधिक अंतर नहीं है अतः क्रांति वृत्त पूर्णरूपेण वृत्ताकार नहीं है।

पृथ्वी--हम लोग जिस ग्रह पर रहते हैं वह पृथ्वी है। यद्यपि हम यह समझते हैं कि पृथ्वी के बारे में हम बहुत जानते हैं, पर सत्य यह है कि हमारा पृथ्वी के बारे में ज्ञान बहुत सीमित है तथा बहुत कुछ जानना शेष है।

सूर्य से दूरी के अनुसार यह तीसरा ग्रह है। सूर्य से पृथ्वी की औसत दूरी 9,29,57,209 मील है। चूंकि पृथ्वी की कक्षा पूर्णतः वृत्ताकार नहीं है बल्कि, इसकी कक्षा अंडाकार है तथा सूर्य इसके एक फोकस (नाभि) पर स्थित है, पृथ्वी की सूर्य से निम्नतम दूरी (जब वह रविनीच बिन्दु पर होता है) 91,400,000 मील है तथा अधिकतम दूरी, 94,600,000 मील है, (जब यह सूर्योच्च बिन्दु पर होता है)। इसका द्रव्यमान लगभग 6×10^{21} टन है तथा इसका औसत घनत्व पानी की अपेक्षा 5.52 गुणा है। इसके वातावरण में मुख्य गैसें हैं--नाइट्रोजन (77.6%) तथा आक्सीजन (20.7%) पृथ्वी पूर्णतः गोल नहीं है वरन् दोनों ध्रुवों पर थोड़ी चपटी है। विषुवत रेखा पर इसका व्यास 7,926 मील है तथा दोनों ध्रुवों से गुजरने वाला व्यास 7,900 मील है।

पृथ्वी के विभिन्न भागों पर एक अंश अक्षांश का समतुल्य दूरी इस प्रकार है--

विषुवत रेखा पर - 68.704 मील प्रति अंश

20° अक्षांश रेखा पर - 68.784 मील प्रति अंश

40° अक्षांश को रेखा पर - 68.993 मील प्रति अंश

60° अक्षांश पर - 69.230 मील प्रति अंश

80° अक्षांश पर - 69.386 मील प्रति अंश

विषुवत् रेखा पर एक अंश से बना चाप = 69.17 मील

= 60 नाटिकल मील (समुद्री मील) है।

पृथ्वी सूर्य के चारों ओर लगभग वृत्ताकार पथ पर लगभग 365 1/4 दिनों में एक परिक्रमा करती है।

पृथ्वी अपनी धुरी पर पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर घूमती है जिससे दिन और रात होता है तथा सूर्य तथा सभी तारे पूर्व से पश्चिम की ओर जाते दिखाई पड़ते हैं। पृथ्वी की धुरी (अक्ष), विषुवत् रेखा पर लम्ब है। इस अक्ष का एक छोर उत्तरी ध्रुव तथा दूसरा छोर दक्षिणी ध्रुव है। उत्तरी ध्रुव की सीध में ध्रुव तारा है।

पृथ्वी पर प्रेक्षक के स्थान में परिवर्तन के कारण : आकाश में दृष्टिगोचर होने में परिवर्तन–जब प्रेक्षक विषुवत् रेखा पर है तो वहां पर क्षितिज वह बड़ा वृत्त होगा जो उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुवों से होकर गुजरेगा अर्थात् दोनों ध्रुव क्षितिज पर आमने-सामने होंगे। यदि प्रेक्षक भूमख्य रेखा से ध्रुवतारा को देखना चाहेगा तो वह मात्र क्षितिज की उत्तरी दिशा में देख सकता है अर्थात् उस बिन्दु पर जहां पृथ्वी और आकाश मिलते हुए दिखाई देते हैं (चित्र 8 देखें) जब प्रेक्षक उत्तर की ओर चलना आरंभ करता है तो ध्रुवतारा क्रमशः आकश में ऊपर उठता चला जाएगा। इसे चित्र 9 में देखा जा सकता है।

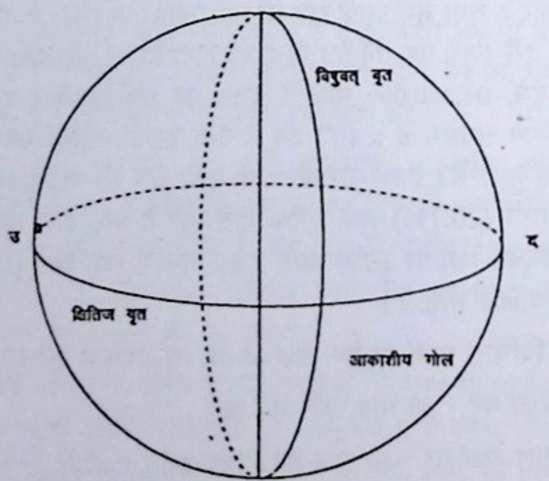

चित्र 8

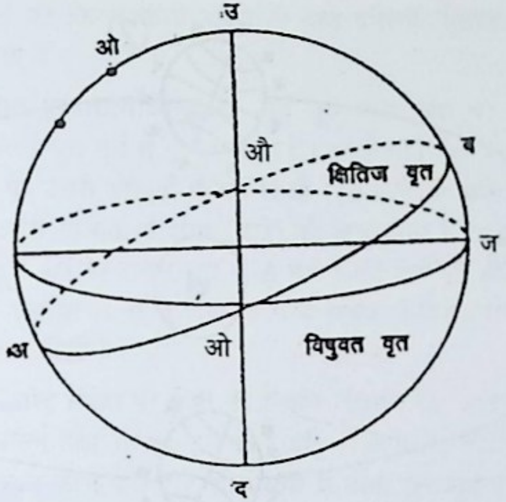

चित्र 9

प्रेक्षक ओ बिन्दु पर होगा तो क्षितिज अ ब दीर्घ वृत्त होगा और ध्रुवतारा क्षितिज से उतनी डिग्री ऊपर आकाश में होगा जितना उस स्थान का पृथ्वी पर अक्षांश है। उत्तर की ओर जाते हुए ध्रुवतारा आकाश में ऊपर चढ़ता जाएगा और जब प्रेक्षक उत्तरी ध्रुव में पहुंच जाएगा तो ध्रुवतारा ठीक सिर के ऊपर अर्थात् शिरोबिन्दु (zenith) पर होगा और उसका क्षितिज खगोलीय विषुवत् वृत्त ही होगा। इसके विपरीत जब प्रेक्षक विषुवत् रेखा से दक्षिण की ओर चलेगा तो ध्रुवतारा क्षितिज से नीचे चला जाएगा अर्थात् प्रेक्षक को दिखाई नहीं पड़ेगा। चित्र सं 9 से हमें यह भी ज्ञात होगा कि एक समय में प्रेक्षक आकाश का आधा हिस्सा देखता है जो क्षितिज के ऊपर है तथा आधा हिस्सा नहीं दिखाई पड़ता जो क्षितिज के नीचे है।

क्रांति में परिवर्तन–जब सूर्य या कोई ग्रह ओ पर है तब क्रांति-शून्य होगी। जब 'ब' पर होगा तब ब ज के कोण जितनी होगी।

ऋतुओं का होना–पृथ्वी की कक्षा-तल (Plane of orbit) पर पृथ्वी का अक्ष (Axis) या धुरी हमेशा झुकी रहने के कारण पृथ्वी पर ऋतुएं बदलती हैं। कक्षा तल पर लम्ब खींचा जाय तो पृथ्वी का अक्ष उस लम्ब से लगभग 23°27' का कोण बनता है। पृथ्वी के अक्ष का कक्षा पर झुकाव 90°-23°27'=66°33' होगा।

पृथ्वी सूर्य के चारों ओर एक चक्कर (परिक्रमा) एक वर्ष या 365.2422 दिन में पूरा करती है जिसे एक सायन वर्ष भी कहते हैं।

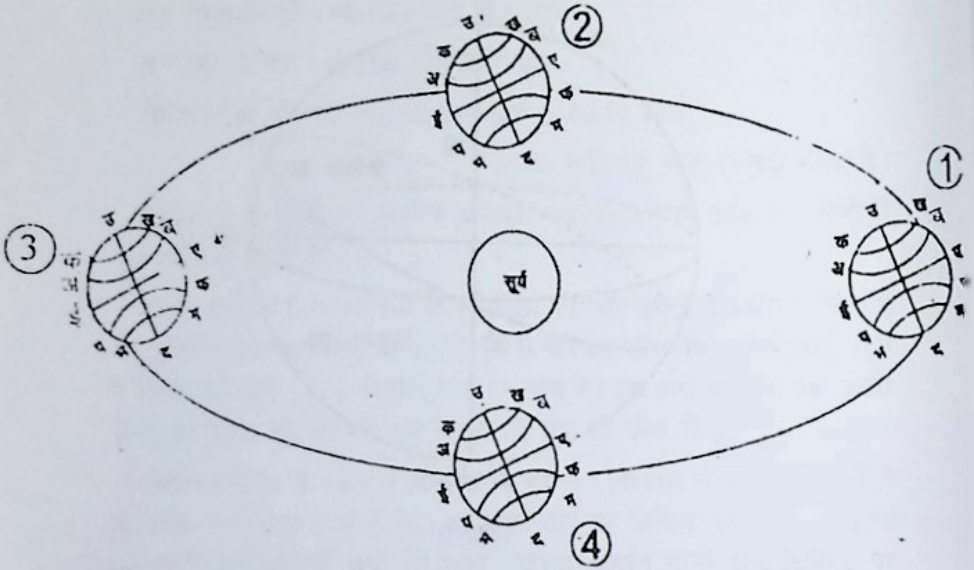

चित्र 9 अ

चित्र 9 अ में पृथ्वी को सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करता हुआ दिखाया गया है। ई ए विपुवत् रेखा है, अ ब तथा प फ क्रमशः कर्क और मकर रेखाएं हैं। क ख तथा भ म क्रमशः आर्कटिक तथा अंटार्कटिक वृत्त है। उ तथा द क्रमशः पृथ्वी के उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुव है उ द पृथ्वी का अक्ष या धुरी है जो क्रांति वृत्त (पृथ्वी की कक्षा का तल) पर 66°33' का कोण बनाते हुए झुकी हुई है। इस कागज को जिस पर चित्र बना है–क्रांतिवृत्त का तल मान लें। उ द (पृथ्वी का अक्ष) इस तल पर दिखाये गये चारों स्थिति में 66°33' के कोण पर झुकी है।

स्थिति (1) में पृथ्वी ग्रीष्म संपात पर है। यहां से सूर्य दक्षिण में जाना शुरू करता है। यहां पर उत्तरी ध्रुव का झुकाव सूर्य की ओर है तथा सूर्य कर्क रेखा पर ठीक 90° का कोण बनाता है अर्थात् सूर्य यहां पर लम्बवत् चमकता है तथा दक्षिणी ध्रुव पर सूर्य की किरणें नहीं पड़ रही है। इस स्थिति में उत्तरी ध्रुव पर सूर्य लगातार दिखाई पडेगा अर्थात दिन होगा तथा दक्षिणी ध्रुव पर लगातार अन्धकार (या रात) होगी। उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुवों पर 6-6 महीने के दिन तथा रात होते हैं। स्थिति (i) जो 21 जून को होती है उस समय उत्तरी ध्रुव के 6 महीने के दिन का मध्य समय है तथा दक्षिणी ध्रुव के 6 महीने की रात का मध्य समय है। इस स्थिति में उत्तरी गोलार्द्ध में सूर्य दिन में 12 घंटे से ज्यादा क्षितिज के ऊपर होता है तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में 12 घण्टे से कम। उत्तरी गोलार्द्ध में गर्मी का मौसम

होता है (क्योंकि सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं) तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में शीत (जाड़े) का समय होता है।

पृथ्वी शिशिर संपात (उत्तरायण विन्दु) पर–जब सूर्य मकर रेखा पर 90° का कोण बनाता है तो उत्तरी ध्रुव सूर्य से दूर हो जाता है। यह स्थिति (3), (1) स्थिति के विपरीत है। यहां पर उत्तरी गोलार्द्ध में रातें लम्बी (12 घण्टे से अधिक) होती हे और दिन छोटे। उत्तरी गोलार्द्ध में शीत (जाड़े) की ऋतु होती है तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में ग्रीष्म ऋतु। यहां पर उत्तरी ध्रुव के 6 महीने की रात का मध्य समय होता है तथा दक्षिणी ध्रुव पर 6 महीने दिन का मध्य समय होता है। यह स्थिति 22 दिसम्बर के लगभग होती है।

वसंत संताप तथा शरद् संपात पर पृथ्वी की स्थिति–स्थिति (4) तथा (2) पर पृथ्वी क्रमशः वसंत संपात् तथा शरद संपात् की स्थिति में होती है। यहां पर सूर्य, विषुवत् रेखा पर लम्बवत् कोण बनाता है और पृथ्वी के दोनों ध्रुव सूर्य से बराबर (कोणीय) दूरी पर होते हैं। ये संपात क्रमशः 21 मार्च तथा 23 सितम्बर के लगभग होते हैं। इस दिन पृथ्वी पर सभी जगह दिन और रात बराबर होते हैं।

स्थिति (1) में पृथ्वी सूर्य से अधिकतम दूरी पर है (जिसे सूर्योच्च (Aphelion) बिन्दु भी कहते हैं। और उत्तरी ध्रुव सूर्य की ओर झुका हुआ है जबकि दक्षिणी ध्रुव सूर्य से दूर है। स्थिति (3) में इसके विपरीत है अर्थात् उत्तरी ध्रुव सूर्य से दूर तथा दक्षिणी ध्रुव सूर्य के नजदीक आ जाता है। ऋतुएं सूर्य से पृथ्वी की दूरी के कारण नहीं बदलती बल्कि इनके दो मुख्य कारण हैं–(1) गर्मी की ऋतु में, शीत ऋतु की अपेक्षा, सूर्य क्षितिज के ऊपर अधिक समय तक रहता है। दूसरे शब्दों में गर्मी की ऋतु में दिन बड़ा होता है, रात छोटी। शीत ऋतु (जाड़े) में इसके विपरीत दिन छोटे होते हैं और रातें बड़ी। (2) गर्मी की ऋतु में सूर्य, जाड़े के मुकाबले ज्यादा सीध ा चमकता है सूर्य की किरणें पृथ्वी पर जाड़ों में तिरछी पड़ती है और गर्मियों में ज्यादा सीधी (straight)। इसे चित्र में इस प्रकार दिखाया जा सकता है।

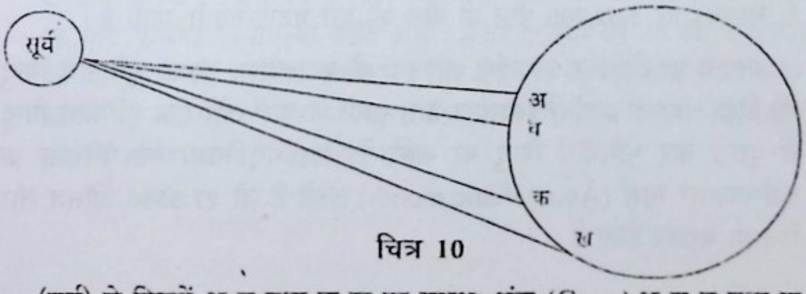

चित्र 10

(सूर्य) से किरणें अ ब तथा क ख पर क्रमशः शंकु (Cone) अ सू ब तथा क

सू ख बनाती हुई पड रही है। कोण अ सू ब बराबर हैं कोण क सू ख के। चूंकि अ ब सूर्य से सीध में (straight) है अतः अ ब की लम्बाई क ख जो सू से तिरछा है, से कम होगी। दोनों स्थितियों में कोण बराबर होने से सूर्य का ताप बराबर होगा परन्तु अ ब के क ख से छोटाहोने के कारण ताप की मात्रा प्रति इकाई क्षेत्रफल अ ब पर ज्यादा होगी और क ख पर प्रति इकाई क्षेत्रफल पर कम होगी। इसलिए अ ब, क ख से ज्यादा गर्म हो जाएगा।

चन्द्रमा–पृथ्वी का एकमात्र उपग्रह चन्द्रमा है। आकाशीय पिंडों में सूर्य के बाद, चन्द्रमा का महत्वपूर्ण स्थान है। अन्य ग्रहों या तारों की तरह चन्द्रमा की भी दैनिक गति पूर्व से पश्चिम है। ऐसा पृथ्वी के अपनी धुरी पर पश्चिम से पूर्व की ओर घूमने के कारण ही होता है। सूर्य एवं अन्य ग्रहों की तरह चन्द्रमा भी तारों के बीच पश्चिम से पूर्व की ओर गमन करता है। यह नक्षत्र मंडल में एक पूर्ण चक्र लगभग 27 दिन 7 घण्टे एवं 43 मिनट में लगाता है जो कि औसत सौर 27.3217 दिन के बराबर हैं। इसे एक नक्षत्र मास कहते हैं अर्थात जितने समय में, पृथ्वी से देखने पर चन्द्रमा नक्षत्र मंडल में एक पूर्ण चक्र लगाता है, जिसका औसत परिमाण 27. 3217 औसत सौर दिन है।

एक अमावस्या से दूसरे अमावस्या तक के समय को एक संयुति मास कहते (Synodic month) हैं जो 29.5305887 औसत सौर दिन के बराबर होता है। यह नक्षत्र मास से अधिक है, क्योंकि जब तक चन्द्रमा पृथ्वी की एक परिक्रमा पूरी करता है सूर्य भी लगभग एक राशि आगे चला जाता है और चन्द्रमा को सूर्य के पास दुबारा आने व युति करने में कुछ और समय चाहिए।

यदि चन्द्रमा पर केवल पृथ्वी की आकर्षण शक्ति का प्रभाव कार्य करता तो चन्द्रमा का कक्ष (orbit) अंडाकार (Ellipse) ही होना चाहिए था परन्तु इस पर सूर्य की आकर्षण शक्ति का ही प्रभाव नहीं पड़ता वरन् अन्य ग्रहों का भी पड़ता है और इसीलिए इसकी कक्षा के आकार में बहुत परिवर्तन हो जाता है। चन्द्रमा की पृथ्वी से औसत दूरी 2,39,000 मील है जो कि भूमि नीच पर 2,21,460 मील से भुम्युच्च पर 2,52,700 मील के बीच की दूरी घटती-बढ़ती रहती है।

चन्द्रमा पर विभिन्न आकर्षण शक्तियों के फलस्वरूप, इसका भूमिनीच बिन्दु की दिशा बदलती रहती है। चन्द्रमा द्वारा पृथ्वी के चारों ओर एक भूमिनीच बिन्दु से दूसरी बार भूमिनीच बिन्दु पर आने में लिए गए समय को परिमास या कोणिकान्तर मास (Anomalistic month) कहते हैं जो 27.5546 औसत सौर दिन के बराबर होता है।

चन्द्रमा के एक चढ़ते पात से दूसरे चढते पात तक की स्थिति में आने के लिए गये समय को एक पात मास (nodal month) कहते हैं जो 27.2122 औसत सौर दिन के बराबर होता है। चन्द्रमा पृथ्वी के चारों ओर जो 'क्रक्षा बनाती है, वह क्रांतिवृत्त से 5°15' तक का कोण बनाती है। अर्थात् चन्द्रमा क्रांतिवृत्त से अधिक से अधिक 5°15' के उत्तरी या दक्षिणी विक्षेप या शर (latitude) पर रहेगा।

चन्द्रमा का आभासीय व्यास 29'22" से 33'31" के बीच बदलता रहता है। औसत व्यास 31'½ लगभग है। इससे प्रकाश किरणों का परावर्तन का प्रतिशत बहुत कम यानि 7% ही है। अर्थात् इस पर पड़ने वाले प्रकाश की केवल 7% मात्रा ही परावर्तित होता है। इसका गुरुत्वाकर्षण पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण का मात्र 1/6 है।

चन्द्रमा का हमेशा एक ही भाग पृथ्वी के सामने होता है क्योंकि यह अपनी धुरी पर उतने ही समय में एक बार घूमता है जितने समय में यह पृथ्वी का एक पूरा चक्कर लगाता है। हम चन्द्रमा के केवल 59% भाग को देख पाते हैं।

चन्द्रमा पर मानव ने सर्वप्रथम कदम जुलाई 1969 में रखा जब श्री नील आर्मस्ट्रांग नामक व्यक्ति ने अन्तरिक्षयान 'इगल' से बाहर निकल कर चन्द्रमा की धरती पर पैर रखा था।

चन्द्रमा का चक्र–मिटन ने 433 B.C. में यह खोज किया था कि प्रत्येक 19 सौर वर्ष में 235 चन्द्रमास होते हैं। क्योंकि

365.25 × 19 = 6939.75 दिन (19 वर्ष में)

29.5305887 × 235 =6939.688 दिन (235 चन्द्र मास)

इसका अर्थ है कि प्रत्येक 19 वर्ष बाद चन्द्रमा प्रतिदिन वैसी ही स्थितियों से गुजरेगा जिनसे वह 19 वर्ष पहले गुजरा था। अन्तर केवल यह होगा कि ऐसा पहले से एक घण्टा पूर्व ही हो जाया करेगा। इसे मैटोनिक चक्र (Meteonic Cycle) कहते हैं। इस प्रकार विना अधिक गणना किए यह जाना जा सकता है *कि कब पूर्णिमा, अमावस्या आदि होगी। हमारे ऋपियों को 19 वर्ष के इस चक्र की जानकारी थी, इसीलिए प्रत्येक 19 सौर वर्ष में 7 अधिक मास (चन्द्रमास) को जोड़ने की व्यवस्था की गई थी जिससे कि सौर वर्ष तथा चन्द्र वर्ष (12 चन्द्रमासों का) में साम्य स्थापित किया जा सके।*

अध्याय 4

सौर मंडल : सामान्य परिचय (अनुक्रम में)

पाठ 3 में हमने पढ़ा कि सभी ग्रह, सूर्य के चारों और अंडाकार (दीर्घवृत्ताकार) कक्षा में भ्रमण कर रहे हैं तथा सूर्य, दीर्घवृत्त की एक नाभि (focus) पर स्थित है।

यद्यपि अन्तरिक्ष में कोई दिशा नहीं है सभी दिशाएं सापेक्षिक हैं। मान लें कि हम एक टेबल पंखे के समक्ष खड़े हों और पंखे की गति घड़ी की दिशा में है तो यदि हम पंखे के दूसरी ओर चले जाएंगे तो वही पंखा घड़ी के विपरीत दिशा में घूमता नजर आयेगा। इसीलिए दिशाओं का ज्ञान सापेक्षिक है। हम यह मानकर चलते हैं कि सभी ग्रह पश्चिम से पूर्व की दिशा (घड़ी की विपरीत दिशा में) चलते हैं।

आन्तरिक ग्रहों के संबंध में जब ये पृथ्वी और सूर्य के बीच में आते हैं तो इसे हम ग्रहों की निकृष्ट युति कहते हैं। तथा जब सूर्य, ग्रह एवं पृथ्वी के बीच में एक सीध में आ जाता है तो उसे बहिर्युति कहते हैं।

वाह्य ग्रहों के संबंध में, जब पृथ्वी सूर्य और ग्रहों के बीच में आ जाती है तो इसे विपरीत युति (opposition) कहते हैं। वाह्य ग्रह कभी भी पृथ्वी और सूर्य के बीच में नहीं आ सकते इसलिए वाह्य ग्रहों की कभी अन्तर्युति नहीं होती। जब ये ग्रह सूर्य की दूसरी ओर काफी दूरी पर एक सीध में आ जाते हैं तो वहिर्युति होती है।

बुध–सूर्य से दूरी के अनुसार, बुध पहला ग्रह है, अर्थात् यह सूर्य के निकटतम स्थित है। पहले यह समझा जाता था कि बुध 88 दिनों में अपनी धुरी पर घूमता है जो कि बुध का सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करने का भी समय हैं किन्तु बाद में पता लगा है कि बुध वास्तव में 58.65 दिनों में अपनी धुरी पर परिभ्रमण

(rotation) पूरा करता है जो बुध वर्ष का लगभग दो तिहाई है। एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय का अन्तराल 176 पृथ्वी के दिन होगा अर्थात दो बुध वर्ष। बुध की परिक्रमा करने की कक्षा (orbit) अन्य ग्रहों की कक्षाओं के मुकाबले (प्लूटो को छोडकर) अधिक उत्केन्द्रक (eccentric) है। इसकी सूर्य से अधिकतम दूरी 43,000,00 मील है तथा निकटतम दूरी 28,000,000 है। जोकि इसकी कक्षा के अधिक उत्केन्द्रक होने के कारण है। बुध की कक्षा, क्रांतिवृत्त के दोनों ओर अधिकतम 7° का कोण बनाते हुए झुकी हुई है। इसका व्यास लगभग 3000 मील है।

शुक्र–बुध के बाद शुक्र, सूर्य से निकटतम ग्रह है। इसकी कक्षा (orbit) क्रांतिवृत्त के दोनो और अधिकतम 3°24' का कोण बनाते हुए झुकी है। यह अन्य ग्रहों/तारों से ज्यादा प्रकाशमान दिखाई पड़ता है तथा कई बार इसकी छाया भी पड़ती है। इसकी सूर्य से औसत दूरी लगभग 670 लाख मील है और इसका व्यास लगभग 7,500 मील है।

बुध एवं शुक्र आन्तरिक या अन्तः ग्रह है जो हमेशा सूर्य के आस-पास ही उसके पश्चिम या पूर्व की दिशा में दिखाई पड़ते हैं। इन्हें भोर का तारा या शाम का तारा भी कहते हैं क्योंकि ये दोनों ग्रह अधिकतर सूर्यास्त के बाद या सूर्योदय से पहले दिखाई पड़ते हैं। इसका नक्षत्र परिक्रमा अवधि (sidereal period) 224.7 दिन है तथा संयुति काल (Synodic period) 584 दिन है।

मंगल–सूर्य से दूरी के अनुसार यह चौथा ग्रह है तथा पृथ्वी के बाद निकटतम वाह्य ग्रह है। इसकी सूर्य से दूरी 127000,000 मील से लेकर 153000,000 मील के बीच रहती है। इसका व्यास 4,200 मील है। जब मंगल हमारे समीपस्थ होता है तो यह पृथ्वी से 350 लाख मील के अन्दर होता है, तथा ऐसा तब होता है जब मंगल सूर्य से निकटतम होता है तथा पृथ्वी सूर्य से अधिकतम दूरी पर होती है। इस स्थिति में मंगल शुक्र को छोड़कर बाकी ग्रहों से अधिक प्रकाश वाला दिखाई पड़ता है। परन्तु जब यह धुंधला दिखाई पड़ता है (अधिक दूरी पर होने के कारण) तो यह एक तारा होने का भ्रम पैदा करता है। जब यह सूर्य से 90° दूरी पर होता हे तो उभरता हुआ दिखाई देता है। इसका नक्षत्र परिक्रमा अवधि (Sidereal period of revolution) 687 दिन तथा संयुति काल (Synodic period) 780 दिन है।

मंगल के दो उपग्रह हैं जिनके नाम हैं, डिमॉस और फोबोस। इनका पता 5 सितम्बर 1877 को लगा था जब मंगल सूर्य से (opposition) विपरीत युति में आया था।

बृहस्पति (गुरु)–बृहस्पति सभी ग्रहों में बड़ा है तथा अन्य सभी ग्रहों को मिलाकर भी उनसे विशाल है। इसका द्रव्यमान सूर्य के द्रव्यमान से 1/1047 है। चूंकि यह ध्रुवों पर थोड़ा चिपटा है, इसका विषुवतीय व्यास 88,000 मील से कुछ ऊपर है और ध्रुवीय व्यास 84,000 मील से कुछ कम। इसकी सूर्य से औसत दूरी 4833 लाख मील है। इसका नक्षत्र परिक्रमा अवधि 11.9 वर्ष है।

इसका विम्ब पीला दिखाई पड़ता है जिसको चारों ओर बादलों का घेरा है।

शनि–यह सूर्य से दूरी के अनुसार छठा ग्रह है। इसकी सूर्य से औसत दूरी 8860 लाख मील है तथा इसका व्यास लगभग 74,000 मील है। इसका घनत्व पानी से कम है। यह आकार में वहुत बड़ा है और इसका द्रव्यमान (बृहस्पति को छोड़कर) अन्य ग्रहों से अधिक है। इसका परिक्रमा-पथ (या कक्षा) लगभग वृत्ताकार है और क्रांतिवृत्त से लगभग 2°½ का कोण बनाता है। इसके चारों और गोलाकार वृत्त (वलय) है जो ग्रह को नही छूते। पहले इसके 9 उपग्रह ज्ञात थे, परन्तु अव 20 उपग्रहों का पता लगा है। इसका नक्षत्र परिक्रमा अवधि 29.5 वर्ष है। इसका संयुति काल 378 दिन है।

अरुण (Uranus)–इसकी खोज विलियम हर्शल ने मार्च 1781 में की थी। इसे खोजकर्ता के नाम पर 'हर्शल' भी कहा जाता है। इसके पांच उपग्रहों की खोज अब तक हुई है। यह बहुत दूरी पर है। इसकी दूरी लगभग 17830 लाख मील है तथा इसका व्यास लगभग 32,000 मील है। यह नंगी आंखों से दिखाई नहीं पड़ता और इसका प्रकाश वहुत मन्द है।

वरुण (Neptune)–लेवेरियर तथा एडम्स द्वारा की गई गणनाओं के आधार पर सन् 1846 में बर्लिन वेधशाला के सर्व श्री जे. गॉले तथा एच.डी. अरेस्ट द्वारा इसकी खोज की गई थी। इसकी दूरी 27930 लाख मील तथा इसका नक्षत्र-परिक्रमा अवधि 164.8 वर्ष है। इसकी चमक यूरेनस से भी वहुत कम है और यह बहुत धीमा प्रकाश देता है।

यम (प्लूटो) (Pluto)–1930 में नवें ग्रह के रूप में इसकी खोज क्लाईड टॉमवाग ने की थी। इसका परिक्रमा पथ (कक्षा) अन्य ग्रहों से अधिक उत्केन्द्रक है। यह 248 वर्ष के परिक्रमा अवधि में अधिक समय तक नेपचून (वरूण) से अधिक दूरी पर होता है जब यह सूर्य से निकटतम दूरी पर होता है तो यह वरूण से कम दूरी पर आ जाता है। इसकी सूर्य से औसत दूरी 36670 लाख मील है। और व्यास मात्र 1800 मील है। इसका प्रकाश वहुत ही मद्धिम हैं

धुमकेतु–धुमकेतु की भौतिक अवस्था एवं सूर्य के चारों और भ्रमण पथ (orbit) दोनों में अन्य ग्रहों की तुलना में काफी अन्तर है। धुमकेतु साधारणतया एक अति चमकीला नाभि के रूप में होता है जो कोहरेदार पदार्थों से बहुत दूर पर एक पूंछ के आकार में घिरा होता है। सभी धुमकेतुओं के पूंछ नहीं होती और अधिकांश तो आकाश में छोटे-छोटे कुहासों के पुंज मात्र होते हैं। सूर्य की किरणोंको परावर्तित करने के कारण यह चमकीले दिखाई पड़ते हैं।

धुमकेतु का द्रव्यमान एवं घनत्व बहुत कम होते हैं तथा इन्हें ग्रह बहुत जल्दी प्रभावित कर लेते हैं। ये आकाश में अचानक दिखाई पड़ने लगते हैं तथा कुछ ही दिन, सप्ताह या महीने तक दिखाई देते हैं और जब ये सूर्य के निकट पहुंच जाते हैं तो लुप्त हो जाते हैं।

जिन धुमकेतुओं की गतियों की गणना की जा सकती है तथा जिनके पुनः वापस आने की तिथि की भविष्यवाणी की जा सकती है उन्हें परिक्रमाणिक या सावधिक (periodic) धूमकेतु कहते हैं। कुछ धुमकेतु की गति सीधी तथा कुछ की वक्री होती है। यह याद रहे कि सूर्य के चारों ओर सभी ग्रह एक ही दिशा में घूमते हैं अर्थात् यदि सूर्य से देखा जाए तो सीधी गति।

सावधिक धुमकेतुओं में हेली का धुमकेतु तथा एन्के का धूमकेतु प्रमुख हैं।

हेली का धुमकेतु–हेली के धुमकेतु को सर्वप्रथम सन् 1531 में देखा गया। इसके बाद इसे सन् 1607, 1682, 1758-59, 1835, 1910 तथा अन्त में 9 फरवरी 1986 को देखा गया। हम देख रहे हैं कि इस धुमकेतु के पुनः दिखाई पड़ने की अवधि 76 वर्ष है। यह अगली बार 2061 में दिखाई पड़ेगा, ऐसा अनुमान है।

एन्के का धुमकेतु–इसके पुनः आगमन की अवधि 3.3 वर्ष है। जब यह सूर्य के निकटतम आता है तो बुध से भी कम दूरी होती है और सूर्य से दूर हो जाता है तो इसकी दूरी, सूर्य से पृथ्वी की दूरी के चार गुणी से भी अधिक होती है।

अनावधिक धुमकेतु–ऐसे अनावधिक धुमकेतुओं की संख्या सावधिक धुमकेतुओं की अपेक्षा बहुत अधिक है। ये आकाश में एक बार देखे जाते हैं और फिर लुप्त हो जाते हैं और कभी लौटकर नहीं आते।

लघु ग्रह या ग्रहिका–लघु ग्रहों के व्यास बहुत छोटे हैं तथा इनमें सबसे बड़े आकार की गृहिका का व्यास 623 मील है। इनकी कक्षाएं बहुत ही उत्केन्द्रिक हैं। लघु ग्रहों की संख्या काफी अधिक है और अनुमान है कि 40,000 के लगभग ऐसे लघु ग्रह सौरमंडल में है। इनका द्रव्यमान कम होने के कारण इनके पलायन-वेग भी कम होंगे। मंगल और बृहस्पति ग्रहों के बीच में इन लघु ग्रहों की अपनी

अलग-अलग कक्षाएं हैं। इनकी कक्षाएं चूंकि बहुत ही उत्केन्द्रिक (eccentric) हैं अतः इनमें से कुछ लघुग्रह कभी पृथ्वी की कक्षा के भीतर तो आ ही जाते हैं, कभी-कभी आंतरिक ग्रहों (बुध-शुक्र) की कक्षाओं के पास भी पहुंच जाते हैं।

उल्का (Meteors)–एक छोटा कण, साधारणतया एक बालू के कण से भी छोटा कण जो सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाता रहता है, उसे उल्का कहते हैं। चूंकि ये बहुत छोटे होते हैं इन्हें अन्तरिक्ष में देखा नहीं जा सकता। परन्तु जब कभी पृथ्वी के वायुमंडल के भीतर आ जाते हैं तो घर्षण के कारण काफी गर्म हो जाते हैं। फलस्वरूप एक तीव्र चमक के साथ इनका अन्त हो जाता है। इनकी तीव्र चमक के कारण इन्हें दागने वाले तारे (Shooting Stars) भी कहते हैं।

उल्कापिंड (Meteorites)–ये कुछ बड़े आकार एवं पत्थर जैसे टुकड़ों वाले उल्का है, जो पृथ्वी के वायुमंडल में पूरी तरह जल नहीं पाते तथा पृथ्वी पर गिरकर एक बहुत बड़ा गड्ढा बनाते हैं या पृथ्वी के भीतर घुस जाते हैं।

केपलर के नियम (Keplers Laws)–जिन नियमों के अधीन ग्रह, सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करते हैं, उनकी खोज जॉन केपलर (1517-1630) ने की थी। ये नियम इस प्रकार है–

I. प्रत्येक ग्रह एक दीर्घवृत्ताकार कक्षा में भ्रमण करता है तथा सूर्य इसके एक नाभि (Focus) पर होता है।

II. सूर्य और ग्रह को मिलाने से जो रेखा बनती है वह बराबर समय में बराबर क्षेत्रफल को आच्छादित करती है।

III. ग्रहों की सावधिक समयों के वर्ग आपस में वही अनुपात रखते हैं जो उनकी सूर्य से औसत दूरी के घन का अनुपात होता है।

यद्यपि केपलर के तीन नियम यहां लिखे गये हैं इनका कोई उपयोग हमारी पुस्तक में नहीं किया जाएगा।

सप्ताह के दिनों में नामकरण की योजना–भारतीय ज्योतिष में दिन एवं रात को 24 बराबर भागों में बांटा गया है जिन्हें होरा कहते हैं। एक होरा एक घन्टे के बराबर होता है। दिन का नाम उस दिन के प्रथम होरा के स्वामी के आधार पर रखा गया है। होरा के स्वामी, ग्रहों के आधार पर है। अब यह पद्धति देखिए।

श्री महावीर प्रसाद श्रीवास्तव द्वारा लिखित 'सूर्य सिद्धान्त' की टीका (दूसरा संस्करण) के अध्याय XII (भूगोल अध्याय) का 31वां श्लोक इस प्रकार है–

मन्दामरेज्य भूपुत्र सूर्य शुक्रेन्दुजेन्दवः

परिभ्रमन्त्यधोऽधस्तात्सिद्ध विद्याधरा घनाः।।31।।

इसके अनुसार पृथ्वी के चारों ओर सभी ग्रहों का परिभ्रमण कक्षा इस क्रम में है—शनि, बृहस्पति, मंगल, रवि (सूर्य), शुक्र, बुध एवं चन्द्रमा। एक वृत्त में इन ग्रहों को हम इसी क्रम में लिख लें।

यह क्रम वास्तव में इन ग्रहों के अवरोही नक्षत्र-अवधि तथा कोणीय गति के आरोही क्रम में है। इनमें शनि सबसे मन्दगति का ग्रह है तथा चन्द्रमा सबसे तेज।

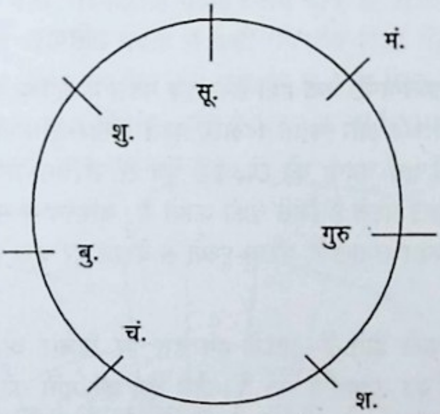

हम रविवार से प्रारंभ करें। रविवार को पहली होरा रवि अर्थात् सूर्य की होगी, दूसरी शुक्र की, तीसरी बुध, चौथी चन्द्रमा, पांचवीं शनि, छठी बृहस्पति तथा सातवीं मंगल की होरा होगी। इस प्रकार आठवीं होरा फिर सूर्य की होगी और यही क्रम दुहराया जाएगा। 15वीं होरा सूर्य की होगी, 22वीं होरा फिर सूर्य की होगी। 23वीं शुक्र, 24वीं बुध की तथा 25वीं होरा (जो अगले दिन की पहली होरा है) चन्द्रमा की होगी। इस प्रकार दूसरा दिन चन्द्रवार या सोमवार कहलाया। अब हम चन्द्रमा से प्रारंभ करेंगे—

होरा :	1	2	3	4	5	6	7	8	15	22	23	24	25
स्वामी :	चं.	शनि.	बृ.	मं.	र.	शु.	बु.	चं.	चं.	चं.	शनि	बृ.	मं

25वीं होरा अगले दिन की पहली होरा है अतः उस दिन का नाम क्रमशः मंगलवार हुआ। इसी प्रकार सप्ताह के बाकी दिनों के नाम बुधवार, बृहस्पतिवार, शुक्रवार, शनिवार रखे गये। इसे हम निम्न सारणी में इस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं—

प्रथम होरा के स्वामी	दिन का नाम
रवि (सूर्य)	रविवार
सोम (चन्द्रमा)	सोमवार
मंगल	मंगलवार
बुध	बुधवार
बृहस्पति (गुरु)	बृहस्पतिवार (गुरुवार)
शुक्र	शुक्रवार
शनि	शनिवार

ग्रह वक्री (प्रतिगामी) क्यों होते हैं–नक्षत्र मंडल के नेपथ्य में सभी ग्रह सामान्यतः पश्चिम से पूर्व की ओर चलते दिखाई पड़ते हैं परन्तु कभी-कभी कुछ समय के लिए ग्रह (सूर्य एवं चंद्रमा को छोड़कर) पूर्व से पश्चिम अर्थात् विपरीत दिशा में चलते हुए दिखाई पड़ते हैं जिसे वक्री कहते हैं। वास्तव में सभी ग्रह एक ही दिशा में सूर्य का चक्कर लगाते हैं, परन्तु पृथ्वी से देखने पर कुछ ग्रह कभी वक्री दिखाई पड़ते हैं।

ग्रह क्यों वक्री होते हैं–आइये हम इस पर विचार करते हैं। सर्वप्रथम हम आन्तरिक ग्रह का उदाहरण लेते हैं। जैसे बुध की गति को देखें। सभी ग्रह और पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगा रहे हैं। बुध सूर्य के चारों ओर 88 दिनों में एक चक्कर लगा लेता है। पृथ्वी सूर्य से (बुध की अपेक्षा) ज्यादा दूरी पर है और सूर्य से चारों और 365¼ दिनों में एक चक्कर पूरा करती है। अतएव बुध की कोणीय गति पृथ्वी से ज्यादा है। चित्र 11 में बुध एवं पृथ्वी की गतियों को तीर के निशान से दिखाया गया है। भचक्र में तीर के निशान की दिशा में ग्रहों के भोगांश बढ़ते हैं।

चूंकि ग्रहों के भोगांश भू-केन्द्रीय मापे जाते हैं, हम मान लें कि पृथ्वी स्थिर है तथा बुध तीर की दिशा में सापेक्षिक गति (अर्थात् बुध की गति-पृथ्वी की गति) से चल रहा है। मान लिया दर्शक 'अ' पर स्थित है। चूंकि पृथ्वी को स्थिर माना गया है 'अ' स्थिर है। मान लिया बुध 'क' बिन्दुपर है और भचक्र में 'क', पर दिखाई पड़ रहा है। जब बुध 'ख' पर पहुंचता है, यह भचक्र में 'ख', पर दिखाई पड़ेगा। इसी प्रकार बुध जब 'ग' एवं 'घ' पर होगा तो वह भचक्र में क्रमशः 'ग', एवं 'घ', बिन्दुओं पर दिखाई पड़ेगा। यहां पर बुध का भोगांश बढ़ रहा है अर्थात् गति मार्गी है। जब बुध 'च' पर आ जाता है तो भोगांश 'च', पर है। बुध की

कक्षा पृथ्वी (अ) से 'अ' 'च' 'च', रेखा स्पर्श-रेखा है। च बिन्दु पर बुध कुछ देर के लिए स्थिर दिखाई पड़ेगा, क्योंकि यहां से बुध की वक्री गति प्रारंभ होती है। इस स्थिति को हम इस प्रकार समझ सकते हैं; जैसे एक लड़का सीधा दौड़ता एक खम्भे या दीवार को छूकर वापस दौड़ना शुरू करता है तो कुछ देर के लिए उसकी गति, दिशा वदलने के क्रम में शून्य सी हो जाती है। इसी प्रकार च बिन्दु पर ग्रह स्थिर सा हो जाता है। अब वुध क्रमशः छ, ज, झ एवं ट बिन्दुओं से जब गुजरेगा तो वह अ से देखने पर भचक्र में क्रमशः छ, , जं, , झ, तथा ट, बिन्दुओं पर दिखाई पड़ेगा। जब वुध ट बिन्दु (जो अ से वुध की कक्षा पर स्पर्श रेखा बनाता है) पर पहुंचेगा तो वह भचक्र में ठ, पर दिखाई पड़ेगा। अब चूंकि छ, से ठ, तक क्रमशः भोगांश कम हो रहे हैं अब बुध भचक्र में वक्री (विपरीत दिशा में) गमन करता हुआ दिखाई पड़ेगा। ठ, बिन्दु पर फिर बुध कुछ देर के लिए स्थिर दिखाई पड़ेगा और बाद में मार्गी (बढ़ता हुआ भोगांश) गति से भ्रमण करता दिखाई पड़ेगा। इसी प्रकार शुक्र की गति मार्गी तथा वक्री होगा।

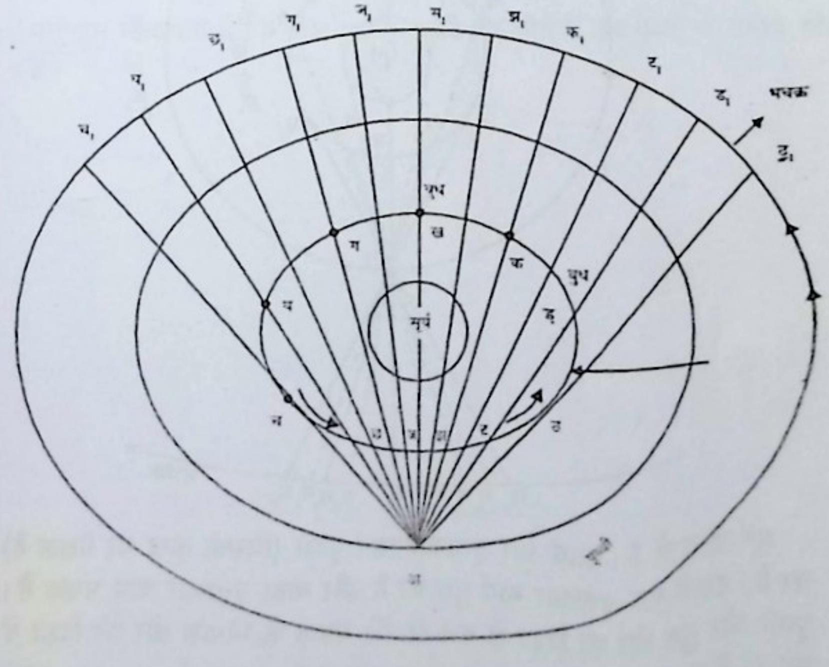

चित्र 11

हम यह देखते हैं कि आन्तरिक ग्रह (बुध एवं शुक्र) जब पृथ्वी एवं सूर्य के मध्य होते हैं तो वक्री होते हैं। और वाह्य ग्रह (मंगल, बृहस्पति एवं शनि) वक्री होते हैं जब पृथ्वी उस बाह्य ग्रह एवं सूर्य के मध्य में आती है। अर्थात् दोनों स्थितियों में जब ग्रह पृथ्वी से निकटतम होता है तो वक्री होता है।

बाह्य ग्रहों का वक्री होना

इसमें हम गुरु (वृहस्पति) के वक्री होने का उदाहरण लेते हैं। गुरु सूर्य की परिक्रमा लगभग 12 वर्ष में करता है और पृथ्वी 1 वर्ष में। गुरु की कोणीय गति पृथ्वी से बारहवां भाग हुई। हम गुरु को स्थिर मानकर, पृथ्वी को इससे सम्बन्धित गति (Relative Motion) से चलता हुआ मानकर देखते हैं।

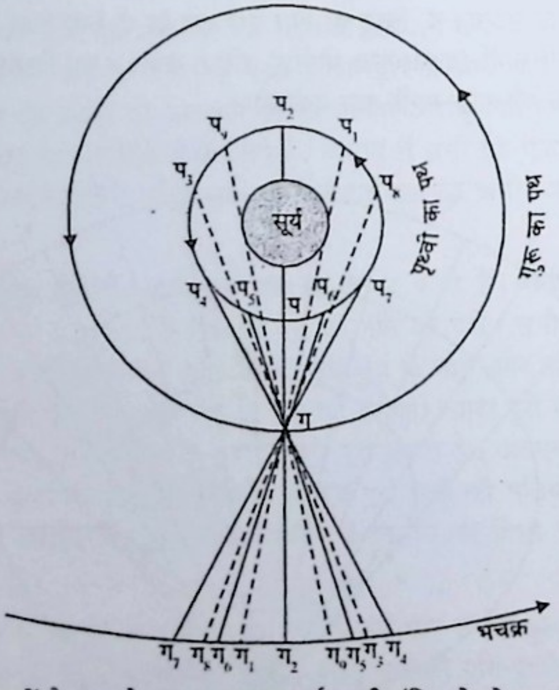

सूर्य केन्द्र में है। इसके पार वृत्ताकार मार्ग पृथ्वी (जिसके केन्द्र पर प्रेक्षक है) का है। इसके बाद वृत्ताकार मार्ग गुरु का है और वाहर वृत्ताकार चाप भचक्र है। पृथ्वी और गुरु तीर की दिशा में चल रहे हैं। भचक्र के भोगांश तीर की दिशा में बढ़ रहे हैं।

प्रेक्षक जब 'प$_1$' पर होता है और गुरु 'ग' पर स्थित है तब उसे गुरु ग$_1$ पर दिखाई देता है और गुरु के भोगांश ग$_1$ जितने हुए। जब प्रेक्षक प$_2$ पर हुआ तब गुरु के भोगांश ग$_2$ वाले हुए। इस समय सूर्य और गुरु दोनों के भोगांश समान हैं। यह रेखा पृथ्वी के पथ को प पर भी मिलती है। गुरु के भोगांश अधिक हो रहे हैं। इसी प्रकार प्रेक्षक जब प$_3$ और प$_4$ पर हुआ तब उसके भोगांश ग$_3$ और ग$_4$ वाले हुए और यह अधिक हो रहे हैं। मगर प$_4$ पृथ्वी के पथ पर स्पर्श-रेखा की स्थिति में है। इससे आगे पृथ्वी (प्रेक्षक) के चलने पर ग्रह वक्री हो जावेगा। जब प्रेक्षक प$_5$ प और प$_6$ पर हुआ तब गुरु के भोगांश ग$_5$ ग$_2$ और ग$_6$ जितने हुए, यह कम होते जा रहे हैं। रेखा प$_7$ ग ग$_7$ पृथ्वी के पथ पर स्पर्श रेखा है। प्रेक्षक के इससे आगे चलने पर ग्रह मार्गी हो जावेगा अर्थात् इसके भोगांश अधिक होते जावेंगे। प्रेक्षक के प$_8$ और प$_9$ पर होने की स्थिति में गुरु के भोगांश ग$_8$ और ग$_9$ जितने होंगे।

जब प्रेक्षक प पर होगा तब सूर्य और गुरु के भोगांशों का अन्तर 180° होगा अर्थात् विपरीत युति है। इस समय गुरु वक्रत्व के मध्य में होता है। इससे यह परिणाम निकलता है कि बाह्य ग्रह भी वक्री तब होते हैं जब पृथ्वी के समीप होते हैं।

अध्याय 5

संपात का अयन

सतत् अवलोकन द्वारा हमारे देश के ऋषियों ने यह पाया कि तारों के भोगांश बढ़ रहे हैं। बाद में, ग्रीक के खगोलज्ञ हिप्पारकस (190-120 B.C.) ने भी ऐसा ही देखा। उन्होंने इसके दो कारणों पर विचार किया। (1) तारे गति कर रहे हैं परन्तु सभी तारों की गतियां लगभग समान हैं—यह असम्भव प्रतीत हुआ इसलिए इसे नहीं माना गया। (2) मेष का प्रथम बिन्दु (जो क्रांति वृत्त तथा विषुवत् वृत्त का कटान बिन्दु भी है) अपने स्थान से पीछे खिसक रहा है। उन्होंने यह भी देखा कि तारों के विक्षेप या शर में कोई परिवर्तन नहीं होता। अतः वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि क्रांति वृत्त एक स्थिर तल है। अतः यह अनुमान लगाना आवश्यक हो गया कि विषुवत् वृत्त तथ मेष का प्रथम बिन्दु इस प्रकार अपने स्थान से हट रहे हैं कि तारों के भोगांश बढ़ रहे हैं। इससे यह स्पष्ट हो गया कि संपात बिन्दु पीछे खिसक रहा है। इसे संपात का **अयन** भी कहते हैं। संपात के **अयन** का मुख्य कारण पृथ्वी के विषुवत् रेखा पर उभरे हुए भागों पर सूर्य तथा चन्द्रमा के आकर्षण शक्तियों के प्रभाव हैं। परिणामतः पृथ्वी की एक अतिमद्धम डगमगाहट भरी गति हो जाती है, ताकि खगोलीय ध्रुव 47° कोणीय व्यास बनाता हुआ, क्रांतिवृत्त के ध्रुव (कदम्ब) के चारों ओर वृत्त बनाता है। इसके कारण एक युग से दूसरे युग में ध्रुवतारा भी बदला जाता है।

पृथ्वी की इस गति को लट्टू के अक्ष की डगमगाहट भरी गति के साथ तुलना कर सकते हैं, जब लट्टू का अक्ष, जमीन पर सीधी न होकर थोड़ा झुका हो। चित्र में लट्टू का भार ग बिन्दु पर अ ब अक्ष को नीचे की ओर खींचेगा परन्तु लट्टू की तेज गति के कारण यह गिरेगा नहीं बल्कि अ ब मध्य रेखा अ स के चारों ओर इस प्रकार चक्कर लगायेगा कि कोण स अ ब पूरे चक्कर में समान रहता है। इसी प्रकार खगोलीय ध्रुव, क्रांति वृत्त के ध्रुव के चारों ओर एक छोटी वृत्ताकार कक्षा में घूमता है। इस कारण खगोलीय विषुवत् वृत्त (तल), क्रांति वृत्त (तल) को जहां

काटता है, वह विन्दु पीछे खिसक रहा है। मेष के प्रथम बिन्दु का धीमी गति से पीछे हटना संपात का अयन या संपात का खिसकना कहलाता है।

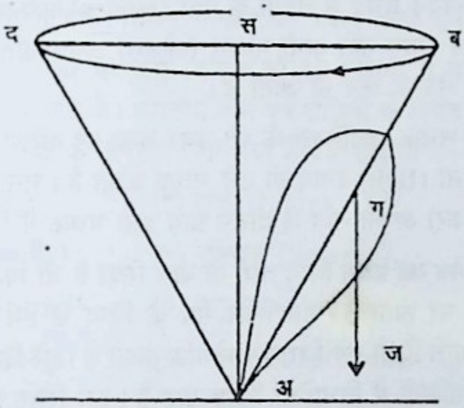

आकर्षित करने वाला खगोलीय पिंड जव धुर उत्तर या धुर दक्षिण क्रांति (declination) पर पहुंचता है तब अस्थिरता अधिक हो जाती है और जब वे पिंड, विषुवत् वृत्त पर हों तव शून्य होती है। चन्द्र-सूर्य अयन (Luni Solar Precession) 7 : 3 के अनुपात में होता है। अर्थात् चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति का प्रभाव, सूर्य के प्रभाव से दुगुना से अधिक होता है अर्थात पूरे का दो तिहाई। इन दोनों के सम्मिलित प्रभाव से वार्षिक गति अयन 50".35 लगभग होती है, जबकि ग्रहों के कारण वार्षिक अयन गति 0".11 है। मध्यम वार्षिक अयन गति जिसे सामान्य अयन गति भी कहते हैं, लगभग 50".24 (औसत) प्रति वर्ष है।

चूंकि पृथ्वी को प्रभावित (आकर्षित) करने वाले ग्रह, सूर्य, चन्द्रमा, लघु ग्रह, धुमकेतु आदि की दूरियां घटती बढ़ती रहती हैं; वार्षिक अयन गति भी परिवर्तित होती है। खगोल पर इस वृत्त का कोणीय व्यास मात्र 47° है अर्थात् द ब = 47° और एक चक्कर पूरा करने में 25,800 वर्ष लगते हैं।

इसका प्रभाव महत्त्वपूर्ण है। ध्रुवों के खिसकने से, खगोलीय विषुवत् वृत्त भी खिसकता है और वसंत संपात बिन्दु अर्थात मेष का प्रथम बिन्दु भी खिसकता है।

विदोलन या अक्ष-विचलन (Nutation)–सूर्य और चन्द्रमा की आकर्षण शक्तियां हमेशा समान नहीं होती। चन्द्रमा कभी क्रांति तल के ऊपर और कभी नीचे (अर्थात् उत्तर या दक्षिण) जाता रहता है, इसीलिए पृथ्वी के विषुवत् रेखा के पास उभरे हुए भाग पर इसकी आकर्षण शक्ति हमेशा एक दिशा में नहीं होती, जैसा कि सूर्य की होती है; जिसके कारण खगोलीय ध्रुव, क्रांतिवृत्त के ध्रुव से आगे

पीछे होते हुए दूरी बदलती रहती है। ध्रुव के इस प्रकार आगे पीछे होने को विदोलन या अक्ष विचलन (Nutation) कहते हैं। फलस्वरूप 18 वर्ष 220 दिन या 182/3 वर्ष में (जितने समय में चंद्रमा के पात (Nodes) आकाश में एक पूरा चक्कर लगा लेते हैं। अयन गति कभी मध्यम (औसत) अयन गति से 9 सेकेण्ड अधिक या कभी 9 सेकण्ड कम हो जाती है।

चल एवं स्थिर भचक्र–क्रांतिवृत्त के 9° उत्तर तथा 9° दक्षिण को मिलाकर एक काल्पनिक मेखला (Belt) बनाएं तो उसे भचक्र कहते हैं। चन्द्रमा तथा सभी ग्रह (प्लूटो को छोड़कर) अपनी गति के दौरान प्राय इसी भचक्र में स्थित होते हैं।

स्थिर भचक्र में मेष का प्रथम बिन्दु तारों के बीच स्थिर है जो कि चित्रा नामक तारे से ठीक 180° पर होता है। इस स्थिर मेष के बिन्दु से हम जब ग्रहों के भोगांश की गणना करते हैं तो इसे **निरायन** भोगांश कहते हैं। पूरे स्थिर भचक्र को मेष, वृष आदि 12 राशियों में विभाजित किया गया है। इस स्थिर भचक्र को 27 नक्षत्रों में भी विभाजित किया गया है। इस प्रकार निरायन राशियों में हमेशा वही तारे/तारा मण्डल होते हैं। **दूसरे प्रकार का भचक्र** होता है जिसे **सायन भचक्र** भी कहते हैं। इसमें वसंत संपात का बिन्दु ही मेष का प्रथम बिन्दु माना जाता है। संपात बिंदु, वह बिंदु है जहां पर क्रांति वृत्त, विषुवत् वृत्त को काटता है तथा यह बिन्दु जैसा कि पहले बताया गया है, प्रतिवर्ष लगभग 50".3 पीछे (पश्चिम की ओर) खिसकता है। पृथ्वी के विषुवत् रेखा पर उभरे भागों पर सूर्य तथा चन्द्रमा की आकर्षण शक्तियों के फलस्वरूप, सायन मेष का प्रथम बिन्दु प्रतिवर्ष धीमी गति से सूर्य की वार्षिक गति की दिशा के विपरीत दिशा में चलता है। इस चल भचक्र में जो ग्रहों के भोगांश नापे जाते हैं उन्हें **सायन भोगांश** कहते हैं। इस पद्धति में भी 12 राशि होती हैं जो प्रत्येक 30° की हैं। ये राशियां (मेष आदि) वसंत संपात से प्रारंभ होती हैं। ये राशियां निरायन राशियों से अलग हैं। इस पद्धति में राशियों के भीतर तारों के समूह, समय के अनुसार स्थान बदलते रहते हैं। *स्थिर मेष के प्रथम बिन्दु से सायन मेष (वसंत संपात) के प्रथम बिन्दु की कोणीय दूरी को अयनांश कहते हैं। दूसरे शब्दों में अयनांश वह कोणीय दूरी है जितनी दूरी वसंत संपात बिन्दु तब से पीछे खिसक चुका है जब दोनों (चल एवं स्थिर) भचक्र का प्रारंभिक (मेष) बिन्दु एक ही था।*

यह माना जाता है कि 285 A.D. में चल एवं स्थिर भचक्र के प्रारंभिक बिन्दु (मेष का प्रथम बिन्दु) एक स्थान पर थे। इसके अनुसार 1 जनवरी 1993 को अयनांश 23°45'55" (राष्ट्रीय पंचांग के अनुसार) था। भारत सरकार द्वारा गठित की गई, कैलेण्डर सुधार समिति ने यह अयनांश की पद्धति 1953 में अपनाई जिसके अनुसार 285 A.D. में रविवार 22 मार्च को अयनांश शून्य था।

सायन एवं निरायन भोगांश में जो सम्बंध है उसे इस प्रकार लिख सकते हैं–

सायन भोगांश = निरायन भोगांश + अयनांश

भारतीय ज्योतिष में हम निरायन भोगांश का प्रयोग करते हैं।

राशि एवं नक्षत्रों का बंटवारा–भचक्र को 12 राशियों में बांटा गया है जो प्रत्येक 30° कोण की होती है। भारतीय नाम इन राशियों के स्थित तारा समूहों के दिखने वाली आकृतियों के अनुसार रखा गया है। ये राशियां हैं–

(1) मेष (Aries)	(7) तुला (Libra)
(2) वृषभ (Taurus)	(8) वृश्चिक (Scorpio)
(3) मिथुन (Gemini)	(9) धनु (Sagittarius)
(4) कर्क (Cancer)	(10) मकर (Capricorn)
(5) सिंह (Leo)	(11) कुम्भ (Acquarius)
(6) कन्या (Virgo)	(12) मीन (Pisces)

अति प्राचीन काल से हमारे ऋषियों ने स्थिर भचक्र को 27 नक्षत्रों में विभाजित कर रखा था। कुछ विशेष तारा-समूह, प्रत्येक नक्षत्र में स्थित है तथा प्रत्येक नक्षत्र 13°20' (भचक्र के 360÷27) का है। इनके नाम हैं–

1. अश्विनी	10. मघा	19. मूल
2. भरणी	11. पूर्वा फाल्गुनी	20. पूर्वाषाढ़ा
3. कृत्तिका	12. उत्तरा फाल्गुनी	21. उत्तराषाढ़ा
4. रोहिणी	13. हस्त	22. श्रवण
5. मृगशिरा	14. चित्रा	23. धनिष्ठा
6. आर्द्रा	15. स्वाति	24. शतभिषा
7. पुनर्वसु	16. विशाखा	25. पूर्वाभाद्रपद
8. पुष्य	17. अनुराधा	26. उत्तराभाद्रपद
9. आश्लेषा	18. ज्येष्ठा	27. रेवती

निरायन राशियां एवं नक्षत्र का एक दूसरे से अटूट सम्बंध है। ये राशियां तथा नक्षत्र इसी क्रम में भचक्र में स्थित है, जिस क्रम में ऊपर (पहले) लिखी गई है। स्थिर भचक्र के मेष के प्रथम विन्दु से प्रारंभ कर इन नक्षत्रों के भोगांश नीचे दिये

जा रहे हैं। प्रत्येक नक्षत्र, उसमें स्थित तारा विशेष के नाम से जाना जाता है। इन तारों को योगतारा भी कहते हैं। जब भचक्र में 0° से 360° तक सभी राशियां एवं सभी नक्षत्रों का एक चक्कर समाप्त हो जाता है, फिर उसी क्रम से वही पुंनः राशियां/नक्षत्र प्रारंभ होते हैं।

1. मेष	0° से 30°	अश्विनी	0°	13°20'
		भरणी	13°20'	26°40'
		कृत्तिका	26°40'	40°00'
2. वृषभ	30° से 60°	रोहिणी	40°	53°20'
		मृगशिरा	53°20'	66°40'
3. मिथुन	60° से 90°	आर्द्रा	66°40'	80°00'
		पुनर्वसु	80°00'	93°20'
4. कर्क	90 से 120	पुष्य	93°20'	106°40'
		आश्लेषा	106°40'	120°00'
5. सिंह	120 से 150	मघा	120°00'	133°20'
		पू. फा.	133°20'	146°40'
6. कन्या	150 से 180	उ. फा.	146°40'	160°00'
		हस्त	160°00'	173°20'
		चित्रा	173°20'	186°40'
7. तुला	180 से 210	स्वाति	186°40'	200°00'
		विशाखा	200°00'	213°20'
8. वृश्चिक	210 से 240	अनुराधा	213°20'	226°40'
		ज्येष्ठा	226°40'	240°00'
9. धनु	240 से 270	मूल	240°00'	253°20'
		पू. आषाढ़	253°20'	266°40'
		उ. आषाढ़	266°40'	280°00'

10. मकर	270 से 300	श्रवण	280°00'	293°20'
		धनिष्ठा	293°20'	306°40'
11. कुम्भ	300 से 330	शतमिषा	306°40'	320°00'
		पू. भाद्रपद	320°00'	333°20'
12. मीन	330 से 360	उ. भाद्रपद	333°20'	346°40'
		रेवती	346°40'	360°00'

अध्याय 6

चंद्रमा की कलाएं

चंद्रमा स्वयं तो प्रकाशहीन है किन्तु सूर्य से प्राप्त प्रकाश को परावर्तित करता है। यह पृथ्वी के चारों ओर भ्रमण करता है तथा इसकी कक्षा (भ्रमण-पथ) क्रांति-वृत्त से लगभग 5° का कोण बनाती है। यही कारण है कि प्रत्येक अमावस्या या पूर्णिमा को ग्रहण नहीं लगते। (इसे अगले अध्याय में स्पष्ट किया जाएगा)। अगले पृष्ठ पर चित्र के बीच में पृथ्वी है जिसका केन्द्र 'क' है तथा चंद्रमा को पृथ्वी के चारों ओर घूमते हुए, आठ स्थितियों में दिखाया गया है (जिसमें) बायीं ओर से सूर्य की किरणें आ रही हैं। चन्द्रमा का केन्द्र ल तथा पृथ्वी का क है। क ल को मिला दें तथा इस पर एक 'लम्ब' रेखा अ ब खीचें जो चंद्रमा को दो अर्द्ध-गोलों में विभक्त करता है। गोले का जो अर्द्ध भाग पृथ्वी की ओर है, वह पृथ्वी से दिखाई पडेगा। चूंकि सूर्य बहुतं बड़ा है और पृथ्वी से चंद्रमा की तुलना में काफी दूर पर है, इसकी किरणों को चंद्रमा एवं पृथ्वी दोनों पर समानान्तर दिशाओं में पड़ती मान सकते हैं, सूर्य की किरणों की दिशा के लम्बवत् चंद्रमा से गुजरते हुए एक रेखा स द खींचें। सूर्य की किरणें चंद्रमा के ऊपर जिस दिशा में पड़ रही है उधर का चंद्रमा का भाग प्रकाशित है। इसके ठीक विपरीत दिशा में चंद्रमा का दूसरा भाग जिस पर किरणें नहीं पड़ रही, वहां अन्धकार दिखाई पड़ेगा। इसे छाया द्वारा (Shaded) दिखाया गया है। चंद्रमा के जिस भाग पर सूर्य कि किरणें पड़ रही हैं, उसे सादा छोड़ दिया गया है। यह भाग प्रकाश परिवर्तित कर रहा है तथा पृथ्वी से प्रेक्षक द्वारा देखने पर चंद्रमा का यह भाग प्रकाशमान दिखाई पड़ता है। जब चंद्रमा पृथ्वी एवं सूर्य से सापेक्ष स्थिति (1) में होगा, जबकि पृथ्वी ठीक सूर्य तथा चंद्रमा के बीच में है तो अ ब तथा स द एक ही सीध में पड़ेंगे। इस स्थिति में चंद्रमा का प्रकाशमान भाग (पूर्ण प्रकाशित अर्द्ध-गोला) पृथ्वी की तरफ होगा तथा पृथ्वी से देखने पर चंद्रमा का पूर्ण गोलाकार हिस्सा प्रकाशवान् दिखाई पड़ेगा। ऐसी स्थिति पूर्णिमा को होती है। स्थिति (2) एवं (8) में चंद्रमा

बिम्ब (disc) का लगभग तीन चौथाई हिस्सा प्रकाशवान् दिखाई पडेगा क्योंकि क्रमशः ब ल स एवं द ल अ सूर्य कि किरणों से प्रकाशित चंद्रमा के अर्द्धगोले क आधे से अधिक हिस्सा है।

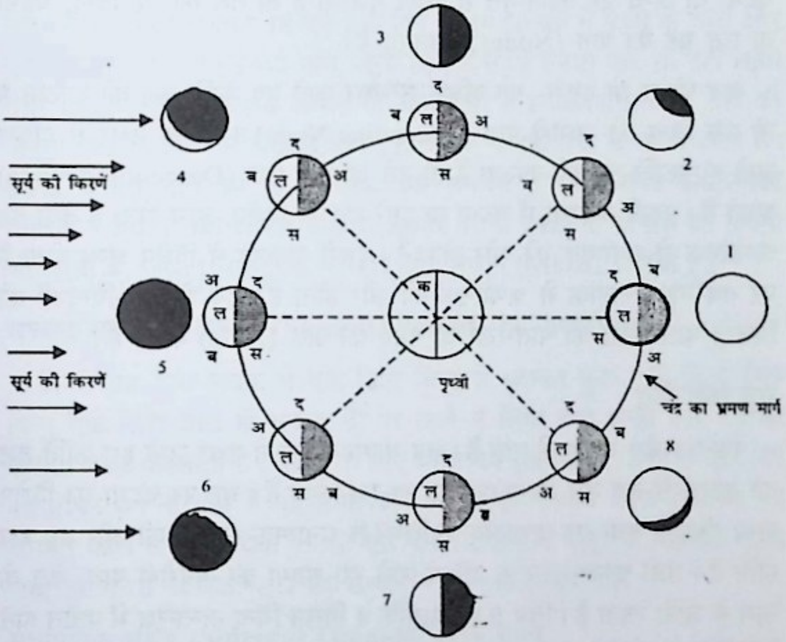

स्थिति (3) एवं (7) में स द अ ब पर लम्ब होगा अतः प्रकाशित हिस्से का आधा भाग, अर्थात् ब ल स एवं अ ल स क्रमशः पृथ्वी पर उजाला (प्रकाशवान्) दिखाई पड़ेगा। दूसरे आधे भाग पर चूंकि सूर्य की किरणें नहीं पड़ रहीं अतएव कोई प्रकाश परावर्तित नहीं हो रहा। इसलिए इस भाग पर पृथ्वी से अन्धेरा दिखाई पड़ता है। यह स्थिति शुक्ल पक्ष या कृष्ण पक्ष की अष्टमी को होती है। जब चंद्रमा स्थिति (4) या (6) पर होता है तो बिम्ब का आधे से कम हिस्सा उजाले में होगा क्योंकि ब ल स एवं अ ल स भाग जो पृथ्वी से उजाले में दिखाई पड़ेगा, वह आधे से भी कम हिस्सा है। स्थिति 5 में अ ब एवं स द फिर एक दूसरे की सीध में आ जाएंगे तथा चंद्रमा का अंधेरा भाग पृथ्वी की ओर होगा। ऐसी स्थिति अमावस्या को होती है। चित्र में चंद्रमा की पृथ्वी पर दिखाई पड़ने वाली स्थितियों को भी दिखाया गया है। चंद्रमा का वह भाग जो प्रकाशवान दिखाई पड़ेगा, उसे सादा (blank) छोड दिया गया है तथा जो भाग अन्धेरा दिखाई पड़ेगा उसे काले रंग से दिखाया गया है।

पात (Nodes)

पात उन बिन्दुओं को कहते हैं, जिन पर चंद्रमा की कक्षा या किसी भी अन्य ग्रह का पथ सूर्य के पथ (क्रांति वृत्त) को काटता है। अपने भ्रमण काल में जब चंद्रमा या अन्य ग्रह क्रांति-वृत्त से होकर गुजरता है तो तल का वह बिन्दु, चंद्रमा या उस ग्रह का पात (Nodes) कहलाता है।

जब चंद्रमा या दूसरा ग्रह दक्षिण से उत्तर जाते हुए क्रांति तल को काटता है तो उस बिन्दु को आरोही पात (Ascending Node) तथा जब उत्तर से दक्षिण जाते हुए क्रांति-तल को काटता है तो उसे अवरोही पात (Descending Node) कहते हैं। पहली अवस्था में चंद्रमा या दूसरे ग्रह का विक्षेप, शून्य होता है तथा वह ऋणात्मक से धनात्मक की ओर होता है। दूसरी अवस्था में विक्षेप शून्य होता है पर तब वह धनात्मक से ऋणात्मक की ओर होता है। इन दो पात-बिन्दुओं को मिलाने वाली रेखा को पात-रेखा या पातों का अक्ष (Axis) कहते हैं।

राहु तथा केतु

राहु एवं केतु चंद्रमा के पात हैं। जब चंद्रमा दक्षिण से उत्तर जाते हुए क्रांति तल को काटता है तब उसे चंद्रमा का पात या राहु कहते हैं। राहु पर चंद्रमा का विक्षेप शून्य होता है तथा यह ऋणात्मक (दक्षिण) से धनात्मक (उत्तर) की ओर बढ़ रहा होता है। उसी प्रकार उत्तर से दक्षिण जाते हुए चंद्रमा का अवरोही पात, केतु के नाम से जाना जाता है। चित्र 2 में, हालांकि 4 मिलन बिन्दु अन्तरिक्ष में प्रतीत होते हैं। (त्रिआयामी होने के कारण) वास्तव में सिर्फ दो बिन्दु हैं जहां चंद्रमा क्रांति तल को पार करता है । चित्र 2 में दो मोटी रेखाएं तथा दो महीन रेखाएं जहां मिल रही हैं वही चंद्रमा के दो आराही एवं अवरोही पात हैं। अतः हम देखते हैं कि राहु एवं केतु कोई भौतिक ग्रह (Physical Planet) नहीं है वरन् ये क्रांति तल पर स्थित मात्र दो बिन्दु हैं जहां पर चन्द्रमा क्रांति-तल को पार करता है।

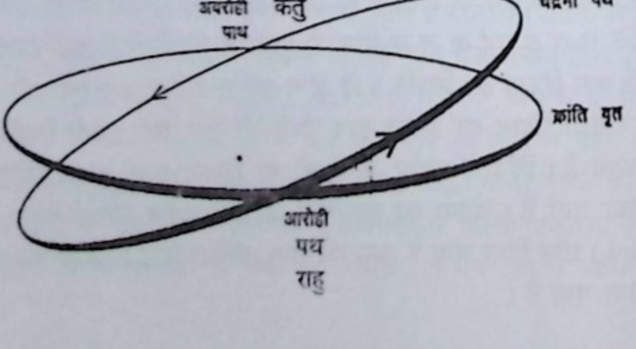

इन्हीं कारणों से राहु एवं केतु को 'छाया ग्रह' भी कहा जाता है। पूर्णिमा या अमावस्या तिथियों को जब चंद्रमा इन बिन्दुओं पर अर्थात राहु या केतु (छाया ग्रहों) के पास आ जाता है तो क्रमशः चंद्र ग्रहण या सूर्य ग्रहण होता है। इन्हें (राहु, केतु को) दैत्य का सिर तथा दैत्य का धड़ भी कहा जाता है। ये बिन्दु आकाश में स्थिर नहीं है वरन् लगभग 18 वर्ष 220 दिन या 18.60 वर्ष में पृथ्वी के चारों ओर एक बार घूम जाते हैं। इनकी गति, अन्य ग्रहों के सदृश हमेशा एक सी नहीं रहती तथा 18.60 वर्ष की अवधि औसत के आधार पर है इनकी गति, अन्य ग्रहों की अपेक्षा विपरीत दिशा में होती है अर्थात् ये भचक्र में वक्र गति से भ्रमण करते हैं। इनकी औसत गति 19°36' प्रतिवर्ष या लगभग 8" प्रति घण्टे है। उनकी वास्तविक स्थिति तथा औसत गति के आधार पर दो प्रकार के भोगांश की गणना की जाती है, अर्थात् वास्तविक भोगांश और मध्यम (Mean) भोगांश।

सम्पात काल या अवधि (Sidereal Period) या नाक्षत्रकाल

किसी ग्रह द्वारा भचक्र में एक स्थिर बिन्दु से चलकर पुनः उसी बिन्दु (यह बिन्दु एक स्थिर तारा हो सकता है) पर आने में लिया गया समय उस ग्रह का सम्पात काल कहलाता है। चंद्रमा के लिए यह समय (अवधि) 27 दिन 7 घण्टे एवं 43 मिनट है। नौ ग्रहों में यह सबसे कम अवधि का सम्पात काल है। शनि का सम्पात काल सबसे अधिक 29.46 सौर वर्ष है। शनि से सुदूर के ग्रहों को लिया जाए तो सबसे अधिक प्लूटो का सम्पात काल 247.7 वर्ष है।

साम्पातिक समय (Sidereal Time) या नाक्षत्र समय

किसी भी क्षण का साम्पातिक समय, नक्षत्र घण्टों एवं मिनटों में दर्शाया गया वह समय है जो सायन मेष का प्रथम बिन्दु (वसन्त सम्पात बिन्दु) के उस स्थान के याम्योत्तर वृत्त (Meridian) से पार करने के बाद बीत चुका है।

अर्थात सम्पात दिवस वह समय है जो पृथ्वी एक स्थिर तारे के सामने से अपनी धुरी पर घूमना आरम्भ कर फिर उसी तारे के सामने आने तक में समय ले। वह 23 घन्टे 56 मिनट और कुछ सैकेण्ड के समान है।

एक सम्पात दिवस के साम्पातिक घन्टे, मिनट और सैकेण्ड में बांट सकते हैं।

1 सम्पात दिवस	= 24 सम्पात घन्टे
1 सम्पात घन्टा	= 60 सम्पात मिनट
1 सम्पात मिनट	= 60 सम्पात सैकिंड

अगर आकाश को ध्यान से देखा जाए तब सूर्य आज जिस तारे के साथ उदय हो रहा है, तब कल वह तारा सूर्योदय से 4 मिनट पहले उदय होगा अर्थात सूर्य भचक्र में 1 अंश चल दिया है। अगर वही प्रेक्षक (दर्शक) एक मास तक आकाश को देखता रहे, तब वह देखेगा कि वह तारा सूर्य से एक राशि पहले उदय हो गया है। एक वर्ष पश्चात वह तारा और सूर्य फिर साथ उदय हो रहे हैं।

इसका कारण है कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा पश्चिम से पूर्व की ओर कर रही है और एक वर्ष में पूरी कर लेती है। पृथ्वी अपनी धुरी पर एक दिन में एक बार घूम जाती है। इस कारण पृथ्वी का कोई भी स्थान 365 चक्र एक वर्ष में लगा लेता है और एक चक्र सूर्य की परिक्रमा करने में लगाता है परन्तु तारों के हिसाब से 366 चक्र लगाए। अर्थात मेष के प्रथम बिंदु (चलित) ने 365 दिन में 366 बार याम्योत्तवर वृत्त को पार किया और 366 दिन का वर्ष (लीप का वर्ष) में 367 बार पार किया।

इसलिये एक सम्पात दिवस, सौर दिवस से छोटा होता है–

$$= \frac{24 \text{ घंटे}}{365.25} = \frac{24\ 50 \text{ मिनट}}{365.25} = \frac{1440}{365.25}$$

= लगभग 3 मिनट 56 सैकिन्ड

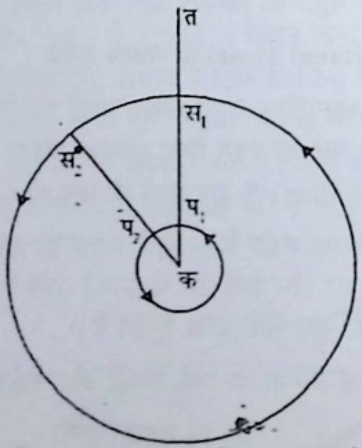

पृथ्वी को सूर्य की परिक्रमा करता हुआ नहीं मानकर सूर्य को पृथ्वी की परिक्रमा करता मान लेने पर कोई अन्तर नहीं आता क्योंकि पृथ्वी से सूर्य ही परिक्रमा करता दिखाई देता है।

उपरोक्त आकृति में क पृथ्वी केन्द्र है $स_1$ और $स_2$ सूर्य की एक दिन और दूसरे दिन की स्थितियां हैं। $प_1$ और $प_2$ प्रेक्षक या दृष्टा की पृथ्वी पर पहले और दूसरे दिन की स्थितियां हैं। त एक स्थिर तारा है।

किसी समय त, $स_1$, $प_1$ और क एक सरल रेखा में हैं। अब सूर्य ने अपने वार्षिक भ्रमण पर तीर के निशान की दिशा में चलना आरम्भ किया और पृथ्वी ने अपनी घुरी पर तीर के निशान की दिशा में घूमना आरम्भ किया। $प_1$ पर जो प्रेक्षक है, जब एक चक्र पूरा कर पुनः $प_1$ पर आया अर्थात् त $प_1$ और क एक सरल रेखा में हुए तब सूर्य वहाँ नहीं था। जितना समय पृथ्वी ने $प_1$ से घूमना आरम्भ कर पुनः $प_1$ तक आने में लिया वह एक सम्पात दिवस का मान है। अब पृथ्वी और आगे गई। पृथ्वी ने जितना समय $प_1$ से चलकर पुनः $प_1$ पर आकर और $प_2$ पर आने में लिया वह एक सौर दिवस हुआ अर्थात् पृथ्वी जितना समय कोण $प_1$ क $प_2$ घूमने में लगाया उतने समय के समान सौर दिवस सम्पात दिवस से बड़ा हुआ।

संयुति काल (Synodic Period)

पृथ्वी से देखने पर कोई भी बाहरी ग्रह जब सूर्य के सीध में (Conjunction) या सूर्य के भोगांश + 180° पर (opposition) होता है और पुनः उसी सीध (Conjunction) या (opposition) सूर्य के भोगांश + 180° में आने के लिए जो समय लगता है, वह उस ग्रह का संयुति काल (Synodic period) कहलाता है। आन्तरिक ग्रहों (बुध, शुक्र) के लिए उनके सूर्य के साथ युति (Conjunction) चाहे वहिर्युति या अंतर्युति (External or internal Conjunction) हो और पुनः उसी प्रकार की युति होने में जो समय लगता है उसे उस ग्रह का संयुति काल (Synodic period) कहते हैं।

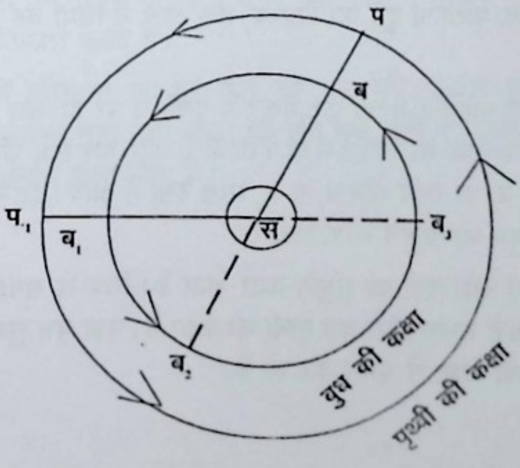

संयुति काल को निम्न प्रकार से समझते हैं।

अन्तर ग्रहों (बुध और शुक्र) के लिये

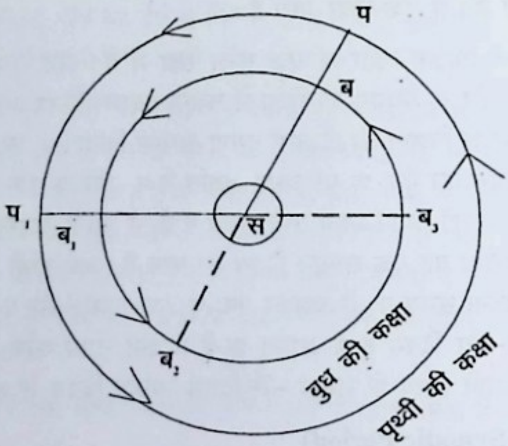

इस चित्र में सूर्य 'स' स्थिर है और केन्द्र में है। इसके समीप छोटा वृत्त बुध की कक्षा मे है और बड़ा वृत्त पृथ्वी की कक्षा है। दोनों तीर वाली दिशा में भ्रमण कर रहे हैं। पृथ्वी एक वर्ष में सूर्य की परिक्रमा पूरी करती है और बुध 88 दिन में।

इस चित्र में पृथ्वी 'प' पर बुध 'ब' पर सूर्य में सीधी रेखा में हो तब प ब स बुध की अन्तर युति है। इस युति से चलकर बुध अपनी परिक्रमा पूरी कर जब ब पर आता है तब तक पृथ्वी प पर नहीं होती बल्कि आगे चली गई होती है। जब बुध $ब_1$ पर आता है उस समय पृथ्वी $प_1$ पर आती है और $प_1$ $ब_1$ स एक सरल रेखा में हो जाते हैं अर्थात अन्तर युति फिर हो जाती है। यह समय जो बुध ने ब से चलकर एक परिक्रमा पूरी कर फिर $ब_1$ तक आने में लिया वह बुध का संयुति काल है।

इसी प्रकार बहिर्युति से भी कर सकते हैं पृथ्वी प पर हो और बुध $ब_2$ पर हो अर्थात प स $ब_2$ एक सरल रेखा में हो (बहिर्युति) और बुध एक परिक्रमा कर जब आगे चलकर $ब_3$ पर पहुंचे और $प_1$ स $ब_3$ सरल रेखा में आवें। इसमें जितना समय बुध ले वह बुध का संयुति काल होता है।

इसी प्रकार बाह्य ग्रहों का संयुति काल होता है। चित्र से समझें। सूर्य स पर केन्द्र में है इसके समीप छोटा वृत्त पृथ्वी की कक्षा है। बड़ा वृत्त गुरु की कक्षा है। दोनों तीर वाली दिशा में भ्रमण कर रहे हैं।

पृथ्वी प पर, गुरु ग पर है और ग प स एक सरल रेखा है (गुरु की विपरीत युति है)। अब दोनों चल रहे हैं (क्योंकि गुरु परिक्रमा लगभग 12 वर्ष में करता और पृथ्वी 1 वर्ष में)। पृथ्वी एक परिक्रमा कर जब पुनः प पर आती है तब गुरु वहां नहीं होता है। जब पृथ्वी प$_1$ पर आती है तब गुरु ग$_1$ पर होता है और ग$_1$ प$_1$ स सरल रेखा बन जाती है (गुरु की विपरीत युति)। गुरु ने जितना समय ग से ग$_1$ तक चलने में लिया वह इसका संयुति काल है।

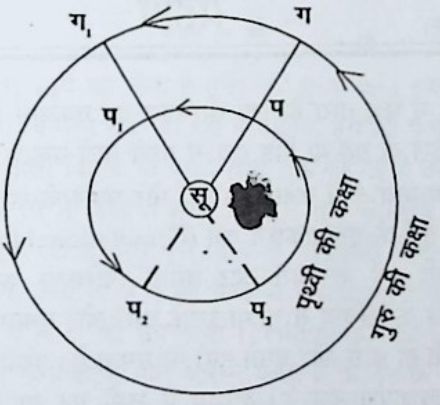

इसे युति से भी देख सकते हैं।

गुरु ग पर और पृथ्वी प$_2$ पर है। प$_2$ स ग एक सरल रेखा है (यह गुरु की युति की स्थिति है) अब दोनों चलते हैं। पृथ्वी तेज कोणीय गति से चलती हुई जब पुनः प$_2$ पर आती है तब गुरु ग पर नहीं होता। आगे चलने पर पृथ्वी प$_3$ पर आती है और गुरु उस समय ग$_1$ पर आता है तब फिर प$_3$ स ग$_1$ एक सरल रेखा होकर गुरु की युति की स्थिति बनाती है। गुरु ने ग से ग$_1$ तक चलने में जितना समय लिया उसे गुरु का संयुतिकाल कहते हैं।

संयुतिकाल की परिभाषा यह हुई–कोई ग्रह एक युति/विपरीत युति/अन्तर युति/बहिर्युति से चलकर पुनः उसी प्रकार की युति तक आने में जितना समय ले वह उस ग्रह का संयुति काल होता है।

अध्याय 7

ग्रहण

सूर्य वास्तव में एक तारा है तथा सौरमंडल का एकमात्र प्रकाशित आकाशीय पिंड है। सौरमंडल के ग्रह या पिंड सूर्य से पड़ने वाले प्रकाश को परावर्तित करते हैं। जैसा कि अध्याय 3 में कहा गया था, सौर मंडल के सभी ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। सूर्य के गुरुत्वाकर्षण बल (Gravitational force) या खिंचाव के कारण पृथ्वी भी सूर्य के चारों ओर घूमती (परिक्रमा करती) है। पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण बल के खिंचाव से चंद्रमा इसके चारों ओर घूमता है; साथ ही सूर्य के चारों ओर (पृथ्वी के चारों ओर घूमते हुए) भी घूमता है। पृथ्वी की तरह चंद्रमा का भी अपना गुरुत्वाकर्षण बल है। वास्तव में सभी ग्रह या आकाशीय पिंड का अपना-अपना गुरुत्वाकर्षण वल होता है।

चन्द्र ग्रहण

चंद्रमा जब आकाश में घूमते हुए पृथ्वी की छाया वाले मार्ग से गुजरता है तब चंद्रग्रहण होता है। ऐसा तभी होगा जब सूर्य, पृथ्वी तथा चंद्रमा तीनों लगभग एक सीधी रेखा में आ जाएंगे। चंद्रमा की कक्षा (orbit), क्रांति तल पर लगभग 5° का कोण बनाती है। इसीलिए जब-जब तीनों एक सीध में आ जाते हैं तो चंद्रमा, क्रांति तल (Plane of ecliptic) के विल्कुल पास हो भी सकता है और नहीं भी। पृथ्वी, सूर्य और चंद्रमा के बीच में प्रत्येक पूर्णिमा को आती है। हम यह भी देख चुके हैं कि चंद्रमा जब क्रांति तल को काटते हुए गुजरता है तो वह कटान-बिन्दु चंद्रमा के पात (आरोही या अवरोही) अर्थात् राहु या केतु होते हैं। जब भी पृथ्वी, सूर्य और चंद्रमा के बीच में एक सीध में होगी (अर्थात् पूर्णिमा को) चंद्रमा ठीक या लगभग राहु या केतु (पात-बिन्दु) पर होगा तभी चंद्र ग्रहण होगा।

जब चंद्रमा का पूरा बिम्ब (disc) पृथ्वी की छाया में आ जाता है तो पूर्ण चंद्रग्रहण होता है। जब बिम्ब का कुछ ही भाग, छाया में आता है तो आंशिक चंद्रग्रहण होता है। (चित्र देखें)

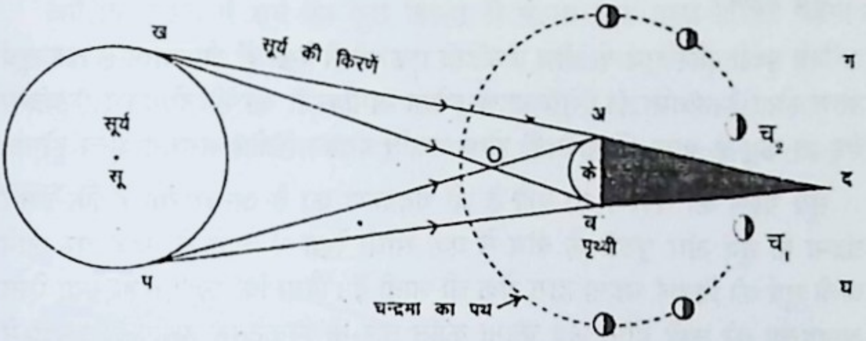

ऊपर चित्र में 'सू' सूर्य का केन्द्र है तथा 'के' पृथ्वी का। शंकु (Cone) अ ब द में सूर्य की किरणें बिल्कुल नहीं आ रही हैं क्योंकि सूर्य की परिधि के दोनों छोर ख एवं प से आने वाली किरणें भी पृथ्वी द्वारा रोक ली गई है तथा शंकु ग अ द एवं घ ब द (हल्के रंग में दिखाया हुआ भाग) में सूर्य के विम्ब (disc) के कुछ भाग से प्रकाश पहुंच रहा है परंतु पूर्ण बिम्ब से आनेवाली किरणें नहीं पड़ रहीं। गहरे रंग वाला भाग, शंकु अ ब द को प्रच्छाया (Umbra) तथा हल्के रंग वाले क्षेत्र ग अ द एवं घ ब द को उपच्छाया (Penumbra) कहते हैं। जब चंद्रमा उपच्छाया वाले क्षेत्र से प्रच्छाया वाले क्षेत्र में जाता है तो उसकी चमक कम होती जाती है और जब वह पूर्णतः प्रच्छाया के भीतर आ जाता है तो इसकी चमक (प्रकाश) बिल्कुल समाप्त हो जाती है। इस स्थिति में पूर्ण चंद्र ग्रहण होता है। जब तक चंद्रमा का कुछ भाग प्रच्छाया के भीतर नहीं आता, चंद्रग्रहण नहीं हो सकता। कारण यह है कि उपच्छाया में चंद्रमा तक सूर्य की आने वाली किरणें कम तो हो जाती हैं, पूर्णतः समाप्त नहीं होती। जबकि प्रच्छाया में सूर्य से आने वाली सीधी किरणें बिल्कुल नहीं पहुंचती। अतएव चंद्रमा जब $च_1$ या $च_2$ की स्थिति में होता है तो उस पर सूर्य के कुछ भाग से आने वाली किरणें पड़ती हैं, इसलिए उसकी चमक थोड़ी कम होती है। इसकी चमक सबसे कम मद्धिम तब होती है जब यह प्रच्छाया से निकल रहा होता है। चमक सबसे अधिक मद्धिम तब होती है जब चंद्रमा प्रच्छाया की सीमा के पास होता है अर्थात प्रच्छाया में प्रवेश कर रहा होता है या प्रच्छाया के शंकु के अधिक निकट होता है। चन्द्रग्रहण की पूरी अवधि कभी भी 1 3/4 घंटे (1 घण्टा 45 मिनट) से अधिक नहीं होती। इस पूरी अवधि के दौरान चंद्रमा प्रच्छाया के क्षेत्र से गुजर रहा होता है। पृथ्वी की अपनी गति के कारण यह शंकु (प्रच्छाया) भी धीमी गति से खिसकता रहता है। सूर्य (दूसरे अर्थ में पृथ्वी) एक घण्टे में लगभग 2½' चलता है।

सूर्य ग्रहण

जब पृथ्वी और सूर्य के वीच में चंद्रमा एक सीधी रेखा में आ जाता है तब सूर्य ग्रहण होता है अर्थात (1) सूर्य ग्रहण हमेशा अमावस्या को ही होगा। (2) चंद्रमा राहु या केतु के पास (निकटतम) होगा अर्थात् इसका विक्षेप लगभग शून्य होगा।

सूर्य ग्रहण का कारण भी वही है जो चंद्रग्रहण का है अन्तर यह है कि इसमें चंद्रमा के सूर्य और पृथ्वी के बीच में एक सीधी रेखा में आने से पृथ्वी पर आने वाली सूर्य की किरणें चंद्रमा द्वारा रोक ली जाती हैं। जैसा कि ऊपर कहा गया ऐसा अमावस्या को तभी होगा जब चंद्रमा कांति तल के निकटतम हो; दूसरे शब्दों में राहु या केतु के निकट ही चंद्रमा हो।

चंद्र ग्रहण में जब चंद्रमा प्रच्छाया (Umbra) में प्रवेश करता है तब चंद्रमा का प्रकाश खत्म हो जाता है और पृथ्वी के उस पूरे हिससे में, जो चंद्रमा की तरफ होता है, ग्रहण दिखाई पड़ता है। चूंकि चंद्रमा, पृथ्वी से काफी छोटा है, यह पृथ्वी के बहुत थोडे से भाग पर सूर्य की किरणों को पहुंचने से रोक पाता है। अतः सूर्य ग्रहण पृथ्वी के थोड़े से भाग में ही एक साथ दिखाई पड़ता है।

सूर्य ग्रहण तीन प्रकार का होता है–

(1) पूर्ण-ग्रहण (सर्वग्रास) (2) आंशिक ग्रहण (खण्ड ग्रास) एवं (3) वलयाकार ग्रहण (Annular Eclipse)

पूर्ण ग्रहण में सूर्य का पूरा विम्ब (disc) दिखाई नहीं पड़ता अर्थात् चंद्रमा के वीच में आ जाने से सूर्य पूरी तरह ढक जाता है आंशिक ग्रहण में सूर्य का कुछ भाग दिखाई देता है एवं कुछ भाग चंद्रमा द्वारा ढका होने के कारण दिखाई नही देता।

चंद्रमा के बिम्ब का कोणीय व्यास 33'31" से 29'22" के बीच में रहता है। जब चंद्रमा पृथ्वी से अधिकतम दूरी पर अर्थात् भूम्योच्च (apogee) पर होता है। तब कोणीय व्यास 29'22" होता है। जब चंद्रमा पृथ्वी से निकटतम दूरी अर्थात् भूमिनीच (perigee) पर होता है तब कोणीय व्यास 33'31"। सूर्य जब पृथ्वी से अधिकतम दूरी (aphelion) पर होता है तो उसके बिम्ब का व्यास 31'32" तथा जब पृथ्वी से निकटतम (peripelion) होता है तो व्यास 32'36" होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि जब कभी सूर्य ग्रहण के समय चंद्रमा पृथ्वी के निकटतम तथा सूर्य पृथ्वी से अधिकतम दूरी पर होगा तो चंद्रमा का आभासीय व्यास सूर्य के व्यास से बड़ा होगा तथा वह सूर्य को पूरी तरह ढक लेने में सक्षम होगा तथा पृथ्वी पर ग्रहण वाले क्षेत्र पर दर्शक सूर्य का कोई भाग नहीं देख सकेगा। इस स्थिति में दर्शक के लिए पूर्ण सूर्य ग्रहण होगा।

आंशिक ग्रहण में सूर्य का कुछ हिस्सा ही चंद्रमा द्वारा ढका दिखाई पड़ेगा। इसका कारण यह है कि सूर्य एवं चंद्रमा के बिम्ब (disc) का केन्द्र, दर्शक के लिए बिल्कुल एक सीधी रेखा में नहीं होगा। दूसरे शब्दों में चंद्रमा ठीक-ठीक राहु या केतु के बिन्दु पर नहीं होगा या दर्शक चन्द्रमा की प्रच्छाया (Umbra Cone) से बाहर स्थित हो।

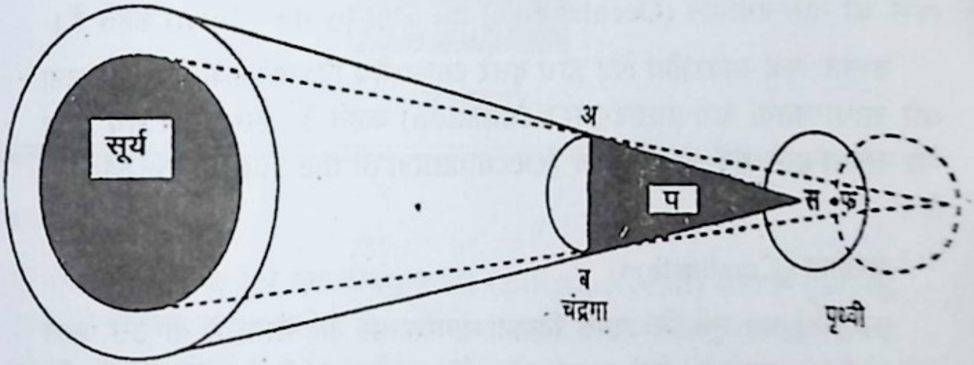

वलयाकार सूर्य ग्रहण (Annualar Solar Eclipse) तब होता है जब सूर्य पृथ्वी से निकटतम दूरी सूर्योच्च (perihelion) पर होता है और चंद्रमा पृथ्वी से अधिकतम दूरी (apogee) सूर्यनीच पर तथा अन्य शर्तें वही हों जो पूर्ण सूर्य ग्रहण के लिए आवश्यक है वलयाकार ग्रहण इसलिए होता है क्योंकि चं... आभासीय कोणीय व्यास सूर्य के कोणीय व्यास से कम होता है। चंद्र... पूर्ण रूप से ढ़क नहीं पाता, केवल केन्द्र के अधिकंतर भाग को ढ़क ले... किनारों पर दिखाई देता रहता है जिससे इसकी आकृति एक चमकदार अंगूठी... तरह हो जाती है।

चंद्रमा द्वारा बनाई प्रच्छाया (umbra) अ ब स है। जब दर्शक प बिन्दु पर (प्रच्छाया के भीतर) होगा एवं चंद्रमा निकटतम तथा सूर्य अधिकतम दूरी पर होगा तो पूर्ण सूर्य ग्रहण दिखाई पड़ेगा। परंतु जब दर्शक फ बिन्दु पर है, जोकि प्रच्छाया से बाहर है और ऐसा तब होगा तब चंद्रमा अधिकतम तथा सूर्य निकटतम दूरी पर हो, तो दर्शक पूर्ण ग्रहण नहीं देखेगा बल्कि सूर्य का बिम्ब चमकदार अंगूठी (... के रूप में दिखाई देगा। चित्र में सूर्य का हल्के रंग से ढका भाग नहीं दिखाई... तथा किनारा चमकीले अंगूठी के आकार का दिखाई देगा। इसे वलयाकार... कहते हैं। सूर्य ग्रहण पृथ्वी के पूरे गोलार्द्ध (hemisphere) पर नहीं दिखाई... है। पूर्ण सूर्य ग्रहण पृथ्वी पर 169 मील चौड़ी पट्टी से अधिक भाग पर दिखाई देता तथा आठ मिनट से ज्यादा पूर्ण ग्रहण नहीं होता।

तारा-प्रच्छादन (Occulation) समागम

चंद्रमा के परिभ्रमण का नक्षत्र काल (Sidereal period) लगभग 271/3 दिन का है तथा यह लगभग आधी डिग्री प्रति घण्टे कोणीय गति से नक्षत्रों की पृष्ठभूमि में पूर्व दिशा की ओर भ्रमण करता है। अपने भ्रमण काल में इसका बिम्ब (disc) किसी न किसी तारे को ढक लेता है। चंद्रमा द्वारा इस प्रकार किसी तारे को ढक लेने को तारा-प्रच्छादन (Occulation of the Star by the Moon) कहते हैं।

वस्तुतः एक आकाशीय पिंड द्वारा दूसरे आकाशीय पिंड को ढक लेने की घटना को साधारणतया तारा-प्रच्छादन (Occultation) कहते हैं। इस प्रकार सूर्य ग्रहण भी चंद्रमा द्वारा सूर्य का प्रच्छादन (Occultation of the Sun by the Moon) है।

अस्तंगत (Combustion)

जब कोई ग्रह सूर्य के अत्यंत निकट भोगांश पर आ जाता है तो उसे अस्त (Combust) कहते हैं। ऐसी अवस्था में ग्रहों पर जो सूर्य की किरणें पड़ती हैं और परावर्तित होती है, उन किरणों से सूर्य की किरणें अधिक तेज होने के कारण ग्रह का प्रभाव कम हो जाता है। ऐसी अवस्था में ग्रह, सूर्य के अत्यंत निकट होने के कारण दिखाई भी नहीं पड़ते। इसलिए इन्हें अस्त कहते हैं।

अध्याय 8

समय

मध्यमान सौर दिवस

हमने देखा है कि सूर्य एक दीर्घवृत्ताकार (Elliptical orbit) कक्षा में पृथ्वी के चारों ओर भ्रमण करता प्रतीत होता है तथा इसके कक्षा में दिशा-परिवर्तन करने की दर समान नहीं है। अर्थात् सूर्य असमान गति से भचक्र में भ्रमण करता दिखाई पड़ता है। जब पृथ्वी से सूर्य निकटतम होता है सूर्यउच्च (Perihelion) तो इसकी गति सबसे तेज होती है। इसके विपरीत जब सूर्य पृथ्वी से अधिकतम दूरी सूर्यनीच (Aphilion) पर होता है तो इसकी कोणीय गति धीमी हो जाती है। दूसरी बात यह है कि सूर्य क्रांति वृत्त पर भ्रमण करता दिखाई पड़ता है, न कि विषुवत-वृत्त पर; अतएव इसका विषुवांश (Right Ascension) समान दर से नहीं बढ़ता है।

सूर्य जब दर्शक के ठीक याम्योत्तर वृत्त (Meridian) पर आता है और दूसरे दिन फिर उसी बिन्दु पर उसे आने में जो समय लगता है वह अवधि आभासीय सौर दिवस कहलाती है।

चूंकि सूर्य की गति पूरे वर्ष समान नहीं होती, आभासीय सौर दिवस विभिन्न अवधियों के होंगे। सामाजिक व्यवहार में इस प्रकार के असमान दिनों के कारण कई गणनाओं में दिक्कते आयेंगी। इसका हल निकालने के लिए एक अवास्तविक "मध्यम सूर्य" की परिकल्पना की गयी जो विपुवतृ वृत्त पर समान गति से चलता हुआ मान लिया गया। इस 'मध्यम सूर्य' द्वारा 'याम्योत्तर वृत्त' को एक दिन से फिर अगले दिन पार करने में लगे समय को औसत सौर दिवस माना गया है। यह वास्तविक सूर्य द्वारा क्रांतिवृत्त पर भ्रमण करने की औसत दैनिक गति के बराबर है। इस औसत सौर दिवस को 24 घंटों में बांटा गया है। इसका अर्थ यह है कि 'मध्यम सूर्य' का विषुवांश समान गति से बढ़ता है। 'मध्यम सूर्य' जब किसी स्थान के याम्योत्तर वृत्त (Meridian) पर है तब उस स्थान का स्थानीय मध्यम

मध्याह्न (Local mean Noon) का समय होगा तथा मध्य सूर्य का होरा-कोण (Hour angle) उस समय शून्य होगा। जब मध्यम सूर्य का होरा-कोण 12 घंटे होगा तो उस स्थान का मध्य-रात्रि का समय होगा। यही वह समय है जब उस स्थान का सावन दिन (Civil day) प्रारंभ होता है।

स्थानीय मध्यम समय (Local mean time)

किसी स्थान पर मध्य-रात्रि के बाद जितना समय बीत गया है, वह उस स्थान का स्थानीय मध्य समय कहा जाता है। अतः मध्य रात्रि को स्थानीय मध्य समय शून्य होता है। यह मध्य सूर्य के होरा-कोण से अलग है।

पृथ्वी अपने अक्ष पर एक सावन दिन में सूर्य की तुलना में पश्चिम से पूर्व दिशा में एक चक्कर पूरा कर लेती है। पृथ्वी किसी तारे की तुलना में एक चक्कर एक नक्षत्र दिवस (Sidereal day) में पूरा करती है। एक नक्षत्र दिवस में पृथ्वी पूरा 360° घूम जाती है, जबकि एक सावन दिन में यह गति 361° की है। एक औसत सौर दिवस नक्षत्र दिवस के 24 घंटे 3 मिनट 56.56 सेकण्ड के बराबर है। औसत नक्षत्र दिवस 24 नक्षत्र घंटों के बराबर है तथा मध्य सौर समय के अनुसार 23 घण्टे, 56 मिनट 4.09 सेकण्ड के बराबर है। सुविधा के लिए सौर दिवस एवं नक्षत्र दिवस में दोनों को अपने-अपने 24 घंटों में बांटा गया है। इस प्रकार पृथ्वी 24 घंटे में 360° घूम जाती है या 4 मिनट में 1° घूम जाती है। पूर्व में जो स्थान है जहां सूर्योदय पहले दिखाई पड़ेगा और उससे पश्चिम के स्थानों में उसके बाद। यदि दो स्थानों के देशांतर में 10° का अंतर है तो सूर्योदय के समय में 10 x 4=40 मिनट का अनतर होगा, जबकि दोनो जगहों के अक्षांश बराबर हों। इस प्रकार हम पाते हैं कि किसी देश या क्षेत्र में विभिन्न देशांतरों पर स्थित जगहों के लिए स्थानीय माध्यमान समय अलग-अलग होंगे। आज के युग में इस समय अन्तर के कारण दिन-प्रतिदिन के कार्य व्यवहार में कई प्रकार की दिक्कतें आ सकती हैं।

बम्बई का अक्षांश 18°58' (उत्तर) तथा देशांतर 72°50' (पूर्व) है तथा कलकत्ता का अक्षांश 22°35' (उत्तर) तथा देशांतर 88°23' (पूर्व) है। अक्षांश में सिर्फ 3°37' का अन्तर है जबकि देशांतर में 15°33' का अन्तर है। इनके स्थानीय समय में अन्तर होगा 15°33' x 4 = 62 मिनट 12 सेकण्ड अर्थात् 1 घण्टे 2 मिनट 12 सेकण्ड। बम्बई में मध्याह्न के समय वहां का आदमी कहेगा कि दोपहर के 12 बज रहा है। जबकि कलकत्ता का आदमी उसी समय कहेगा कि नहीं अभी अपराह्न का 1 बजकर 2 मिनट 12 सेकण्ड का समय है। समय में इन अन्तरों के कारण रेलवे, हवाई जहाज, रेडियो, टेलिविजन आदि प्रत्येक कार्य व्यवहार में

बड़ी दिक्कतें होगी, जब हम हर स्थान के लिए अलग-अलग समय की गणना करेंगे। इसका हल इस प्रकार निकाला गया कि एक देश में या एक क्षेत्र (Zone) में एक मानक मध्याह्न रेखा (Meridian) को आधार मानकर वहां के समय को सारे देश या क्षेत्र-विशेष के लिए मानक समय मान लिया जाता है। इसे उस देश का मानक समय या क्षेत्रीय मानक समय कहा जाता है।

भारत में मानक मध्याह्न रेखा (Standard meridian) 82°30 (पूर्व) को मान लिया गया है, जो वाराणसी के नजदीक से गुजरता है। इस स्थान के मानक समय को भारतीय मानक समय (Indian Standard Time) कहते हैं जिसे पूरे देश में व्यवहार में लाया जाता है। इसी प्रकार दूसरे देश या क्षेत्रों ने अपने मानक समय बना लिए हैं। एन.सी. लाहिड़ी के अनुसार 'लग्न सारणी' (Table of Ascendant) के अंतिम पृष्ठों को देखने से पता चलता है कि प्रत्येक देश या क्षेत्र ने अपने मानक समय इस प्रकार रखे हैं कि उनका ग्रीनविच मध्यमान समय से अन्तर आधे घण्टे के गुणक में हों। भारतीय मानक समय और ग्रीनविच मध्यमान समय में 5½ घण्टे का अन्तर है।

समय की ईकाईयाँ

सूर्य सिद्धान्त के अनुसार

6 प्राण	=1 पल (या विनाड़ी)
60 पल	=1 घटी (या नाडि)
60 घटी	=1 दिन (सावन दिन या सौर दिन)
21,600 प्राण	=1 दिन = 86,400 सेकण्ड
100 त्रुटि	=1 तत्पर
30 तत्पर	=1 निमिष
18 निमिष	=1 काष्टा
30 काष्ठा	=1 क.ला
30 कला	=1 घटिका
2 घटिका	=1 मुहूर्त
30 मुहूर्त	=1 दिन (नक्षत्र)

आधुनिक

60 सेकण्ड = 1 मिनट

60 मिनट = 1 घण्टा

24 घण्टा = 1 दिन

अंश (डिग्री) एवं राशियां

विकला 60" (सेकण्ड) = 1' मिनट (कला)

कला 60' (मिनट) = 1° (डिग्री) अंश

अंश 30° (डिग्री) = 1^s (राशि) (Sign)

12 (राशि) = भचक्र (Zodiac)

या (360°)

आकाश में दूरी नापने की तीन पद्धतियां हैं–

(1) प्रकाश वर्ष, (2) खगोलीय ईकाई, तथा (3) पारसेक (Parsec)

प्रकाश वर्ष (Light years)

प्रकाश की गति 1,86,000 मील या 3,00,000 कि.मी. प्रति सेकण्ड है। इस गति से प्रकाश 1 वर्ष में जो दूरी तय करता है उसे 1 प्रकाश वर्ष कहते हैं।

प्रकाश वर्ष = $3,00,000 \times 60 \times 60 \times 24 \times 365.25$ कि.मी.

या 1 प्रकाश वर्ष = 9.46×10^{12} कि.मी.

= 94.6 खरब कि.मी.

खगोलीय ईकाई (Astronomical Unit)

पृथ्वी की कक्षा के वृहत् व्यास के आधे भाग (Semi major axis) को एक खगोलीय ईकाई कहते हैं। दूसरे शब्दों में–

खगोलीय ईकाई = 1/2 (पृथ्वी की सूर्य से अधिकतम दूरी +पृथ्वी की सूर्य से निकटतम दूरी)

एक खगोलीय ईकाई (AU) = 930 लाख मील

दूसरे शब्दों में पृथ्वी की सूर्य के चारों ओर घूमने की कक्षा में अधिकतम दूरी की बिन्दुओं में जो दूरी है वह 2 AU (खगोलीय ईकाई) के बराबर है। पृथ्वी की सूर्य से मध्यम दूरी के रूप में भी खगोलीय ईकाई को मान सकते हैं।

पारसेक (Parsec)

1" पैरालेक्स के अनुकूल जो दूरी हो उसे 1 पारसेक कहते हैं।

1 पारसेक = 2,06,265 खगोलीय ईकाई (Au)
= 3.26 प्रकाश वर्ष
= 3.086×10^{13} कि.मी.

यह दूरी पैरालेक्स के अनुसार है तथा उसके विलोमानुपाती (Inversely proportionate) है। यदि पैरालेक्स 0.001 है तो दूरी 1000 पारसेक हो जाएगा न कि 1/1000 पारसेक।

स एक स्थिर तारा है।

दूरी पृ$_1$, पृ$_2$ = 2 (ख. ई)

जहां पृ$_1$ तथा पृ$_2$ पृथ्वी की

वृहत्-अक्ष पर दो स्थितियां हैं

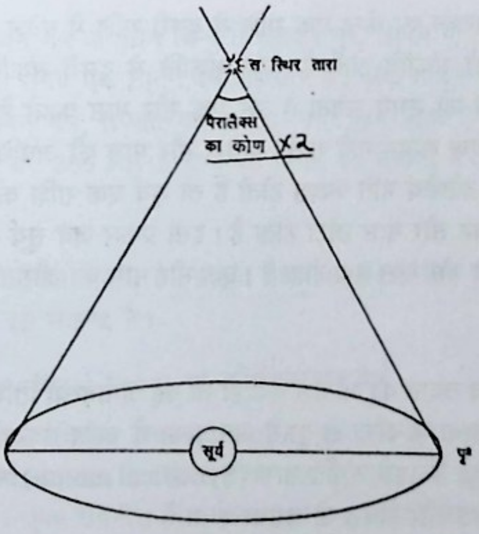

पृथ्वी का भ्रमण मार्ग

नागर दिन (Civil day) सा सावण दिन

एक मध्य रात्रि से दूसरी मध्य रात्रि तक का समय एक नागर दिन है। प्राचीन मान्यता से एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक का समय एक नागर दिन माना

जाता है। यह 24 सौर घण्टों के बराबर होता है। औसत सौर दिवस = नक्षत्र घंटों में 24 घण्टे 3 मिनट 56.5 सेकण्ड।

साम्पात दिवस (Sidereal Day)

एक नक्षत्र के उदय होने से लेकर पुनः उसके उदय होने में लगा समय एक साम्पात दिवस होता है। यह सौर दिवस घण्टों में लगभग 23 घण्टे 56 मिनट 4 सेकण्ड के बराबर होता है।

चान्द्र दिवस या तिथि

एक तिथि से दूसरी तिथि तक का औसत समय एक चान्द्र दिवस है। चंद्रमा की सूर्य से प्रत्येक 12° की कोणीय दूरी, एक-एक तिथि बनाती है। इसका औसत समय 23 घण्टे 37 मिनट 28 सेकण्ड है।

मास (Month)

सौर मास

जब सूर्य-मण्डल का केन्द्र एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करता है तो यह दूसरी राशि की संक्रांति होती है। एक संक्रांति से दूसरी संक्रांति तक सूर्य को भ्रमण करने में जो समय लगता है उसे एक सौर मास कहते हैं। चूंकि सूर्य की कोणीय गति एक समान नहीं रहती, प्रत्येक सौर मास की अवधि में थोड़ा अन्तर होता है। जब कोणीय गति ज्यादा होती है तो सूर्य एक राशि को जल्दी पार कर लेता है तथा वह सौर मास छोटा होता है। इसी प्रकार जब सूर्य की कोणीय गति कम होती है तो सौर मास बड़ा होता है। एक सौर मास का औसत समय 30.438।

चान्द्र मास

जब सूर्य एवं चंद्रमा का भोगांश एक हो तो वह अमावस्या तिथि का अन्त होता है। एक अमावस्या के अन्त से दूसरी अमावस्या के अन्त तक के समय को एक चान्द्र मास कहते हैं। इसे संयुति मास (Synodical month) भी कहते हैं। यह 29.5306 औसत सौर दिवस के बराबर होता है।

परिमास (Anomalistic month) या कोणिकान्तर मास

चंद्रमा द्वारा एक भूमिनीच (Perigee) से दूसरी भूमिनीच विन्दु तक पहुंचने में लगे समय को परिमास (Anomalistic) कहते हैं। यह 27.5546 औसत सौर दिवस के बराबर है।

पात-मास (Nodical month)

चंद्रमा द्वारा एक आरोही पात (Ascending Node) से दूसरे आरोही पात तक पहुंचने में लगे समय को एक पात-मास (Nodical month) कहते हैं। यह 27. 2122 मध्यमान सौर दिवस के बराबर है। यह नक्षत्र मास (27.32 दिन) से कम होता है क्योंकि एक मास में राहु (आरोही पात) भचक्र में चंद्रमा की ओर थोड़ा पीछे खिसक जाता है।

वर्ष

खगोलशास्त्र के अनुसार वर्ष कई प्रकार के होते हैं।

सम्पात वर्ष (Sidereal year)

यह पृथ्वी द्वारा सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करने में लगा समय है जो 365 दिन 6 घण्टे, 9 मिनट 10 सेकण्ड या 365.256 दिन के बराबर है।

सायन वर्ष

सूर्य द्वारा सायन मेष के प्रथम बिन्दु से चलकर पुनः सायन मेष के प्रथम बिन्दु तक आने में लगा समय एक सायन वर्ष कहलाता है। चूंकि सायन-मेष बिन्दु स्थिर नहीं है, एक सायन वर्ष, सम्पात वर्ष से 20 मिनट कम होता है। इसका समय 365.2422 दिन या, 365 दिन 5 घण्टे 48 मिनट 45 सेकण्ड है।

कैलेण्डर वर्ष

यह वर्ष की औसत अवधि है। इसका मान 365.2425 दिन या 365 दिन 5 घण्टे 49 मिनट 12 सेकण्ड है।

परिवर्ष (Anomalistic Year) या कोणिकान्तर वर्ष

पृथ्वी द्वारा एक रविनीच (Perihelion) से पुनः रविनीच तक आने में लगा समय एक परिवर्ष कहलाता है। रविनीच का अर्थ है, जब पृथ्वी सूर्य के निकटतम दूरी पर होता है। चूंकि रविनीच बिन्दु (Perihelion) अपनी कक्षा में प्रतिवर्ष 11 सेकण्ड खिसकती है तथा 108 हजार वर्ष में एक पूरा चक्कर लगाती है, यह वर्ष थोड़ा सा बड़ा होता है अर्थात् 365.26 दिन या 365 दिन 6 घण्टे 13 मिनट एवं 53 सेकण्ड।

चान्द्र वर्ष–12 चान्द्रमास का एक चान्द्र वर्ष होता है। अर्थात् 12 × 29.5306 दिन या, 354.3672 दिन (लगभग)

चान्द्र-सौर वर्ष (Luni Solar Year)

वैदिक काल से ही भारतवर्ष में सौर वर्ष तथा चान्द्रमास दोनों का व्यवहार होता आया है। दोनों के सम्मिश्रण को चान्द्र-सौर वर्ष के नाम से जानते हैं। इनमें से एक के बारे में ऋग्वेद तथा दूसरे के बारे में अर्थववेद में बताया गया है। वाराहमिहिर ने अधिक, क्षय तिथियां तथा अधिक मास में कुछ संशोधन किये थे। आजकल पंचांगों में जिस चान्द्र-सौर वर्ष का प्रयोग हो रहा है और जिसके आधार पर अधिकतर सामाजिक उत्सव/धार्मिक त्यौहार आदि मनाये जाते हैं, यह चान्द्र मास एवं सौर वर्प का मिश्रित स्वरूप है। प्रत्येक 19 वर्ष में 7 मास बढ़ा दिये जाते हैं जिन्हें अधिक मास या मल मास कहते हैं। (पृष्ठ 37 देखें)। एक वर्ष में 13 महीने करने के लिए जिस सिद्धान्त का प्रयोग किया जाता है वह है—कि जब एक ही सौर मास में दो अमावस्या का अन्त हो रहा हो, वह महीना जो पहली अमावस्या के बाद पड़ता हो, उसे दुबारा दूसरी अमावस्या के बाद एक महीने और बढ़ा दिया जाएगा अर्थात् एक ही नाम के दो चान्द्र मास उस वर्ष होंगे। इन दो चान्द्र मासों के नाम (सौरमास-विशेष के लिए) उस सौर मास के आधार पर रखे जायेंगे। इस प्रकार प्रत्येक 2 या 3 वर्ष में 13 चान्द्र मासों का वर्ष होता है जिससे सौर एवं चान्द्र वर्षों के बीच जो अन्तर होता है उसे समायोजित (adjust) कर लिया जाता है। प्रत्येक 19 वर्ष में 228 सौर मास और लगभग 235 चंद्र मास होते हैं, अर्थात् 7 चंद्र मास अधिक होते हैं। इस कारण प्रत्येक 19 चन्द्र-सौर वर्षों में 7 बार अधिकमास करने होते हैं। चंद्र और सौर वर्षों का अगर समन्वय नहीं करें तब लगभग 32-1/2 सौर वर्षों में, 33-1/2 चंद्र वर्ष हो जावेंगे। अगर केवल चंद्र वर्ष से ही चलें तब अगर दीपावली नवम्बर में आती है तब 19 वर्षों में यह 7 मास पहले अर्थात् अप्रैल में आ जावेगी और इन त्यौहारों व धार्मिक पर्वो का ऋतुओं से कोई सम्वन्ध नहीं रह जावेगा। इस बाधा को दूर करने के लिये चंद्र-सौर वर्ष बनाया।

अधिकमास या मलमास का उदाहरण

17 सितम्बर, 2001 को अमावस्या का अन्त 15 बजकर 57 मिनट पर हो रहा है। उस समय सूर्य कन्या राशि में 0°43′ पर है। 16 अक्टूबर, 2001 को अमावस्या का अन्त 24 बजकर 53 मिनट पर अर्थात् 17 अक्टूबर, 2001 को रात्रि में 0 घण्टे 53 मिनट पर हो रहा है। उस समय सूर्य कन्या राशि में 29°37′ का है।

दोनों चंद्र मास सूर्य के कन्या राशि में होने पर ही आरम्भ हो रहे हैं अर्थात् कन्या की संक्रांति और तुला की संक्रांति के मध्य ही आरम्भ हो रहे हैं। इस समय सूर्य मास अश्विन होने के कारण इन दोनों मासों का नाम अश्विन ही रहेगा।

अमान्त में दोनों चंद्र मास 18 सितम्बर, 2001 से 16 अक्टूबर, 2001 तक और 17 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक हैं। पहला मास (18 सितम्बर से 16 अक्टूबर तक) मलमास या अधिक मास कहलायेगा और दूसरा शुद्ध। पूर्णिमान्त मास एक पक्ष पहले आरम्भ होता है अर्थात् 3 सितम्बर से 17 सितम्बर तक शुद्ध अश्विन कृष्ण पक्ष और 18 सितम्बर, 2001 से 16 अक्टूबर तक का अधिक मास या मल मास (इसमें पहले मास शुक्ल पक्ष और दूसरे का कृष्ण पक्ष आता है) और 17 अक्टूबर से 1 नवम्बर तक का शुद्ध अश्विन का शुक्ल पक्ष होगा। इस प्रकार हमने देखा के दोनों प्रकार के मासों में मल मास 18 सितम्बर 2001 से 16 अक्टूबर 2001 तक है।

क्षय मास

जिस चंद्रमास (एक अमावस्या के अन्त से दूसरी अमावस्या के अन्त तक) में दो संक्रांतियां आ जावें, उसमें एक मास का क्षय हो जाता है, यह कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, और माघ इन 4 मास में ही होता है अर्थात् नवम्बर से फरवरी तक ही हो सकता है। इसके पहले तीन मासों के अन्दर पहली बार एक अधिकमास जिसे **'संसर्प मास'** कहते हैं। और इस क्षय मास के बाद के तीन मासों के अन्दर दुबारा अधिक मास अवश्य होता है जिसे **'मलिम्लुच मास'** कहते हैं। एफैमैरीज और पंचांगों आदि में पहला अधिक मास और क्षय मास आमतौर पर नहीं दिखाया जाता है। क्षयमास के बाद वाले अधिकमास को ही दिखाया जाता है।

उदाहरणः 1982-83 में हुआ

नीचे अमावस्यां के अन्त का समय अर्थात् चंद्र मास आरम्भ होने का समय और उस समय सूर्य के भोगांश दिये गए हैं–

तारीख	चंद्रमास आरम्भ का समय		सूर्य के भोगांश		
	घंटे	मिनट	राशि		
17-9-1982	17	39	5	0	41
17-10-82	5	34	5	29	41
15-11-82	20	40	6	29	41

100 से ही नहीं वल्कि 400 से भी भाज्य है उस वर्ष 366 दिन होंगे अर्थात् वह लीप वर्ष होगा।

चूंकि 100 वर्षों में 24.22 दिन अधिक था, इसलिए 24 दिन तो इन वर्षों में, जैसे 4, 8, 12 .... 96 तक (पर 100 नहीं) में जोड़ दिये और 0.22 x 4 = 0.88 या लगभग 1 दिन 400 वर्षों में जोड़ दिया गया। चूंकि एक साधारण वर्ष के दिनों की संख्या 365 से 7 का भाग देने से शेष 1 बचता है। अतः यदि 1 जनवरी 1949 को शनिवार पड़ता था तो 1 जनवरी 1950 एक वार आगे अर्थात् रविवार पडेगा। एक शताब्दी अर्थात 100 वर्षों के अतिरिक्त दिनों की संख्या 100+24 (लीप दिवस)=124 दिन होगा जो पूर्ण सप्ताहों के अतिरिक्त है। इसमें 7 से भाग देने पर पुनः सिर्फ 5 बचेगा। अर्थात् 100 वर्षों (एक शताब्दी) में आमतौर पर पूर्ण सप्ताहों को निकाल दें तो 5 शेष दिन होंगे। इस प्रकार 400 वर्षों में (4 शताब्दियों में) पूर्ण सप्ताहों को निकालकर शेष दिनों की संख्या होगी=20 (अर्थात् 4 शताब्दि × 5 शेष दिन) + 1 है यहां 1 इसलिए जोड़ा की 400वां वर्ष फिर लीप वर्ष होगा और 1 अतिरिक्त दिन जुड़ेगा। अर्थात् 400 वर्षों में 21 अतिरिक्त दिन आये। इसे 7 से भाग देने पर शेष शून्य (0) हो जाता है। जिसका अर्थ यह हुआ कि चार शताब्दी जब पूर्ण होगी तो पुनः नया वर्ष उस दिन से प्रारंभ होगा जिस दिन से 400 वर्ष पूर्व का वर्ष प्रारंभ हुआ था। उदाहरणार्थ 1 जनवरी 1201 को वही दिन होगा जो 1 जनवरी, 801, 1601 या 2001 को था/होगा।

उदाहरण–

अब हम एक उदाहरण द्वारा ग्रेगोरियन कैलेण्डर, जो वर्तमान में अंग्रेजी तारीखों के लिए प्रचलित हैं, के किसी तारीख को उस दिनका वार ज्ञात करेंगे।

आइये हम

4 मार्च, 1988 का वार ज्ञात करें।

1600 वर्ष के पूर्ण सप्ताहों के
अतिरिक्त दिनों की संख्या = 0

300 वर्ष के पूर्ण सप्ताहों के
अतिरिक्त दिनों की संख्या = 5 × 3 ÷ 7, शेष = 1

87 वर्ष के पूर्ण सप्ताहों के अतिरिक्त दिनों की संख्या	= 87 ÷ 7 शेष = 3
87 वर्षों में लीप वर्षों की संख्या ÷ 7	= 21 ÷ 7 शेष = 0
जनवरी, 1988 में पूर्ण सप्ताहों के अतिरिक्त दिनों की संख्या	= 31 ÷ 7, शेष = 3
फरवरी, 1988 में पूर्ण सप्ताहों के अतिरिक्त दिनों की संख्या	= 29 ÷ 7, शेष = 1
मार्च, 1988 में पूर्ण सप्ताहों के अतिरिक्त दिनों की संख्या	= 4 ÷ 7, शेष = 4
	कुल शेष = 12

अब 12 ÷ 7, में से शेष 5 बचता है।

सोमवार के लिए 1 मंगलवार के लिए 2, बुधवार के लिए 3, बृहस्पति के लिए 4, शुक्रवार के लिये 5. शनिवार के लिए 6, रविवार के लिए 0, या 7 की गिनती करेंगे।

चूंकि 4 मार्च को शेष 5 है अतः वार होगा शुक्रवार।

2. तिथि

चंद्रमा की गति भचक्र में सूर्य से तेज है। जब सूर्य और चंद्रमा भचक्र में ठीक एक भोगांश (longitude) पर आ जाते हैं तब वह क्षण अमावस्या (तिथि) का अन्त होता है। फिर चन्द्र का भोगांश सूर्य से अधिक होना प्रारंभ हो जाता है। भचक्र में कुल 360° का कोण होता है। जब चंद्रमा सूर्य के भोगांश पर (अमावस्या को) होता है तो उस क्षण उनके भोगांश का अन्तर शून्य (0) होता है। इसके बाद चंद्रमा के भोगांश का अन्तर सूर्य से बढ़ता जाता है और 360° पूर्ण कर चंद्रमा पुनः सूर्य के भोगांश पर आ जाता है जो दूसरी अमावस्या का अन्त है। एक अमावस्या के अन्त से दूसरी अमावस्या के अन्त तक का समय एक चांद्र मास होता है। एक चांद्र मास में 30 तिथियां होती हैं।

निम्न सारणी में तिथियां एवं उन तिथियों में चंद्रमा का सूर्य से भोगांश में अंतर दर्शाया गया है।

शुक्ल पक्ष			कृष्ण पक्ष		
तिथि का नाम	तिथि की संख्या	चंद्र एवं सूर्य के भोगांशों का अंतर	तिथि का नाम	तिथि की संख्या	चंद्र एवं सूर्य के भोंगांश का अंतर
प्रतिपदा	1	0° से 12°	प्रतिपदा	16	180° से 192°
द्वितीया	2	12° से 24°	द्वितीया	17	192° से 204°
तृतीया	3	24° से 36°	तृतीया	18	204° से 216°
चतुर्थी	4	36° से 48°	चतुर्थी	19	216° से 228°
पंचमी	5	48° से 60°	पंचमी	20	228° से 240°
षष्ठी	6	60° से 72°	षष्ठी	21	240° से 252°
सप्तमी	7	72° से 84°	सप्तमी	22	252° से 264°
अष्टमी	8	84° से 96°	अष्टमी	23	264° से 276°
नवमी	9	96° से 108°	नवमी	24	276° से 288°
दशमी	10	108° से 120°	दशमी	25	288° से 300°
एकादशी	11	120° से 132°	एकादशी	26	300° से 312°
द्वादशी	12	132° से 144°	द्वादशी	27	312° से 324°
त्रयोदशी	13	144° से 156°	त्रयोदशी	28	324° से 336°
चतुर्दशी	14	156° से 168°	चतुर्दशी	29	336° से 348°
मूर्णिमा	15	168° से 180°	अमावस्या	30	348° से 360°

जब चंद्रमा ठीक सूर्य के भोगांश से आगे बढ़ाता है तो प्रतिपदा (पहली तिथि) का प्रारंभ हो जाता है। 0° से 12° अन्तर तक पहली तिथि होगी। जब यह अन्तर 12° से अधिक हो जाता है तो द्वितीया तिथि का प्रारंभ हो जाता है। इसी प्रकार प्रत्येक 12° के अन्तर पर अगली तिथियों का प्रवेश हो जाता है।

एक चांद्र मास की कुल 30 तिथियां लगभग 29.5 दिनों में समाप्त हो जाती हैं; पूर्ण 30 दिनों में नहीं। चंद्रमा की गति कभी तेज जैसे 15° प्रति 24 घण्टे में तथा कभी धीमी जैसे 12° प्रति 24 घण्टे में होती है। इसलिए चंद्रमा एवं सूर्य के

भोगांश का अन्तर बढ़ने की दर भी परिवर्तित होती रहती है जिससे कि सभी तिथियां घण्टों में समान अवधि की नही होती। सूर्य एवं चंद्र की अपनी-अपनी गतियां उनके मन्दोच्च (Apogee) और शीघ्रोच्च (perigee) बिन्दुओं से दूरी पर निर्भर करती है।

चंद्रमा की गति कभी तेज और कभी धीमी होने के कारण कभी एक तिथि का क्षय एवं कभी एक ही तिथि दो दिनों की होती है। ऐसा इसलिए भी होता है कि भारतीय चांद्र कैलेण्डर के अनुसार सूर्योदय के समय जो तिथि रहती है, वही उस दिन की तिथि मान ली जाती है। सूर्योदयात् तिथि कभी तो कुछ मिनटों तक ही उस दिन हो सकती है और कभी अगले दिन सूर्योदय के बाद तक जा सकती है। जो तिथि एक सूर्योदय के बाद प्रारंभ होकर दूसरे सूर्योदय से पहले समाप्त हो जाए तो वह तिथि उस पक्ष में क्षय मानी जाती है। इसके विपरीत जो तिथि एक सूर्योदय से कुछ ही पहले प्रारंभ हो गई और अगले सूर्योदय से थोड़ा आगे तक चली गयी, वह तिथि उस पक्ष में दो दिनों की मानी जाती है। ऐसी पद्धति समाज में प्रतिदिन के कार्य को नियमित करने के लिए बनायी गई है।

तिथि की गणना करने के सूत्र :

$$\frac{\text{चंद्रमा का भोगांश} - \text{सूर्य का भोगांश}}{12}$$

उदाहरण–

12 अक्टूबर, 2014 को 11 : 30 बजे पूर्वाह्न (A.M.) में क्या तिथि है, इसकी गणना करें।

	सूर्य का भोगांश	चंद्रमा का भोगांश
13 अक्टूबर, 2014 को 5 : 30 प्रातः पर=	$5^{s}25^\circ31'$	$1^{s}23^\circ31'$
12 अक्टूबर, 2014 को 5 : 30 प्रातः पर=	$5^{s}24^\circ32'$	$1^{s}10^\circ28'$
24 घण्टे का अंतर=	$0^\circ59'$	$1^{s}13^\circ03'$
6 घण्टे का अंतर= नजदीकी मिनट पर	$0^\circ15'$	$3^\circ16'$
12 अक्टूबर, 2014 को 11 : 30 प्रातः पर=	$5^{s}24^\circ47'$	$1^{s}13^\circ44'$
चूंकि 1 राशि = 30° अतः =	$174^\circ47'$	$43^\circ44'$

$$\text{सूत्र के अनुसार : } \frac{\text{चंद्रमा का भोगांश} - \text{सूर्य के भोगांश}}{12}$$

$$= \frac{43°44' - 174°47'}{12}$$

$$= \frac{403°44' - 174°47'}{12}$$

(चूंकि 43°44′, 174°47′ से कम है इसलिए 43°44′ में 360° जोड़ देंगे)

$$= \frac{228°57'}{12}$$

$$= 19\frac{0°57'}{12}$$

इसका अर्थ यह हुआ कि 19 तिथि (पूर्ण) बीत चुकी है तथा 20वीं तिथि चल रही है। 20वीं तिथि के 12° में से 0°57′ भी बीत चुका है।

किसी भी क्षण की तिथि उपर्युक्त विधि से ज्ञात करेंगे।

अब हम देखेंगे की किस प्रकार तिथि का क्षय एवं वृद्धि होती है।

उदाहरण

तिथि के अधिक होने का उदाहरण 14 तथा 15 दिसम्बर 2014 को लें। इन दोनों तारीखों को दिल्ली में सूर्योदय 7 : 06 बजे सुबह में हो रहा है। 14 दिसम्बर 2014 को 7 : 6 बजे सुबह में तिथि इस प्रकार निकालेंगे–

$$\text{तिथि} = \frac{\text{चंद्रमा का भोगांश} - \text{सूर्य के भोगांश}}{12}$$

$$\text{उदाहरण में (तिथि)} = \frac{4^s22°46' - 7^s27°53'}{12°}$$

(यहां चंद्र व सूर्य के भोगांश 14/12/2014 के 7 : 6 प्रातः के हैं।)

$$= \frac{360° + 142°46' - 237°53'}{12}$$

$$= \frac{264°53'}{12}$$

$$= 22\frac{0°53'}{12}$$

बाइसवीं तिथि खत्म हो चुकी है और 23वीं अर्थात् कृष्ण पक्ष अष्टमी चल रही है।

15-12-2014 को 7 : 06 बजे सुबह तिथि की गणना करेंगे।

$$\text{तिथि} = \frac{\text{चंद्रमा का भोगांश} - \text{सूर्य के भोगांश}}{12}$$

$$= \frac{5^s 4°41' - 7^s 28°54'}{12}$$

$$= \frac{360° + 154°41' - 7^s 28°84'}{12}$$

$$= \frac{514°41' - 238°54'}{12}$$

$$= \frac{275°47'}{12} = 22\frac{11°47'}{12}$$

बाइसवीं तिथि समाप्त होकर तेइसवीं तिथि अर्थात् कृष्ण पक्ष की अष्टमी चल रही है।

इस प्रकार 14/12/2014 कृष्ण और 15/12/14 अष्टमी ही कही जाएगी। एक ही तिथि दो दिनों में चली गई।

अब, किसी प्रकार एक ही दिन में दो तिथियां हो जाती हैं अर्थात् एक तिथि का क्षय हो जाता है, उदाहरण के साथ वर्णन किया जाता है–

उदाहरण

5-11-2014 तथा 6-11-2014 को लें। इन दो तारीखों को सूर्योदय 6 : 36 बजे सुबह हो रहा है। 5-11-2014 को तिथि इस प्रकार है–

$$\text{तिथि} = \frac{\text{चंद्रमा का भोगांश} - \text{सूर्य के भोगांश}}{12}$$

$$= \frac{11^s 23°54' - 6^s 18°28'}{12}$$

(चं. और सू. के भोगांश प्रातः 6 : 36 के हैं।)

$$= \frac{353°54' - 198°28'}{12}$$

$$= \frac{155°26'}{12}$$

$$= 12\frac{11°26'}{36}$$

अर्थात् 5 नवम्बर 2014 को सुबह छः बजकर 36 मिनट पर 12वीं तिथि बीत चुकी है और तेरहवीं तिथि चल रही है। अर्थात् त्रयोदशी है।

6 नवम्बर 2014 को 6 : 36 बजे सुबह तिथि इस प्रकार होगी।

$$= \frac{0^s8°00' - 6^s19°28'}{12}$$

$$= \frac{8° - 199°28'}{12°}$$

चूंकि चं. का भोगांश, सूर्य के भोगांश से कम है, इसमें 360° जोड़ देंगे।

$$= \frac{368° - 199°28'}{12}$$

$$= \frac{168°32'}{12°}$$

$$= 14\frac{0°37'}{12°}$$

इससे स्पष्ट होता है कि 6 नवम्बर, 2014 को 6 : 36 बजे सुबह सूर्योदय के समय पन्द्रहवीं तिथि यानि पूर्णिमा चल रही है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 14वीं तिथि, दोनों में से किसी भी दिन सूर्योदय के समय नहीं पड़ रही है अतः 14वीं तिथि का क्षय हो गया है। ऐसा भी कहा जा सकता है कि 5 नवम्बर, 2014 को 13वीं एवं 14वीं तिथि का मिश्रण है। इस प्रकार तिथि के बढ़ने एवं तिथि के क्षय होने को पंचांगों में क्रमशः अधिक तिथि तथा क्षय तिथि कहते हैं।

3. नक्षत्र

इसी पुस्तक में पाठ 5 में भचक्र को 27 नक्षत्रों में विभाजन दिखाया गया है। भोगांश के अनुसार नक्षत्रों की संख्या निम्न प्रकार ज्ञात की जाती है–

360° में 27 नक्षत्र हैं–

$$\text{अतः एक नक्षत्र} = 360° = 13°\frac{1}{3} \text{ या, } 13°20' = 800'$$

उदाहरण–चं. का भोगांश 245°16 है। यह कौन से नक्षत्र में है, यह ज्ञात करना है।

$$\text{नक्षत्रों की संख्या} = \frac{245°16'}{13°20'}$$

$$= \frac{(245' \times 60' + 16')}{(13 \times 60' + 20')}$$

$$= \frac{14700' + 16'}{780 + 20'}$$

$$= \frac{14716'}{800'} = 18\frac{316'}{800}$$

यानि चं 18 नक्षत्र पूरे कर चुका है।

और 19वां नक्षत्र (मूल नक्षत्र) का द्वितीय पाद या चरण चल रहा है। यदि शेष 1 से 200 के बीच है तो नक्षत्र का प्रथम चरण, 200 से 400 के बीच है तो द्वितीय चरण, 400 से 600 के बीच में है तो तृतीय चरण तथा 600 से 800 के बीच में है तो नक्षत्र का चतुर्थ चरण समझना चाहिए।

नक्षत्रों के नाम हैं–

1. अश्विनी	10. मघा	19. मूल
2. भरणी	11. पूर्वा फाल्गुनी	20. पूर्वा षाढ़ा
3. कृत्तिका	12. उत्तरा फाल्गुनी	21. उत्तरा षाढ़ा
4. रोहिणी	13. हस्त	22. श्रवण
5. मृगशिरा	14. चित्रा	23. धनिष्ठा
6. आर्द्रा	15. स्वाति	24. शतभिषा
7. पुनर्वसु	16. विशाखा	25. पूर्वा भाद्रपद
8. पुष्यम	17. अनुराधा	26. उत्तरा भाद्रपद
9. अश्लेषा	18. ज्येष्ठा	27. रेवती।

इस प्रकार भोगांश के राशि एवं अंशों को कला में बदलकर 800 से भाग देने से–भागफल द्वारा हम गत नक्षत्रों की संख्या एवं शेष द्वारा हमें वर्तमान नक्षत्र का जितना भाग 800' में से बीत चुका है, ज्ञात हो जाता है। किसी भी ग्रह का निरायन भोगांश यदि मालूम है तो हम उसका नक्षत्र ज्ञात कर सकते हैं।

केवल नक्षत्र कहने से (जो पंचांग में भी संदर्भ दिया होता है) यह समझना चाहिए कि चंद्रमा उस नक्षत्र में है। इसी से हम जातक के जन्म के समय शेष दशा निकालते हैं तथा मुहूर्त में इसी नक्षत्र का उपयोग करते हैं।

4. करण–

प्रत्येक तिथि में दो करण होते हैं। इनमें से पहला करण तिथि के मध्य में समाप्त होता है तथा दूसरा करण तिथि के अन्त में। करण का समय तिथि के समय को विभाजित करके नहीं ज्ञात करते हैं। जिस प्रकार चंद्रमा की सूर्य से प्रत्येक 12° दूरी पर एक तिथि होती है, उसी प्रकार 6° के अंतर पर एक करण पूरा हो जाता है।

तिथि ज्ञात करने की विधि है–

$$\text{तिथि} = \frac{\text{चंद्रमा का भोगांश} - \text{सूर्य के भोगांश}}{12}$$

भागफल 1 तिथि बतलाता है।

$$\text{करण ज्ञात करने का सूत्र है} = \frac{\text{चं. का भोगांश} - \text{सू का भोगांश (अंशों में)}}{6^\circ}$$

भागफल+1 वर्तमान करण की संख्या बतायेगा।

करणों के नाम हैं–

1. बव
2. बालव
3. कौलव
4. तैतिल
5. गर
6. वणिज
7. विष्टि

यह मास में 8 बार पुनरावृत्तिं करते हैं 8 × 7=56 करण इसमें चार निम्नलिखित करण और जोड़े जाते हैं।

शकुनि

चतुष्पाद

नाग

किंस्तुघ्न

30 तिथियों में 56 + 4=60 करण होते हैं। दूसरे शब्दों में कुल 11 नामों के करण होते हैं जिनमें 4 करण मास में सिर्फ एक ही बार आते हैं तथा सात करण ऐसे हैं जो 8-8 बार पुनरावृत्ति करते हैं। प्रत्येक करण की अपनी विशेषता (लक्षण) हैं। विष्टी (भद्रा), शकुनि, चतुष्पाद, नाग एवं किंस्तुघ्न अशुभ माने जाते हैं। कर्मकाण्ड़ एवं धर्मानुष्ठान आदि कार्यों के मुहूर्त के लिए अन्य करण शुभ माने गये हैं।

उदाहरण–

18 जनवरी, 1992 को 7 : 15 बजे सुवह का समय ले लें।

$$\text{कर्ण} = \frac{\text{चंद्रमा का भोगांश} - \text{सूर्य के भोगांश}}{6}$$

$$= \frac{2^s 7°42' - 9^s 3°28'}{6°}$$

$$= \frac{67°42' - 273°28'}{6°}$$

चूंकि चंद्रमा का भोगांश सूर्य के भोगांश से कम है, इसमें 360° जोड़ेंगे–

$$= \frac{427°42' - 273°28'}{6°}$$

$$= \frac{154°14'}{6°}$$

$$= 25\frac{4°14'}{6°}$$

अर्थात् 26वां करण बीत रहा था या 13वीं तिथि (26÷2) का दूसरा करण बीत रहा था। निम्न सारणी से देख सकते हैं कि 13 वीं तिथि का दूसरा करण, की संख्या 4 हे अर्थात् तैत्तिल है–

तिथि	प्रथम	द्वितीय	तिथि	प्रथम	द्वितीय
1	किंस्तुघ्न	1	16	2	3
2	2	3	17	4	5
3	4	5	18	6	7
4	6	7	19	1	2
5	1	2	20	3	4
6	3	4	21	5	6
7	5	6	22	7	1
8	7	1	23	2	3
9	2	3	24	4	5
10	4	5	25	6	7
11	6	7	26	1	2
12	1	2	27	3	4
13	3	4	28	5	6
14	5	6	29	7	शंकुनि
15	7	1	30	चतुष्पाद	नाग

5. योग

सूर्य एवं चंद्रमा की संयुक्त चाल के फलस्वरूप विभिन्न योग बनते हैं। खास मुहूर्तों के लिए ये योग शुभ या अशुभ होते हैं–

योगों के नाम इस प्रकार हैं–

1. विष्कुंभ	10. गण्ड	19. परिघ
2. प्रीति	11. वृद्धि	20. शिव
3. आयुष्मान	12. ध्रुव	21. सिद्ध

4. सौभाग्य	13. व्याघात	22. साध्य
5. शोभन	14. हर्षण	23. शुभ
6. अतिगण्ड	15. वज्र	24. शुक्ल (शुक्र)
7. सुकर्म	16. सिद्धि	25. ब्रह्म
8. धृति	17. व्यतिपात	26. ऐन्द्र
9. शूल	18. वरीयान	27. वैधृति

योगों के नामकरण से ही उनकी शुभता या अशुभता का परिचय मिलता है।

$$\text{प्रत्येक योग} = \frac{360^\circ}{27} = 13^\circ 20' = 800'$$

योग की गणना करने का सूत्र

$$\text{कर्ण} = \frac{\text{सूर्य के भोगांश + चंद्रमा का भोगांश (कलाओं में)}}{800}$$

उदाहरण–जनवरी 18, 1992 को 5:30 बजे सुबह, जब चंद्रमा का भोगांश है $2^s 6^\circ 36'$ और सूर्य का भोगांश है $9^s 3^\circ 23'$ उस समय का योग ज्ञात करना है।

$$\text{योग} = \frac{9^s 3^\circ 23' + 2^s 6^\circ 36'}{800'}$$

$$= \frac{(9\times 30 + 3^\circ)\times 60 + 23' + [(2^s \times 30) + 6^\circ]\times 60 + 36'}{800}$$

$$= \frac{16403' + 3996'}{800}$$

$$= \frac{20399'}{800}$$

$$= 25\frac{399'}{800}$$

अर्थात् 25 योग बीत गया है 26वां योग (ऐन्द्र) चल रहा था।

अध्याय 10

उपग्रह एवं तारे

उपग्रह एवं प्रकाशहीन ग्रह (क्रांतिवृत्त में स्थित ज्योतिषीय संवेदनशील बिन्दु) (Astronomical points on the ecliptic)

ये गौण (secondary) ग्रह है, जिन्हें भारतीय खगोल शास्त्र में उपग्रह कहा गया है। वास्तव में त्रियक (Tertiary) ग्रह भी होते हैं। गौण एवं त्रियक ग्रह अदृष्ट हैं तथा इनका भौतिक अस्तित्व नहीं है। वस्तुतः ये सूर्य के भोगांश पर आधारित गणना करके निकाले हुए ज्योतिर्षीय संवेदनशील बिन्दु हैं। इन विन्दुओं का जातक की जन्म कुंडली में तथा व्यक्ति विशेष (या देश) की वर्ष कुंडली में महत्वपूर्ण स्थान होता है।

ये उपग्रह-धूम, पथ, परिधि, इन्द्र-चाप (व्यतीपात) एवं शिखि है। सूर्य के भोगांश द्वारा इनकी गणना करने की विधि निम्नलिखित है–

1. धूम :	सूर्य का निरायन भोगांश	(स)
	+133°20'	
	(सूर्य से 10 नक्षत्र आगे)	133°20 + स
2. पथ :	360° – धूम	या, 226°40' – स
3. परिधि :	पथ + 180°	या, 46°40' – स
4. इन्द्रचापः	360° – परिधि	या, 313°20' + स
शिखि	इन्द्रचाप + 16°40'	या, 330° + स

उदाहरण–मान लिया किसी जन्म कुंडली में सूर्य, मिथुन राशि में 12° पर स्थित है। तो सूर्य का भोगांश = 72° (स)

1. धूम =72° +133°20' = 205°20' (133°20'+72°= 205°20')
2. पथ =360° -205°20' = 154°40' (226°40'–72°= 154°40')

3. परिधि =154°40' +180°= 334°40' (46°40'-72°= 334°40')

4. इन्द्रचाप =360° −334°40'= 25°20' (313°20+72°= 25°20')

5. शिखि =25°20 +16°40'= 42° (330°+72°= 42°)

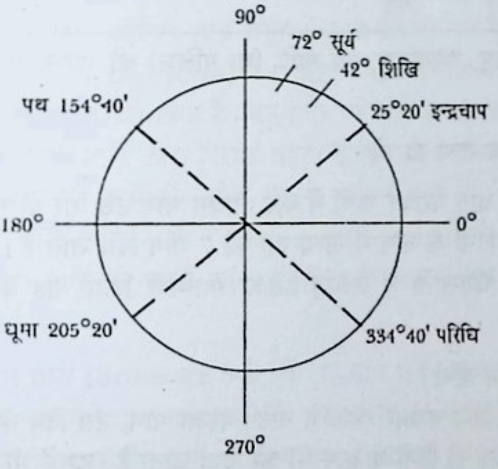

उपरोक्त संवेदनशील बिन्दु, जिनकी गणना सूर्य के भोगांश के आधार पर की गई है, इन ग्रहोंके उपग्रह माने गये हैं जैसे मंगल (धूम), राहु (पथ), चंद्रमा (परिधि), शुक्र (इन्द्रचाप) तथा केतु (शिखि या उपकेतु) अन्य चार ग्रहों सूर्य, बुध, बृह. एवं शनि के (उपग्रह संवेदनशील बिन्दुओं) की गणना करने के लिए दूसरी विधि का प्रयोग करते हैं।

उपग्रह (ज्योतिषीय विन्दु)

ज्योतिष शास्त्र (खगोल शास्त्र नहीं) के अनुसार नौ ग्रहों से संबंधित नौ उपग्रह है। ये उन ग्रहों के (प्रतिरूप-adverse) माने गये हैं।

उपग्रह–

	काल	परिधि	धूम	अर्द्धयम	यम-कंटक	इन्द्रचाप	गुलिक
	↓	या	↓	या	↓	या	या
		परिवेश		अर्धप्रहर		कोदण्ड	मांदि
ग्रहों के अंश	सूर्य	चंद्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि

	पथ	शिखि
	या	या
	व्यतिपात	उपकेतु
	↓	↓
ग्रहों के अंश	राहु	केतु

काल, अर्द्धयम्, यमकंटक, एवं मांदि (या गुलिक) की गणना करने की विधि इस प्रकार है–

दिन के समय जन्म हो तो–

दिनमान को आठ बराबर भागों में बांटे। प्रथम भाग उस वार के स्वामी ग्रह को तथा सप्ताह के दिनों के क्रम में अन्य ग्रह को 7 भाग दिये जाते हैं। आठवां भाग निरोश (खाली) कहलाता है अर्थात् इसका स्वामित्व किसी ग्रह को नहीं दिया जाता।

रात्रि के समय जन्म

रात्रिमान को आठ बराबर भागों में बांटे। पहला भाग, उस दिन के वार-पति से पांचवे ग्रह (सप्ताह के दिनों के क्रम में) को दिया जाता है। इसमें भी आठवां भाग निरीश (बिना स्वामित्व का) होगा।

रविवार को : रात्रि में प्रथम भाग यमघण्टक (स्वामी बृहस्पति) फिर क्रमशः कोदण्ड (शुक्र), गुलिक (शनि), काल (सूर्य), परिधि (चं0), धूम (मंगल) अर्द्धयम् (बुध), अन्त में वह भाग जो किसी ग्रह को नहीं दिया गया है। प्रत्येक उपग्रह के समय-खंड (रात्रिमान या दिनमान के भाग) के प्रारंभ में लग्न निकाला जाता है। यह उस उपग्रह का भोगांश होगा।

तारे

आकाशीय गोल में तारे प्रदीप्त या स्व-प्रकाशित गैसीय पिंड है। तारों के समूह को नक्षत्र कहते हैं। ये नक्षत्र (तारों के समूह) पृथ्वी को शीर्ष बनाकर एक अत्यन्त छोटे आकार का ठोस कोण (Solid angle) बनाते हैं। तारा-समूह के मुख्य तारे को ग्रीक भाषा के अक्षर से संबोधित किया गया है। α (अल्फा) सबसे चमकीले तारे को कहते हैं। भारतीय खगोल शास्त्र में नक्षत्र के किसी चमकीले या महत्वपूर्ण तारे के नाम के आधार पर नक्षत्रों के नाम रखे गये हैं जैसे–रोहिणी, चित्रा आदि. तारे। कुछ तारों के अपने अलग नाम भी रखे गये हैं जैसे–स्पाईका, अन्टेरस, पोलारिस, आर्कटूरस, सिरियस आदि। हमारे सौर मंडल से सबसे नजदीक का तारा है-प्रोक्सिमा सेन्टूरी (Proxima Centauri)। परंतु यह भी काफी दूर

अर्थात् 4.2 प्रकाश वर्ष की दूरी पर है। आकाश में सबसे चमकीला दिखाई पड़ने वाला तारा लुब्धक (सिरियस, Cirius) भी 8.7 प्रकाश वर्ष दूर है। यह तारा, कैनिस मजोरिस (Canis Majoris) नामक तारा समूह में है। आर्कटूरस (स्वाति) या अल्फा बूट्स (α–Bootes) 36 प्रकाश वर्ष दूर है। अन्टेरस (ज्येष्ठा) वृश्चिक राशि में स्थित एक लाल तारा है जोकि 330 प्रकाश वर्ष दूर है। बेटेलगीज (Betelguese) (आद्रा) ओरियन तारा समूह में 310 प्रकाश वर्ष दूर है। रेगुलस (मघा) (अल्फा नियोनिस, α–Leonis) सिंह राशि में 425 प्रकाश वर्ष दूर है। एक प्रकाश वर्ष 5,880 अरब मील होता है। बहुत दूर पर होने के कारण इन तारों के कोणीय व्यास (बिम्ब) इतना छोटा दिखाई पड़ता है कि बहुत शक्तिशाली दूरबीन (Telescope) द्वारा भी इन्हें ठीक-ठीक नापना कठिन होता है। इसलिए इन्हें नापने के लिए एस्ट्रो-स्पेक्ट्रोस्कोप (Astro-spectroscope) पर निर्भर करना पड़ता है। विभिन्न तारों की चमक एवं तापमान अलग-अलग होते हैं और उनमें बहुत अन्तर होता है।

मुख्य अनुक्रम तारों (Sequence Star) के तापमान एवं चमक के आधार पर खींचा गया ग्राफ पर तारों द्वारा बनी पट्टी) के तारे वामन (Dwarfs) तारे होते हैं। सूर्य भी ऐसा ही एक तारा है। तारों के अन्य रूप हैं–दानव (Giant) तारे, श्वेत वामन, न्यूट्रान तारे एवं कृष्ण छिद्र (Black holes)।

तारों का जीवन क्रम इस प्रकार होता है–

एक सौर द्रव्यमान से 8 सौर द्रव्यमान तक के मुख्य अनुक्रम वर्ग के तारे 10 अरब सौर वर्ष रहते हैं। ये तारे पहले आकार में बड़े होते जाते हैं, जिसे लाल दानव (Red Giant) कहते हैं। फिर ये सिकुड़ना प्रारंभ करते हैं और श्वेत वामन (White Dwarf) का रूप ले लेते हैं। जो धीरे-धीरे ठंडे हो जाते हैं और अंत में एकदम गायब हो जाते हैं। 9 से 30 सौर द्रव्यमान के तारे का जीवन 1 करोड़ वर्ष होता है। ये पहले लाल दानव में परिवर्तित होते हैं, फिर सुपरनोवा के रूप में आने के बाद इनमें जबर्दस्त विस्फोट होता है जिसमें करोड़ों सूर्यों का प्रकाश निकलता है और सितारा छोटे-छोटे टुकड़ों मे बिखर जाता है। अन्त में एक घूमता हुआ न्यूट्रान सितारा रह जाता है। इन्हें पल्सर भी कहते हैं। यह पहले लाल दानव के रूप में परिवर्तित होते हैं। फिर इनकी कोर (केन्द्रीय पदार्थ) इतनी अधिक संकुचित हो जाती हे कि इसका घनत्व बहुत अधिक बढ़ जाता है। इसका घनत्व इतना प्रबल हो जाता है कि प्रकाश भी उसमें से होकर नहीं गुजर सकता। यह एक ब्लेक होल (Black hole) या कृष्ण छिद्र बन जाता है। जिसमें प्रकाश भी नहीं बच पाता।

तारों के स्पेक्ट्रम में पायी जाने वाली रेखाओं की प्रकृति के आधार पर उन्हें पुनः समूहों मे विभाजित किया गया है–O, B, A, F, G, K और M इन समूहों को स्पेक्ट्रमी वर्ग कहते हैं। 0 वर्ग के सितारे सबसे गर्म होते हैं उनके सतह का तापमान 30,000 से. ग्रे. होता है। जबकि M वर्ग के सितारे बहुत शीतल होते हैं और उनका तापमान 3000° से के आसपास होता है। हमारा सूरज जिसकी सतह का तापमान लगभग 6000° से0 ग्रे है, G वर्ग में आता है।

मुख्य अनुक्रम (Main sequence) वाले प्रारंभ में काफी गर्म तथा नीले रंग के होते हैं जैसे O या B वर्ग के तारे और बाद में धुंधले लाल रंग के, यथा M वर्ग के तारों में परिवर्तित होते हैं। HR (हट्र्ज-रसेल) रेखा चित्र सितारों के चरम कांतिमान (Lumonisity) एवं तापक्रम (Temperature) में संबंध दिखाने वाला ग्राफ होता है। इसमें तारों के सतही तापक्रम 3000° से 40,000° से.ग्रे. के विस्तार के लिए कांतिमान (Lumonisity) का संबंध प्रदर्शित किया जाता है। सूर्य की चमक (Lumonisity) को इकाई मान लिया गया है। अधिकतम कांतिमान सूर्य के कांतिमान से 1,000,000 गुणा है। मुख्य अनुक्रमी तारों का कांतिमान, लघुगणक पैमाने पर सतही तापक्रम का समानुपाती होता है। परंतु कुछ तारों के कांतिमान बहुत अधिक हैं जबकि उनके सतही तापक्रम अपेक्षाकृत कम है, जैसे बेटेलगूज तथा एन्टारस। इसके विपरीत सिरियस एवं प्रोसियोन B नामक तारों के अधिक सतही तापक्रम के वावजूद कांतिमान कम है। कुछ तारे जैसे बेटेलगूज (Betelguese) अति दानव (Super giant) आकार के हैं तथा क्रमविकास (Evolution) में काफी आगे हैं। W वर्ग के तारों का सतही तापक्रम 80,000° से.ग्रे. है तथा इनके स्पेक्ट्रम में चमकीली रेखाएं (नाइट्रोजन, कैल्सियम आदि की) हैं।

काफी अधिक चमकदार चित्रा (Spica) तारा B वर्ग का है जिसमें हीलियम की रेखाएं प्रधान है। सिरियस या लुब्धक A वर्ग का तारा है (तापक्रम, 10,000°C) जिसमें कैल्सियम की रेखाएं मुख्य हैं। G वर्ग के ((Capella) कैपेला एवं सूर्य), दानवाकार (ginat) एवं वामन (dwarf) दोनों तारों जिनके तापमान 5,000° से. 6000° से. के मध्य है, के स्पेक्ट्रम में बहुत सी धातु (Metalic) की रेखाएं हैं। स्वाति (Arcturus) K-दानवाकार वर्ग का तारा है जिसमें हाइड्रोजन की मद्धिम रेखाएं तथा धातु की प्रभावशाली रेखाएं हैं। आर्द्रा (Betelguese) M-वर्ग का तारा है जिसके सतह का तापमान 3000° से.ग्रे.-3,400° से.ग्रे. है। इसके स्पेक्ट्रम मे कई तरह की जटिल पट्टियां हैं। S-वर्ग की (X-(Cygni) तारों में टिटेनियम आक्साईड एवं जिरकोनियम आक्साइड की प्रभावशाली पट्टियां हैं।

तारों की शक्तियों का स्रोत नाभिकीय प्रतिक्रियाएं हैं जिनमें मुख्य हैं हाइड्रोजन के नाभिकों के संलयन (Merger) से हीलियम में परिवर्तित होना। इस नाभिकीय प्रतिक्रिया के कारण सूर्य का द्रव्यमान घटता जा रहा है। प्रति सेकण्ड चालीस लाख टन द्रव्यमान का ह्रास हो रहा है। फिर भी अनुमान है कि अगले 5 अरब वर्षों तक सूर्य अपने वर्तमान रूप में रहेगा।

धूमकेतु

यह भी सौर मंडल का सदस्य है परंतु इनकी कक्षाएं (orbits) अन्य ग्रहों की तुलना में अधिक दीर्घवृत्ताकार (eliptical) है। एक विशाल धूमकेतु छोटे-छोटे ठोस कणों से बना होता है और विरल (tenuous) गैसों से ढका होता है। धूमकेतु की लम्बी पूंछ सी होती है जो तारे की गर्मी से उत्सर्जित पतली गैसों एवं धूलकणों से बनी होती है। ये पूंछ सौर हवाओं एवं सूर्य की विकिरण के दबाव से सूर्य से दूसरी दिशा में बहुत दूर तक फैली होती है। कुछ अत्यंत मद्धिम प्रकाशवाले धूमकेतुएं हैं जो जल्दी-जल्दी (कम अवधि। अर्थात कुछ ही वर्षों के अन्तराल में) आते जाते रहते हैं। 100 साल से कम अवधि (वास्तव में 76 वर्ष) में दुबारा आनेवाला चमकीला धूमकेतु 'हेली का धूमकेतु' है। इसे पिछली बार 1986 में देखा गया था। धूमकेतु सूर्य की किरणों के परावर्तित होने के कारण दिखाई पड़ते हैं जबकि ये आकाश में काफी नजदीक आने पर दृष्टि गोचर होते हैं।

मंदाकिनी (आकाशगंगा) Galaxy

यह असंख्य तारों का समूह होता है। सूर्य भी इसका सदस्य है। मंदाकिनी आकाश में दुधिया (Milky) रंग की दिखायी पड़ती है। एक मंदाकिनी में लगभग एक खरब तारे एवं गैसीय नीहरिकाएं होती हैं। सर्वप्रथम हर्शल (Herschel) नामक वैज्ञानिक ने (150 वर्ष से अधिक पहले) मंदाकिनी के आकार के बारे में अनुमान लगाया था कि यह एक दोहरे उत्तल ताल (double Convex lens) के आकार का है जिसका व्यास 100,000 प्रकाश वर्ष तथा मुटाई 10,000 प्रकाश वर्ष है। सूर्य इसके केन्द्र (जोकि धनु (Saggitarius) नामक नक्षत्र में तारों के बादल के पास है) से 25,000 से 30,000 प्रकाश वर्ष पर स्थित है।

मंदाकिनी एक सर्पिल या पेंचदार (Spiral) आकृति में अपने केन्द्र के चारों ओर घूमता है। सूर्य 2250 लाख वर्षों में मंदाकिनी में एक चक्कर पूरा कर लेता है। हमारी मंदाकिनी से भी बड़ी सर्पिल (spiral) आकार का दूसरी मंदाकिनी एन्ड्रोमेडा है।

मंदाकिनी से बाहर की नीहारिका (Extra Galactic Nebulae)

हमारी मंदाकिनी से बाहर भी नीहारिकाएं (तारा पुंज) हैं। नंगी आंखों से ऐसी तीन नीहारिकाएं दिखाई पड़ती हैं। दो मैगालेनिक बादल (Megallanic clouds) तथा एक एड्रोमेला सर्पिल (Adromeda spiral) मैगालेनिक 200,000 प्रकाश वर्ष दूर है। सबसे अधिक दूरी पर बूट्स (Bootes) में 3C-295 नामक मंदाकिनी देखी गई है जो 5 अरब प्रकाश वर्ष दूर है। मंदाकिनियां स्पेक्ट्रम में लाल वर्ण स्थानांतरण/परिवर्तन के साथ फैल रही है।

भचक्र में तारों की स्थिति (Mean Places of Stars*)

तारे का नाम	भारतीय नाम	निरायन भोगांश	कांतिमान दीप्ति	दूरी (प्रकाश वर्ष)
1. β Arietis	Ashwini अश्विनी	Aries 10°6 मेष	2.72	
2. Arieties	Bharani भरणी	Aries 24°20 मेष	3.68	
3. Alcyone (η Tauri)	Krittika रोहिणी	Taurus 6°8 वृषभ	2.96	
4. Aldebaran (α Tauri)	Rohini रोहिणी	Taurus 15°55 वृषभ	1.06	68.0
5. Capella (α Aurogeme)	Brahmard ब्रह्मार्द	Taurus 28°0 वृषभ	0.21	
6. β Tauri	Agni अग्नि	Taurus 28°43 वृषभ	1.78	
7. λ Orionis	Mrigshira मृगशिरा	Taurus 29°50 वृषभ	3.66	
8. Polaris	Dhruva ध्रुव	Gemini 4°42 मिथुन	2.1v	680
9. Betelguses (α Orionis)	Ardra आर्द्रा	Gemini 4°53 मिथुन	0.6v	310
10. Sirius (α Canis Majoris)	Labdhaka लुब्धक	Gemini 20°13 मिथुन	-1.58	8.7
11. Conopus (α Camiae)	Agastya अगस्त्य	Gemini 21°06 मिथुन	-0.86	1200
12. Pollux (β Geminorum)	Punarvasu पुनर्वसु	Gemini 29°21 मिथुन	1.21	36
13. δ Canei	Pushya पुष्य	Cancer 14°51 कर्क	4.17	
14. ε Hydrae	Ashlesha आश्लेषा	Cancer 18°29 कर्क	3.48	
15. Dubhe (α Ursae Majoris)	Kratu ऋतु	Cancer 21°20 कर्क	1.95	75
16. Regulus (β Leonis)	Magha मघा	Leo 5°58 सिंह	1.34	425
17. Leonis	P. Phalguni पूर्व फाल्गुनी	Leo 17°27 सिंह	2.58	
18. Denebola (β Leonis)	U. Phalguni उत्तरा फाल्गुनी	Leo 27°45 सिंह	2.23	
19. Corvi	Hasta हस्त	Virgo 19°35 कन्या	3.11	
20. Spica (α Virgi is)	Chitra चित्रा	Virgo 29°59 कन्या	1.21	260
21. Arcturus (β Bc 's)	Swati स्वाति	Libra 0°22 तुला	0.24	36
22. α Libra	Vishakha विशाखा	Libra 21°13 तुला	2.90	330
23. β Centauri		Libra 29°56 तुला	0.86	4.2
24. α Centauri		Scorpio 5°38 वृश्चिक	0.06	4.3
25. Scorpii	Anuradha अनुराधा	Scorpio 8°42 वृश्चिक	2.54	
26. Antares (α Scorpii)	Jyeshtha ज्येष्ठा	Scorpio 15°54 वृश्चिक	1.2v	330
27. λ Scorpio	Mula मूल	Sagittarius 0°43 धनु	1.71	
28. Sagittarii	P. Ashadha पूर्वाषाढ़ा	Sagittarius 10°43 धनु	2.84	
29. Sagittarii	U Ashadha उत्तराषाढ़ा	Sagittarius 18°31 धनु	2.14	
30. Vega (α Lyrae)	Abhijit अभिजित	Sagittarius 21°27 धनु	0.14	26
31. Altair (α Aquilae)	Shravana श्रवण	Capricorn 7°55 मकर	0.89	16.6
32. β Delphini	Dhanistha धनिष्ठा	Capricorn 22°29 मकर	3.72	
33. Aquarii	Satabhisha शतभिषा	Aquarius 17°43 कुंभ	3.84	
34. Markab (α Pegasi)	P. Bhadrapad पूर्व भाद्रपद	Aquarius 29°37 कुंभ	2.57	
35. Pegasi	U. Bhadrapad उत्तरा भाद्रपद	Pisces 15°17 मीन	2.87	
36. Piscium	Revati रेवती	Pisces 26°01 मीन	5.57	

* On January 1, 1991. Tropical Longitude = Nirayana Longitude +23°43'53"

1 जनवरी, 1991 की स्थिति/सायन भोगांश = निरायण भोगांश + 23 43'53"

अध्याय 11

उदय और अस्त

ग्रहों की पृथ्वी के अनुसार दो प्रकार गतियां साधारणतया देखी जाती हैं।

1. दैनिक गति
2. भोगांशीय गति

1. दैनिक गति

पृथ्वी अपने अक्ष (धुरी) पर पश्चिम से पूर्व की ओर घूमकर, एक चक्र लगभग 24 घन्टे (एक दिन) में पूरा करती है। इस घूमने के कारण पृथ्वी पर खड़ा हुआ प्रेक्षक (दर्शक) सूर्य और दूसरे ग्रहों को पूर्व से पश्चिम की ओर चलता हुआ देखता है। इस कारण आकाशीय पिंड प्रतिदिन पूर्व में उदय होकर पश्चिम में अस्त हो जाते हैं।

नीचे दिए हुए चित्र में उ पू द प प्रेक्षक का क्षितिजवृत्त है, जिसमें उ उत्तरीय बिन्दु, पू पूर्वीय बिन्दु, द दक्षिणीय बिन्दु और प पश्चिमी बिन्दु हैं। प्रेक्षक ओ पर है। अ और ब उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव है। त तारा पृथ्वी की इस गति के कारण तीर की दिशा में चलता हुआ दिखाई देता है और वह नीचे जाता हुआ क्षितिज वृत्त को ख पर और ऊपर आता हुआ क पर मिलता है। यह छोटे वृत्त, ग क घ ख जो विषुवतवृत्त के समानान्तर है, पर प्रतिदिन घूमता दिखाई देता है।

तारा जब क पर आता है तब यह क्षितिज वृत्त के नीचे से ऊपर को आ रहा है और यह उदय होता दिखाई देता है। क से चलकर घ पर सबसे अधिक उन्नतांश पर पहुंचता है और फिर चलता हुआ ख पर प्रेक्षक के क्षितिजवृत्त पर आता है और फिर क्षितिज वृत्त से नीचे जाकर अस्त हो जाता है। यह ख ग क तक चलने में अस्त रहता है। पृथ्वी के अपनी धुरी पर एक चक्र लगाने में यह

प्रतिदिन सूर्य की तरह उदय और अस्त होता है। स्थिर तारों के भोगांशों में कोई परिवर्तन नहीं होता है। जबकि ग्रह, धूमकेतु आदि के भोगांश वदलते रहते हैं।

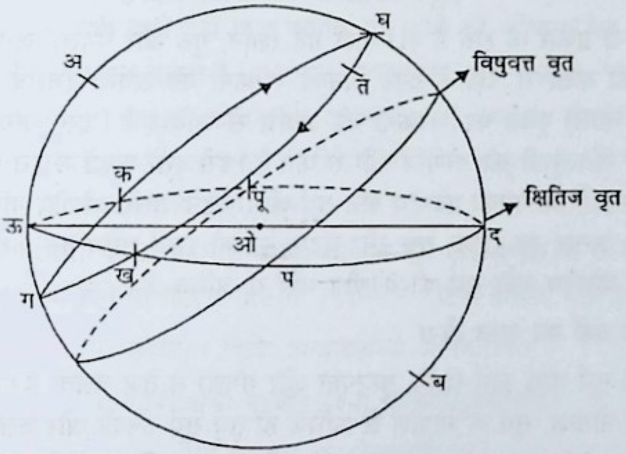

2. भोगांशीय गति

ग्रहों, उपग्रहों (चंद्रमा) आदि की सूर्य आदि की परिक्रमा करने की गति से ग्रह आदि के भोगांशों में अंतर आता है। भारतीय फलित ज्योतिष में सूर्य और चंद्रमा को ग्रह माना गया है, जबक सूर्य एक तारा है और चंद्रमा एक उपग्रह। फलित ज्योतिष में ग्रहों के दैनिक उदय अस्त का फल पर अन्तर नहीं आता है। इसमें कोई ग्रह अस्त (Combust) तव होता है जव वह सूर्य के इतने समीप हो कि केवल आंखों से दिखाई नहीं दे। यह एक सर्वविदित सत्य है कि सौर मंडल में सूर्य ही केवल स्वयं प्रकाशमान पिंड है शेष ग्रह और उपग्रह आदि में अपना कोई प्रकाश नहीं है बल्कि वह सूर्य के प्रकाश को ही परावर्त करते हैं। जिसके कारण उनसे परावर्तित प्रकाश बहुत कम हो जाता है और वह जब सूर्य (जिसका प्रकाश चकाचौंध कर देने वाला होता है) के समीप आते हैं तव उन ग्रहों की किरणें सूर्य की किरणों के कारण दिखाई नहीं पड़ती और उनकी किरणें सूर्य की किरणों में ही मिल जाती हैं। जव ग्रह सूर्य से कुछ दूरी पर पहुंच जाता है तब वह फिर दिखाई देने लगता है, उस समय कहते हैं कि ग्रह उदय हो गया।

सूर्यादिभ्याधिकाः पश्चादस्तं जीवकुजाकंजाः।
ऊनाः प्रागुदयं यान्ति शुक्रजौ वक्रिणौ तथा।।2।।
ऊनाः विवस्वतः प्राच्यामस्तं चंद्रशभार्गवाः।

व्रजन्त्यभ्यधिकाः पश्चादुदयं शीघ्र यायिनः ।।3 ।।

(सूर्य सिद्धान्त–उदयास्ताधिकार)

ग्रह दो प्रकार के होते हैं (1) वाह्य ग्रह (शनि, गुरु और मंगल) जिनकी कक्षा पृथ्वी की कक्षा से बड़ी है और जिनकी परिक्रमा की अवधि (नक्षत्र काल या सम्पात काल) पृथ्वी की परिक्रमा की अवधि से अधिक है। इस कारण उनकी कोणीय गति पृथ्वी की कोणीय गति से कम है। इसे दूसरे शब्दों में इस प्रकार भी कह सकते हैं कि उनकी कोणीय गति सूर्य की (दिखने वाली) कोणीय गति से कम है। (2) अन्तर ग्रह (शुक्र, वुध और चंद्रमा को भी इसमें सम्मिलित करसकते हैं) जिनकी कोणीय गति सूर्य की कोणीय गति से अधिक है।

वाह्य ग्रहों का अस्त होना

(अ) सूर्य वाह्य ग्रहों (शनि, वृहस्पति और मंगल) से तेज चलता है। अगर इन ग्रहों के भोगांश, सूर्य के भोगांश से अधिक हों तब सूर्य उनकी ओर चलता प्रतीत होता है। ऐसी हालत में वह ग्रह सूर्यास्त के पश्चात पश्चिम में देखा जाता है। इसके कुछ दिन पश्चात जब सूर्य इनके समीप आ जाता है, वह केवल आंखों से नहीं देखे जा सकते और उस अवस्था में यह कहा जाता है कि ग्रह अस्त हो गया। कुछ दिनों के पश्चात सूर्य के भोगांश उन ग्रहों के भोगांश के समान हो जाता है। तब कहते हैं कि ग्रह पूर्णतया अस्त है। इसके कुछ दिन पश्चात सूर्य उनसे निश्चित भोगांश आगे निकलने पर यह वाह्य ग्रह सूर्योदय से कुछ पहले पूर्वी आकाश में क्षितिज के समीप दिखाई देता है। उस समय इस ग्रह का उदय होना कहा जाता है।

इस उदय अस्त होने के लिये हम ग्रहों और भचक्र के चलने की दिशाओं पर ध्यान देते हैं। पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर धूम रही है और ग्रह इस कारण भचक्र और ग्रह पूर्व से पश्चिम की ओर घूमते दिखाई देते हैं। भचक्र की कोई राशि जो किसी समय पूर्व में उदय हो रही है वह उस समय का लग्न होती है। सूर्योदय के समय मान लो सूर्य के भोगांश 15° मेष है। उस दिन सूर्य जब याम्योत्तर वृत्त पर है तब लग्न के भोगांश 15° कर्क के लगभग होंगे। सूर्य से भोगांश लगभग वही रहे अर्थात् याम्योत्तर वृत्त पर होने वाली राशि के भोगांश 15° मेष के लगभग है। उसही दिन सूर्यास्त के समय सूर्य के भोगांश लगभग 15°30' मेष होंगे और लग्न के तुला के 15° के लगभग होंगे। इससे हमने देखा कि भचक्र पूर्व से पश्चिम की ओर घूमकर एक दिन में एक चक्र पूरा करता है।

इससे यह भी मालूम हुआकि भचक्र के भोगांश पश्चिम से दक्षिण से पूर्व से उत्तर की ओर बढ़ते हैं (अर्थात् पृथ्वी के घूमने की दिशा में बढ़ते हैं)।

(ब) चंद्रमा कभी वक्री नहीं होता क्योंकि वह पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा है। यह सूर्य से काफी तेज चलता है। यह मास में एक बार अस्त होता है। जब इसके भोगांश सूर्य से 12° तक कम हों (अर्थात् अमावस्या को)। तब यह अस्त होता है। क्योंकि उस समय यह केवल आंखों से दिखाई नहीं देता। कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को यह पूर्व में छुप जाता है और शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के बाद पश्चिम में उदय होता हे। पूर्णिमा या इसके पास इसके भोगांश सूर्य के भोगांश से 6 राशि के लगभग अधिक होने के कारण रात्रि के आरम्भ में पूर्व में दिखाई देता है।

उदयास्त विधिः प्राग्वत्कर्तव्यः शीतगोरपि।

भांगैद्वादिशभिः पश्चाद् दृश्यः प्राग्यात्यदृश्यतामा।

(सूर्य सिद्धांत श्रृङ्गोन्नत्यधिकार)

अन्तर ग्रहों का अस्त होना

बुध और शुक्र जब पृथ्वी के समीप आते हैं तब मार्गी नहीं रहते और वक्री हो जाते हैं। इनकी कोणीय गति सूर्य से तेज है। जब यह मार्गी हों और इनके भोगांश सूर्य के भोगांश से कम हों, उस समय यह सूर्योदय से पहले पूर्व में दिखाई देते हैं। अपनी शीघ्र गति के कारण कुछ दिवस पश्चात यह सूर्य के समीप पहुंच जाते हैं और दिखाई नहीं देते। (अर्थात् अस्त हो जाते हैं) जब यह सूर्य से आगे निश्चित दूरी पर पहुंच जाते हैं तव यह पश्चिम में सूर्यास्त के पश्चात दिंखाई देते हैं।

बुध और शुक्र सर्वदा मार्गी नहीं रहते बल्कि यह जब पृथ्वी के समीप पहुंचते हैं तव वक्री हो जाते हैं। जब इनके भोगांश सूर्य से अधिक होते हैं, तब सूर्यास्त के पश्चात पश्चिम में दिखाई देते हैं और पश्चिम में ही क्षितिज के नीचे जाकर छुप जाते हैं। कुछ समय बाद इनके भोगांश सूर्य के समान हो जाते हैं तव अस्त कहलाते हैं। उसके बाद कुछ निश्चित भोगांश सूर्य से कम होने पर यह सूर्योदय से पहले पूर्व में दिखाई देते हैं।

ग्रहों के पृथ्वी से दिखाई देने वाले औसत विम्बगान इस प्रकार हैं।

मंगल	9".4
बुध	6".6

गुरु	190".4
शुक्र	16".6
शनि	158".0

सूर्य से निम्नलिखित भोगांशों की दूरी पर ग्रह अस्त होते हैं।

	मार्गी	वक्री
चंद्रमा	12°	-
मंगल	17°	-
बुध	14°	12°
गुरु	11°	-
शुक्र	10°	8°
शनि	15°	-

इस सारणी से देखने पर मालूम होगा कि चंद्रमा, मंगल, गुरु और शनि के वक्री कालम खाली हैं। चंद्रमा कभी वक्री नहीं होता इसलिये चंद्रमा के लिये इस कालम का प्रश्न ही नहींउठता।

वाह्य ग्रह (मंगल, वृहस्पति औरशनि) अस्त तव होते हैं जब इनकी युति सूर्य से हो या यह युति के समीप हों। विपरीत युति में अस्त होने का सवाल ही पैदा नहीं होता, उस समय तो इनकी पूर्णिमा के चन्द्रमा जैसी स्थिति होती है। उस समय इनकी सूर्य से भोगांशों में दूरी 180° के लगभग होती है। वाह्य ग्रह विपरीत युति के समीप ही वक्री होते हैं। उस समय यह पृथ्वी की समीप होते हैं।

अव इन गहों के बिम्बमान व अस्त होने वाली सारणियों का अध्ययन करते हैं।

वृहस्पति को अस्त होने के लिये सूर्य से 11° भोगांश की दूरी की आवश्यकता है, जबकि शनि को 15° की। इसके कारण हैं कि (1) शनि का पृथ्वी से वृहस्पति की बजाय अधिक दूरी पर होना। (2) वृहस्पति का बिम्बमान शनि के विम्बमान से अधिक होना। इसलिये वृहस्पति सूर्य से 15° से 11° तक की दूरी में भी दिखाई देता रहता है।

जब शुक्र और बुध मार्गी होते हैं तब शुक्र बुध की अपेक्षा पृथ्वी से अधिक दूरी पर होता है। मगर इसका औसत विम्ब बुध से ढाई गुणा अधिक बड़ा होने के कारण यह सूर्य के अधिक समीप आकर भी दिखाई देता है।

जव यह ग्रह वक्री होते हैं तब शुक्र पृथ्वी (प्रेक्षक) के अधिक पास होता बजाय बुध के और शुक्र का विम्ब भी बड़ा है। इस कारण यह सूर्य के अधिक समीप आकर भी दिखाई देता है।

यह भी ध्यान दिया होगा कि शुक्र और बुध के मार्गी के समय अस्त होने वाले भोगांश वक्री के समय से अधिक हैं। जिस समय यह मार्गी होते हैं और अस्त होते हैं, तब इनके और पृथ्वी के मध्य सूर्य होता है अर्थात् यह पृथ्वी से लगभग अधिकतम दूरी पर होते हैं। जब यह वक्री और अस्त होते हैं तब पृथ्वी और सूर्य के बीच यह ग्रह होते हैं और इनकी पृथ्वी से दूरी न्यूनतम होती है। किसी ग्रह का बिम्बमान पृथ्वी (प्रेक्षक) से दूरी के अनुसार होता है। अधिक दूरी पर बिम्बमान कम होगा और कम दूरी पर बिम्बमान अधिक। इस कारण वक्री ग्रहों को अस्त होने के लिये कम भोगांशों की आवश्यकता है वजाय मार्गी के।

अस्त होने में केवल भोगांशों को ही ध्यान में रखा गया है और विक्षेप (शर) को नहीं। विक्षेप को भी गणना में नहीं लेने से कई बार गणित के हिसाब में और वेध (देखने) में काफी दिनों का अन्तर आ जाता है। जैसा कि चित्र में बताया जा रहा है।

इस चित्र में आकाशीय गोल में कांतिवृत है। प=प्रेक्षक, स=सूर्य, ग=ग्रह, $ग_1$=क्रांति वृत पर लम्बवत चाप विक्षेप।

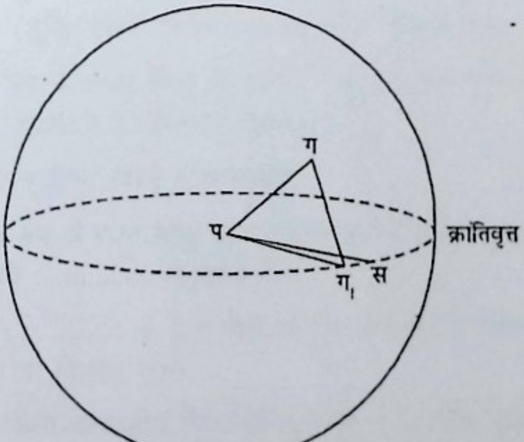

इस समय कोई शीघ्रगति वाला ग्रह सूर्य से पीछे है। $ग_1$ स=कोण $ग_1$ प स यह सूर्य ग्रह की भोगांशीय दूरी है जब ग्रह अस्त होना आरम्भ होता है, मगर ग्रह असल में ग पर है न कि $ग_1$ पर इस कारण ग्रह की असली कोणीय दूरी है कोण ग प स।

कोण ग प स बड़ा है कोण $ग_1$ प स से। इस कारण ग्रह को कुछ दूर और चलना पड़ेगा तब वह कोण $ग_1$ प स के समान होगा अर्थात् ग्रह केवल भोगांश के हिसाब से अस्त नहीं होगा, बल्कि कुछ दिन बाद जब कोण ग प स इतना हो जायेगा जितना कोण $ग_1$ प स है तब अस्त होगा। इस शुद्धि की सूर्य सिद्धांत में व्याख्या की गई है।

ICAS की पिछली परीक्षाओं में दिए गए प्रश्नों के उत्तर

उपयुक्त शब्द/शब्दों द्वारा रिक्त स्थान की पूर्ति करें।(12/99, 6/2000, 6/2001)

(1) क्रांतिवृत का वह भाग जिस पर ग्रह अयन करते हैं .... कहलाता है। (भचक्र)

(2) .... के कारण से सम्पात बिन्दु धीरे-धीरे पीछे खिसक रहा है। (पृथ्वी पर सूर्य और चन्द्र की आकर्षण शक्ति या सम्पात का अयन)

(3) चल और अचल भचक्र के बीच .... कोणीय अन्तर है। (अयनांश)

(4) किसी भी दिन सूर्य और चन्द्र के भोगांश जोड़ने से .... का ज्ञान होता है। (योग)

(5) सूर्य के भोगांश में 133°20′ जोड़ने से .... प्राप्त होता है। (धूम)

(6) सूर्य और पृथ्वी के बीच चन्द्रमा आने से .... होता है। (सूर्य ग्रहण)

(7) सूर्य के चारों ओर पृथ्वी का भ्रमण चक्र .... कहलाता है। (क्रांति वृत्त) (शुद्धिः इसमें "भ्रमण चक्र का तल" होना चाहिए)

(8) मेष के प्रथम बिन्दु से चलकर उन्हें इस तक आने की समयावधि .... कहलाती है। (सम्पात दिवस)

यह प्रश्न निम्न प्रकार होना चाहिए :

सायन मेष के प्रथम बिन्दु का याम्योत्तर वृत्त से चलकर पुनः इस पर आने की समयावधि .... कहलाती है।

(9) .... के द्वारा पृथ्वी का दो अर्धगोलों में विभाजन होता है। (भूमध्य रेखा या विषुवत् रेखा)

(10) किसी आकाशीय पिण्ड की क्रांतिवृत से कोणीय दूरी .... कहलाती है। (शर या विक्षेप)

(11) पृथ्वी को केन्द्र मानकर की जाने वाली भारतीय खगोलीय गणना पद्धति को .... पद्धति कहते हैं। (भूकेन्द्रीय)

(12) एक महायुग में .... सौर वर्ष होते हैं जिन्हें चार युगों में .... अनुपात के अनुरूप विभजित किया जाता है। (4,320,000 और 4 : 3 : 2 : 1 अनुपात)

(13) यदि पृथ्वी को अनन्त अकाश में प्रक्षेपित किया जाए तो .... आकार बनेगा। (आकाशीय गोल अथवा खगोल)

(14) मंगल और बृहस्पति की कक्षा के बीच में आने वाले लघु ग्रहों को .... कहते हैं। (क्षुद्र ग्रह)

(15) सूर्य और चन्द्रमा के आकर्षण का प्रभाव पृथ्वी के भूमध्य भाग पर सदा समान नहीं होता, जिसके कारण याम्योत्तर ध्रुव की रचना होती है, इस प्रक्रिया को .... कहते हैं। (विदोलन या अक्ष विचलन)

(16) किसी ग्रह के नक्षत्र समय की परिभाषा दीजिए। (पृष्ठ 57 पर सम्पात काल की पहली ढाई पंक्तियाँ)

(17) जव चंद्रमा पर .... की छाया पड़ती है तो चन्द्र ग्रहण लगता है। (पृथ्वी)

(18) भारतीय मानक मध्यान्ह रेखा .... पूर्व देशान्तर है। जो वाराणसी के पास से गुजरती है। (82°30′)

(19) चन्द्रमा को सूर्य से 6° आगे निकलने वाले समय को .... कहते हैं। (करण)

(20) रात्रि का .... भाग मंगलवार को यम कंटक होता है। (छठा)

(21) ग्रह का सायन सपष्ट उसके निरायन स्पष्ट से .... होता है। (अधिक)

(22) सायन स्पष्ट खगोल के .... पद्धति में प्रयोग होते हैं। (पाश्चात्य)

(23) वर्ष की ऋतुएँ सूर्य के .... स्पष्ट के अनुसार बदलती हैं। (सायन)

(24) मास के उसी नाम का अधिक मास पड़ता है जव दो संक्रातियों में .... अमावस्या आती हैं। (दो)

(25) क्षय तिथि तव आती है जब .... तिथि सूर्योदय के .... शुरु होती हैं। ((*i*) दो (*ii*) पहले)

नोट : जिस तिथि में सूर्योदय न हो व क्षय तिथि होती है।

(26) शुक्ल पक्ष की अष्टमी को चन्द्र का उदय लगभग .... के मध्य में होता है। (दिन अर्थात मध्यान्ह)

(27) दक्षिणी गोलार्ध में सूर्य उत्तरायण होने के समय दिनमान रात्रिमान से .... होता है। (छोटा या कम)

(28) वैदिक वेदांग काल में तारा समूह के भचक्र के .... भागों का प्रयोग होता था। (सत्ताईस)

(29) सम्पातिक काल का प्रारम्भ (शून्य) बिन्दु तव होता है जब स्थान के मध्य रेखा पर .... गुजरता है। (वसंत सम्पात विन्दु)

(30) उत्तर कालामृत्त के लेखक .... हैं। (कालीदास)

(31) सूर्य सिद्धान्त .... ने मय को सुनाया। (सूर्यांश पुरुप)

(32) ग्रहों के चारों ओर भ्रमण करने वाले पिंडों का नाम बताइए ....। (चन्द्रमा)

(33) हेली के पुच्छल तारे की आवृत्ति .... वर्ष की है। (76)

(34) मंगल को .... रंग का ग्रह भी कहते हैं। (लाल)

(35) .... सौर मण्डल का सबसे बड़ा ग्रह है। (वृहस्पति)

(36) किसी ग्रह के .... को सायन भोगांश में से अयनांश घटाकर निकालते हैं। (निरायन भोगांश)

(37) मेष के प्रथम विन्दु के धीमे विपरीत गमन को .... कहते हैं। (सम्पात का अयन)

परिभाषाएँ

(1) **आकाशीय गोल**–पृष्ठ 17 पैरा 2.2 पहला पैरा।

(2) **भूमध्य रेखा या विषुवत् रेखा**–भूमध्य रेखा वह काल्पनिक वृत्त है जो पृथ्वी की धूरी पर लम्बवत् पृथ्वी के मध्य से इसे दो समान भागों में बाँटे।

(3) **देशान्तर या रेखांश**–किसी स्थान की मध्यान्ह रेखा (meridian) का प्रधान मध्यान्ह रेखा से कोणीय अन्तर। अगर यह प्रधान मध्यान्ह रेखा के पूर्व में हो तव पूर्व (पू) और पश्चिम में हो तव पश्चिम (प) लगाते हैं।

(4) **अक्षांश**–किसी स्थान की भूमध्य रेखा से लम्बवत् कोणीय दूरी। अगर यह भूमध्य रेखा के उत्तर में हो तब (उ) और दक्षिण में हो तब (द) लगाते हैं।

(5) **क्रांतिवृत्त**–पृष्ठ 21 पैरा 2.12 का पहला पैरा।

(6) **भचक्र**–पृष्ठ 21 पैरा 2.13 का पहला पैरा।

(7) **सायन भचक्र**–भचक्र की परिभाषा के पश्चात्–वह भचक्र जिसके मेष का प्रथम विन्दु वसंत सम्पात है और वह निरन्तर वक्री गति से 50".3 प्रतिवर्ष पीछे चलता है।

(8) **निरायण भचक्र**–भचक्र की परिभाषा के पश्चात्–वह भचक्र जिसका मेष का प्रथम विन्दु स्थिर है। इसके मेष का प्रथम बिन्दु चित्रा नक्षत्र में चित्रा तारे से लगभग 180° विपरीत है।

(9) **क्षितिज**–वह वृत्त जहाँ किसी प्रेक्षक को पृथ्वी और आकाश मिलते दिखाई दें, वह क्षितिज कहलाता है।

(10) **भोगांश**–किसी आकाशीय पिंड की मेष के प्रथम बिन्दु से क्रांतिवृत्त पर कोणीय दूरी।

(11) **विक्षेप या शर**–किसी आकाशीय पिण्ड की क्रांतिवृत्त से लम्बवत् कोणीय दूरी।

(12) **विषुवत वृत्त**–पृष्ठ 21 पर पैरा 2.11।

(13) **विषुवांश**–पृष्ठ 22 पर पेरा 2.16।

(14) **अयनांश**–किसी समय सायन भोगांश और निरायन भोगांश का अन्तर उस समय का अयनांश होता है।

निरायन भोगांश + अयनांश = सायन भोगांश

(15) **निरायन व सायन कुण्डलियाँ**–जिस कुण्डली में निरायन भोगांशों का प्रयोग हो वह निरायन कुण्डली और जिसमें सायन भोगांश प्रयुक्त किए जाएँ वह सायन कुण्डली।

(16) **स्थानीय समय**–किसी स्थान पर स्थानीय मध्य रात्रि के बाद जितना समय बीत गया है वह स्थानीय समय होता है। मध्य रात्रि का समय सूर्य के याम्योत्तर वृत्त पर होने के बारह घंटे पश्चात् होता है।

(17) **मानक समय**–किसी देश या क्षेत्र के लिए कोई देशान्तर चुन लिया जाता है। उस देशान्तर का स्थानीय समय सारे देश/क्षेत्र का मानक समय कहलाता है।

(18) **पात (Node)**–पृष्ठ 56 पर पहला पैरा।

(19) **लग्न**–किसी स्थान पर किसी समय उस स्थान के पूर्वी क्षितिज पर जो राशि जितने अंश, कला आदि की उदय हो रही हो वह उस स्थान पर उस समय की घटना, जन्म, प्रश्न आदि की कुण्डली का लग्न (लग्न की राशि होती है) होता है। अर्थात क्रांतिवृत्त का पूर्वी क्षितिज वृत्त से कटान बिन्दु के भोगांश उस समय उस स्थान का जन्म होता है।

(20) **राशिमान**–किसी राशि द्वारा किसी स्थान के पूर्वी क्षितिज पर पूर्ण उदय होने में (30° की चाप) जो समय लिया जाता है वह उस राशि का राशिमान होता है। इसकी गणना सदैव सायन भोगांशों में की जाती है। इसे टेढ़ा चक्र (oblique ascension) भी कहते हैं।

(21) **भावों की सारणी**–वह पुस्तक जिसमें भिन्न-भिन्न अक्षांशों पर सम्पात समय के अनुसार अलग-अलग दशम से तीसरे भाव तक के मध्य दिए होते हैं।

(22) **वक्रत्व**–किसी ग्रह या छाया ग्रह आदि का उल्टी गतिसे चलता दिखाई देना अर्थात समय अधिक होने पर उनके भोगांश घटते दिखाई दें, वह उन ग्रहों का वक्रत्व होता है।

(23) **तिथि**–एक अमावस्या के अन्त से दूसरी अमावस्या के अन्त तक या एक पूर्णिमा के अन्त से दूसरी पूर्णिमा के अन्त तक 30 तिथियाँ होती हैं। चन्द्रमा के सूर्य से प्रत्येक बारह अंश आगे निकलने पर एक तिथि का अन्त होता है।

(24) **योग**–सूर्य और चन्द्रमा की संयुक्त चाल के अनुसार योग बनते हैं। एक योग = (सूर्य के भोगांश + चन्द्र के भोगांश) ÷ 800 भोगांश कलाओं में हैं। कुल 27 योग होते हैं।

(25) **अस्त अंशों सहित**–जब कोई ग्रह सूर्य की समीपता के कारण आँखों से दिखाई नहीं पड़ता तब उस ग्रह को अस्त कहते हैं। सूर्य से निम्नलिखित भोगांशों की दूरी (पहले या बाद) पर ग्रह अस्त होते हैं–

	मार्गी	वक्री
चन्द्र	12°	—
मंगल	17°	—
बुध	14°	12°
गुरु	11°	—
शुक्र	10°	8°
शनि	15°	—

संक्षिप्त टिप्पणियाँ

(1) **क्रांतिवृत्त**–पृथ्वी की सूर्य के चारों ओर घूमने वाली वार्षिक कक्षा को अनन्त आकाश में फैलाने पर यह खगोल को एक बड़े वृत्त में काटेगी। वह बड़ा वृत्त क्रांतिवृत्त कहलाता है। यह विषुवत् वृत्त पर 23°27′ का कोण बनाता है।

प्लूटो के सिवाय तमाम ग्रह इससे 9° दूरी तक उत्तर या दक्षिण में ही भ्रमण करते हैं। भूकेन्द्रीय भोगांशों को मेष के प्रथम बिन्दु से इसके साथ ही मापा जाता है।

(2) **भचक्र**–भचक्र आकाश में वह काल्पनिक पट्टी है जो क्रांतिवृत्त को 9° उत्तर या दक्षिण तक फैली हुई है। चन्द्रमा और सारे ग्रह इसी पट्टी के अन्दर भ्रमण करते हुए दिखाई पड़ते हैं। केवल प्लूटो ही कभी-कभी इससे बाहर चला जाता है।

भचक्र दो प्रकार के होते हैं, सायन भचक्र और निरायन भचक्र। सायन भचक्र की गणना चलित मेष के प्रथम बिन्दु अर्थात बसंत सम्पात से की जाती है और निरायण भचक्र की गणना स्थिर मेष के प्रथम बिन्दु अर्थात चित्रा तारे से 180° विपरीत से आरम्भ की जाती है। भचक्र में बारह राशियां या 27 नक्षत्र होते हैं।

(3) **विषुवत वृत्त**–खगोल का वह बड़ा वृत्त जिसका तल खगोल के ध्रुवों को मिलाने वाली रेखा के लम्बवत् खगोल को काटता हैं। इसे इस प्रकार भी कह सकते हैं। पृथ्वी का अनन्त आकाश में विस्तार करने पर खगोल बनता है। पृथ्वी की भूमध्य रेखा जहाँ इस खगोल पर आए वह वृत्त विषुवत वृत्त कहलाता है। यह खगोल को दो समान भागों में बाँटता है।

(4) **भूमध्य रेखा**–पृथ्वी बिल्कुल गोल नहीं है बल्कि दोनों ध्रुवों पर कुछ चपटी है। इन ध्रुवों से और केन्द्र से होती हुई रेखा को पृथ्वी की धूरी कहते हैं। इस धूरी के लम्बवत पृथ्वी के तल पर वह काल्पनिक रेखा जो पृथ्वी को दो समान भागों में बाँटे उसे भूमध्य रेखा या विषुवत रेखा कहते हैं। इससे उत्तर की ओर वाला भाग उत्तरी गोलार्ध और दक्षिण की ओर वाला भाग दक्षिणी गोलार्ध कहलाता है।

(5) **देशान्तर**–किसी स्थान की मध्यान्ह रेखा और प्रधान मध्यान्ह रेखा के बीच भूमध्य रेखा पर जो चाप बने, उसका कोण देशान्तर कहलाता है। अर्थात प्रधान मध्यान्ह रेखा के तल और किसी स्थान की मध्यान्ह रेखा के तल के बीच जो कोण बने उसे देशान्तर कहते हैं। वह स्थान प्रधान मध्यान्ह रेखा के पूर्व में होने पर (पू) और पश्चिम में होने पर (प) उस कोण के बाद लगा देते हैं। देशान्तर 0° से 180° पूर्व या पश्चिम तक मापे जाते हैं।

(6) **अक्षांश**–किसी स्थान की भूमध्य रेखा से लम्बवत् कोणीय दूर को अक्षांश कहते हैं। अर्थात् उस स्थान की मध्यान्ह रेखा पर उस स्थान से भूमध्य रेखा के मिलान बिन्दु तक जितना कोण पृथ्वी के केन्द्र पर बने वह अक्षांश कहलाता है। किसी स्थान के भूमध्य रेखा के उत्तर या दक्षिण में होने पर (उ) या (द) लगा दिया जाता है। अक्षांश 0° से 90° उत्तर या दक्षिण तक होते हैं।

(7) **कक्षा**–कोई ग्रह सूर्य के चारों ओर जिस मार्ग पर भ्रमण करता है वह मार्ग उस ग्रह की कक्षा कहलाती है। कोई उपग्रह अर्थात् चन्द्रमा जिस मार्ग पर अपने ग्रह की परिक्रमा करता है, वह मार्ग उस उपग्रह की कक्षा कहलाती है। प्रत्येक ग्रह या उपग्रह की कक्षा क्रांतिवृत्त से कुछ झुकी होती है। प्रत्येक ग्रह या उपग्रह की कक्षा दीर्घवृत्ताकार होती है। ग्रहों की कक्षा के बड़े अक्ष भी घूम रहे हैं।

(8) **क्रांति**–किसी आकाशीय पिण्ड से विषुवत् वृत्त पर लम्बवत चाप का पृथ्वी के केन्द्र पर कोण उस ग्रह की क्रान्ति कहलाती है। ग्रह या आकाशीय पिण्ड के उत्तर या दक्षिण में होने के अनुसार क्रान्ति उत्तर या दक्षिण होती है। क्रान्ति के अंशों के पश्चात् (उ) या (द) लगा देते हैं। भारतीय ज्योतिष में क्रांति दो प्रकार

की होती है। 1. स्पष्ट क्रांति यह उपरोक्त प्रकार से मापी जाती है। 2. मध्यमा क्रांति, इसमें ग्रह के जितने भोगांश होते हैं, ग्रह को क्रांतिवृत्त पर भोगांश वाले स्थान पर समझ कर जो क्रांति आए वह मध्यमा क्रांति होती है।

(9) **सम्पात समय**–एक नक्षत्र के किसी तारे के उदय होनेसे लेकर पुनः उसी तारे के उदय होने तक का समय सम्पात दिवस कहलाता है। अर्थात् किसी स्थान पर बसन्त सम्पात के याम्योत्तर वृत्त से चलकर पुनः याम्योत्तर वृत्त तक आने में जो समय व्यतीत हो वह एक सम्पात दिवस कहलाता है। इसे 24 सम्पात घंटे व सम्पात मिनट, आदि में बाँट सकते हैं। जिस समय बसन्त सम्पात किसी स्थान के याम्योत्तर वृत्त पर होता है तब उस स्थान का सम्पात समय शून्य होता है। अर्थात वहाँ से गणना प्रारम्भ करते हैं।

(10) **स्थानीय समय**–किसी स्थान का वहाँ की मध्य रात्रि का समय शून्य होता है, और उस समय से जो गणना की जाए वह स्थानीय समय होता है। स्थानीय दोपहर बारह बजे उस स्थान का मध्यान्ह होता है यह उस स्थान के सूर्योदय और सूर्यास्त के बिल्कुल मध्य में होता हैं यह लग्न व दशम मध्य निकालने के काम आता है।

(11) **भारतीय मानक समय (I.S.T.)**–किन्हीं दो स्थानों का स्थानीय समय उन स्थानों के देशान्तरों पर निर्भर करेगा। जो स्थान पूर्व में होगा वहाँ का स्थानीय समय पश्चिम वाले स्थान से अधिक होगा। इस प्रकार अलग-अलग नगरों का स्थानीय समय अलग-अलग हो जाएगा। इसमें एकरूपता लाने के लिए 82°30′(पू) देशानतर का स्थानीय समय सारे भारत की घड़ियों में होगा और व्यवहार में यह ही समय लाया जाएगा। इस समय को भारतीय मानक समय कहते हैं। यह देशान्तर लगभग भारत के मध्य से गुजरता हैं इस कारण भारत के सर्वाधिक पूर्व या पश्चिम के नगरों के स्थानीय समय का अन्तर इसे बहुत अधिक नहीं हो पाएगा। दैनिक व्यवहार के लिए इसके प्रयोग अति आवश्यक है। इसके बिना रेलवे, टेलिविजन, हवाई यात्रा आदि में बहुत परेशानी आएगी और घड़ी को एक देश में थोड़ी दूर जाने पर फिर ठीक करना पड़ेगा।

(12) **क्षेत्रीय मानक समय** (Z.S.T.)–जो देश पूर्व से पश्चिम की ओर अधिक फैले हुए होते हैं, वहाँ देश को कई समय क्षेत्रों में बाँट दिया जाता है ताकि स्थानीय समय और क्षेत्रीय समय में अन्तर अधिक नहीं हो। ऐसे देश युनाइटेड स्टेट्स ऑफ अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि हैं। इन क्षेत्रों की मानक मध्यान्ह रेखा इस प्रकार चुनी जाती है, जिससे इन मानक रेखाओं के स्थानीय समय और प्रधान

मध्यान्ह रेखा के समय में आधे घण्टे के गुणक (multiple) का अन्तर हो। इन क्षेत्रों की मानक मध्यान्ह रेखा का स्थानीय समय इन क्षेत्रों में व्यवहार में आता हैं यह समय इन क्षेत्रों का क्षेत्रीय मानक समय कहलाता है। इसके प्रयोग से थोड़ी-थोड़ी दूर पर घड़ी को ठीक नहीं करनी पड़ती है और टेलीविजन, रेडियो आदि के व्यवहार में कठिनाई नहीं होती।

(13) नक्षत्र–भचक्र को 27 भागों में बाँटने पर एक नक्षत्र होता है अर्थात भचक्र में 27 नक्षत्र होते हैं और प्रत्येक का मान $360 \div 27 = 13°20' = 800'$ होता है। पूर्वजों ने इन 27 तारा समूहों को उस समय की ज्ञात जिस आकृति से मिलता हुआ देखा उनका नाम इन तारा समूहों या नक्षत्रों को दे दिया। इन सत्ताइस नक्षत्रों के नाम हैं अश्विनी, भरणी, कृतिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्र, उत्तराभाद्रपद और रेवती।

(14) उल्का–पृष्ठ 42 पर देखें।

(15) **धूमकेतु या पुच्छल तारे**–धूमकेतु भी खगोल में उन्हीं नियमों पर चलते हैं जिन पर अन्य ग्रह। इनके पथ की एक नाभि (focus) पर सूर्य होता है। धूमकेतुओं की दीर्घ वृत्ताकार कक्षा अधिक वड़ी और अधिक उत्केन्द्रता वाली (चपटी) होती हैं यह आकाश में कुछ दिन, सप्ताह या मास तक दिखाई देते हैं। इनकी नाभि साधारणतया चमकीली होती है। इनकी पूँछ वहुत बड़ी होती है। धूमकेतु दो प्रकार के होते हैं। (1) सावधिक (2) अनावधिक।

सावधिक धूमकेतु वह होते हैं जो निश्चित अवधि के पश्चात् पुनः दिखाई देते हैं। इनमें हेली का धूमकेतु है जो लगभग 76 वर्ष पश्चात पुनः दिखाई देता है। एन्के का धूमकेतु का 3.3 वर्ष के बाद इसका पुनः आगमन होता है।

अनावधिक धूमकेतु वह होते हैं जो एक बार सौरमंडल में आने के बाद पुनः दिखाई नहीं देते। इनकी संख्या सावधिक धूमकेतुओं से बहुत अधिक है। इनका पथ बहुत बड़ा दीर्घवृत्त होता है और सूर्य से काफी अधिक दूरी पर पहुँचने पर इनका पथ इतना बदल जाता है कि वह सूर्य की आकर्षण शक्ति से बँधे नहीं रह पाने के कारण परावलय (Parabola) की तरह हो जाता है ओर लौटकर सौरमंडल में वापिस नहीं आते हैं।

(16) **राहु व केतु व इनकी स्व और उच्च राशियाँ**–पात उन बिन्दुओं को कहते हैं जहाँ चन्द्रमा या कोई ग्रह अपनी कक्षा में घूमता हुआ क्रांतिवृत्त को काटे। राहु और केतु चन्द्रमा के पात हैं। जब चन्द्रमा क्रांतिवृत्त के नीचे से ऊपर की ओर अथवा दक्षिण से उत्तर की ओर जाते हुए जिस स्थान पर क्रांतिवृत्त को काटे वह विन्दु राहु कहलाता है। जव चन्द्रमा क्रांतिवृत्त को ऊपर से नीचे की ओर जाता हुआ काटे उस बिन्दु को केतु कहते हैं। इन ग्रहों का कोई भौतिक अस्तित्व नहीं है। इस कारण इन्हें छाया ग्रह भी कहते हैं ज्योतिष की वहुत-सी गणनाओं में यथा षडबल, अष्टक वर्ग आदि में इन्हें ग्रहों में सम्मिलित नहीं किया जाता हैं जव पूर्णिमा या अमावस्या की समाप्ति के अवसर पर चन्द्रमा राहु या केतु के समीप हो तव चन्द्र/सूर्य ग्रहण होता है। ये बिन्दु 18 वर्ष 220 दिन में वक्र गति से एक चक्र पूरा करते हैं।

	उच्च बिन्दु	स्वराशि
राहु	वृष/मिथुन	कुम्भ
केतु	वृश्चिम/धनु	सिंह

कुछ विद्वान इनकी उच्च राशि वृष व वृश्चिक मानते हैं और कुछ मिथुन व धनु। इसके बारे में मतभेद है। स्वराशि के वारे में भी मतभेद है।

(17) **प्रसार कोण (Angle of Elongation)**–किसी ग्रह और सूर्य से आने वाली रेखाएँ पृथ्वी के केन्द्र पर जो कोण बनाएँ उसे प्रसार कोण कहते हैं।

(18) **वक्रत्व**–सभी ग्रह सामान्यतः पश्चिम से पूर्व की ओर चलते दिखाई देते हैं। परन्तु कभी-कभी कुछ समय के लिए ग्रह (सूर्य और चन्द्र को छोड़कर) पूर्व से पश्चिम अर्थात् विपरीत दिशा में चलते दिखाई पड़ते हैं, इस समय उन्हें वक्री कहते हैं। वास्तव में सभी ग्रह एक ही दिशा में सूर्य की परिक्रमा कर रहे हैं मगर पृथ्वी से देखने पर कभी वक्री दिखाई देते हैं क्योंकि ग्रहों और पृथ्वी की सूर्य की परिक्रमा करने की अवधि व सूर्य से दूरी में अन्तर है।

ग्रहों के भोगांश भूकेन्द्रीय अंशों में मापे जाते हैं। इस कारण जब ग्रह पृथ्वी के समीप आते हैं तव वक्री हो जाते हैं।

(19) **सायन व निरायन भचक्र**–जिस भचक्र का मेष का प्रथम विन्दु चलने वाला हो (बसन्त सम्पात) वह सायन भचक्र कहलाता है क्योंकि जब वह बिन्दु जिससे गणना आरम्भ की जाती है, पीछे सरक जाता है तब उस भचक्र में ग्रहों के भोगांश अधिक हो जाते हैं इस कारण इसे चल भचक्र या सायन भचक्र भी कहते हैं।

निरायन भचक्र वह भचक्र है जिसके मेष का प्रथम बिन्दु स्थिर है, अर्थात् इस भचक्र में ग्रहों के भोगांश की गणना नक्षत्रों या तारों के अनुसार की जाती है। तारे या नक्षत्र स्थिर हैं। इस भचक्र में मेष का प्रथम बिन्दु जो चित्रा नक्षत्र में चित्रा तारे के 180° विपरीत है वह स्थिर है। इस भचक्र की गणना स्थिर बिन्दु से होने के कारण इसे स्थिर भचक्र या निरायन भचक्र कहते हैं।

(20) **अयनांश**–किसी समय जो सायन मेष के प्रथम बिन्दु (बसंत सम्पात) का निरायण मेष के प्रथम बिन्दु का अन्तर हो वह अयनांश कहलाता है। निरायण मेष का प्रथम बिन्दु, चित्रा नक्षत्र के चित्रा तारे से 180° विपरीत है। यह स्थिर है क्योंकि तारों को हम स्थिर मानकर चलते हैं। सायन मेष का प्रथम बिन्दु (वसंत सम्पात) प्रति वर्ष सम्पात के अयन के कारण लगभग 50".3 पीछे चल रहा है अर्थात् एक स्थिर तारे के सायन भोगांश प्रतिवर्ष 50".3 की दर से बढ़ जाते हैं।

उपरोक्त कारण से दोनों मेष के प्रथम बिन्दुओं में अन्तर अधिक होता जाता हैं किसी समय के इनके अन्तर को अयनांश कहते हैं।

सायन भोगांश = निरायन भोगांश + अयनांश

या निरायन भोगांश = सायन भोगांश – अयनांश

या अयनांश = सायन भोगांश – निरायन भोगांश।

(21) **बाह्य ग्रह**–सारे ग्रह सूर्य की परिक्रमा कर रहे हैं। इन ग्रहों की कक्षाएँ छोटी-बड़ी हैं। यह सूर्य से बढ़ती दूरी के अनुसार इस प्रकार हैं बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, लघु ग्रह, गुरु, शनि, यूरेनस, नेपचून, प्लूटो। जिन ग्रहों की कक्षा पृथ्वी की कक्षा से बड़ी है वे ग्रह बाह्य ग्रह कहलाते हैं जैसे मंगल, गुरु, शनि, यूरेनस, नेपचून और प्लूटो। इनका नक्षत्र काल भी पृथ्वी के नक्षत्र काल से अधिक है।

(22) **पंचांग**–पंचांग शब्द का अर्थ पाँच अंग है। वह निम्नलिखित हैं–

(*i*) वार

(*ii*) तिथि

(*iii*) नक्षत्र

(*iv*) करण

(*v*) योग

(*i*) **वार**–वार सप्ताह के दिनों के नाम को कहते हैं। भारतीय खगोल विज्ञान में एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक का समय एक दिन होता है। इसी

एक दिन का एक वार माना जाता है। सृष्टि के आरम्भ से अर्हगण (दिन + रात) की गणना को सात से भाग देकर शेष से वार का ज्ञान होता है।

(*ii*) **तिथि**–एक चन्द्र मास में 30 तिथियां होती हैं। चन्द्रमा के सूर्य से बारह अंश आगे निकलने पर एक तिथि पूर्ण होती है। चन्द्र की गति में काफी भिन्नता है जबकि सूर्य की दैनिक गति में मामूली अन्तर होता हैं सूर्योदय के समय जो तिथि होती वह उस दिन की तिथि मानी जाती है। अगर एक तिथि सूर्योदय से कुछ पहले शुरु होकर दूसरे सूर्योदय के बाद तक चली जाए तब वह तिथि दोनों दिन की मानी जाती है। इसी प्रकार कोई तिथि सूर्योदय के बाद आरम्भ होकर ओर दूसरे सूर्योदय से पहले खत्म हो जाती है, तब उसका 'क्षय' हो जाता है।

(*iii*) **नक्षत्र**–भचक्र में 27 नक्षत्र होते हैं। एक नक्षत्र $360 \div 27 = 13°20'$ $= 800'$ कला का होता है। इनके नाम जिस आकृति से तारा समूह मिलते है, उन पर रखा गया है। इनके नाम अश्विनी, भरणी आदि से रेवती तक हैं।

(*iv*) **करण**–एक तिथि में दो करण होते हैं। अर्थात् चन्द्रमा के सूर्य से 6° आगे चलने पर एक करण समाप्त होता है। इस प्रकार एक चन्द्र मास में 60 करण हुए जिनमें 4 करण किंस्तुघन, शकुनि, चतुष्पद और नाग एक चन्द्र माह में एक बार आते हैं और बाकी 7 बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि की आठ बार पुनरावृत्ति होती है।

(*v*) **योग**–योग 27 होते हैं। सूर्य + चन्द्र के भोगांशों को जोड़कर 27 से भाग देने पर एक योग पूर्ण होता है। क्योंकि $360 \div 27 = 13°20' = 800$ कला होती हैं। इस कारण चन्द्र + सूर्य के भोगांश (कलाओं में) को 800 से भाग देने पर योग की गणना होती है।

(23) **उपग्रह**–इसमें पृष्ठ 90 का पहला पैरा उदाहरण से पहले तक और 91 के उपग्रह (ज्योतिर्षाय विन्दु) से अन्त तक और पृष्ठ 92 के तारे से पहले तक है।

(24) **मांदी**–गुलिक या मांदी शनि का उपग्रह है। इसकी गणना के बारे में अलग-अलग मत हैं। इसकी गणना के लिए अगर दिन का जन्म हो तब दिनमान को आठ समान भागों में बाँटें। प्रथम भाग का स्वामी उस दिन के वार का स्वामी होगा तथा सप्ताह दिनों के स्वामियों के क्रम से पहले सात भाग के स्वामी होते हैं आठवाँ गिरीश होता है। जिस भाग का स्वामी शनि हो उस भाग के प्रारम्भ का लग्न निकालने पर गुलिका अर्थात् मांदी के भोगांश आते हैं।

अगर रात्रि का जन्म हो तब रात्रि के पहले भाग का स्वामी उस दिन के वार से पाँचवे दिन का स्वामी होता है। बाकी क्रिया दिन के जन्म की तरह ही है।

प्रश्न 1. संक्षिप्त में बताएँ (1) सौर मंडल, ग्रहों के क्रमानुसार, (2) अन्तः ग्रह और बाह्य ग्रह, क्या ग्रहों का सप्ताह के दिनों के नामों से सम्बन्ध है ?

उत्तर–पृष्ठ 28 में सौरमंडल जहाँ लिखा है वहाँ से P-30 के पहले पैरा के अन्त तक।

हाँ, सप्ताह के दिनों के नाम दिन की पहली होरा के स्वामी ग्रह के नाम पर है। (यहाँ किस प्रकार नाम रखे गए यह नहीं पूछा गया है)।

प्रश्न 2. 27 नक्षत्रों का बारह राशियों से क्या सम्बन्ध है ? जन्म नक्षत्र क्या है ?

उत्तर–एक निरायन राशि सवा दो नक्षत्रों के समान होती हैं एक नक्षत्र 13°20′ का होता है और राशि 30°। निरायन राशि व नक्षत्रों के सम्बन्ध की तालिका पृष्ठ 52 पर दी गई है। जिस नक्षत्र पर चन्द्रमा जन्म के समय होता है वह जन्म नक्षत्र कहा जाता है।

प्रश्न 3. पंचांग के पाँच अंग बताएँ और उनकी गणना किस प्रकार की जाती है उसका उदाहरण दो।

उत्तर–पंचांग के पाँच अंग (1) वार, (2) तिथि, (3) नक्षत्र, (4) करण और (5) योग हैं। इनकी गणना विधि और उदाहरण निम्न प्रकार हैं–

(अ) वार–किसी दिन का वार ज्ञात करने के लिए केतकी अर्हगण को 7 से भाग दें और शेष वार बताएगा। 1. सोमवार 2. मंगलवार आदि।

पौष शुक्ला-अष्टमी सम्वत् 2060 के केतकी अर्हगण विश्वविजय पंचांग के अनुसार 4286 थे। इसे 7 से भाग देने पर 2 शेष बचें अर्थात् उस दिन मंगलवार हुआ।

(ब) तिथि–चन्द्रमा के भोगांश (अंशों में) से सूर्य के भोगांश (अंशों में) घटाकर उसे बारह से भाग दने पर भजनफल या लब्धि जितनी तिथियाँ बीत चुकी हैं और उससे अगली तिथि चल रही हैं हम किसी समय चन्द्र और सूर्य के भोगांश मान लेते हैं– चंद्र के कन्या राशि 6°25′ और सूर्य के धनु राशि 8°9′

इन्हें अंशों में बदलने पर आया चन्द्र = 156°25′

सूर्य = 248°9′

चन्द्र के अंश सूर्य से कम हैं इसलिए इसमें 360° जोड़कर सूर्य के अंश घटाने पर आया

= 360 + 156°25′ – 248°9′

= 268°16′

इसमें 12 से भाग देने पर 268°16′ ÷ 12 लब्धि आई 22 शेष 4°16′; 23वीं तिथि अर्थात् कृष्ण पक्ष की 23 – 15 = 8 अष्टमी तिथि उस समय चल रही थी।

(स) नक्षत्र–चन्द्रमा का नक्षत्र ज्ञात करें। चन्द्र के भोगांश = 156°25′ = 9385 कला इसे 800 से भाग देने पर लब्धि आई 11 शेष 585 अर्थात् 12वाँ नक्षत्र चल रहा था। उस समय चन्द्रमा उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में था।

(द) **करण**–तिथि का आधा = (चन्द्र के भोगांश – सूर्य के भोगांश अंशों में) ÷ 6 लब्धि जितने करण बीत चुके और अगला चल रहा है।

तिथि के उदाहरण को ही लेते हैं।

चन्द्र – सूर्य के भोगांश = 268°16′

इसे 6 से भाग देने पर लब्धि = 44 शेष 4°16′

उस समय 44 करण पूरे हो चुके थे 45वाँ करण वालव नाम का चल रहा था।

(ह) **योग**–(चन्द्र के भोगांश कलाओं में + सूर्य के भोगांश कलाओं में) ÷ 800 लब्धि जितने योग बीत चुके उससे अगला चल रहा है। तिथि के उदाहरण के सूर्य चन्द्र के भोगांश लेते हैं।

चन्द्र + सूर्य के भोगांश = 156°25′ + 248°9′

= 404°34′ = 44°34′ = 2674′

(क्योंकि 404° = 404° – 360° = 44°)

इसे 800 से भाग देने पर लब्धि = 3 शेष 274

अर्थात् 3 योग बीत चुके और चौथ योग सौभाग्य नाम का चल रहा था।

प्रश्न 4. उपग्रहों के नाम, उनकी गणना की विधि और उनके इस्तेमाल का संक्षिप्त वर्णन करें।

उत्तर–पृष्ठ 90 से 92 के मध्य तक उपग्रहों के नाम व उनकी गणना विधि बताई गई है। यदि धूम, पथ, परिधि, इन्द्रचाप और शिखि, अप्रकाश ग्रह सूर्य, चन्द्र या लग्न से युक्त हों तो क्रम से वंश, आयु और ज्ञान का नाश करते हैं।

प्रश्न 5. सायन व निरायण भचक्र में अन्तर क्या है और तुम किसे और क्यों वरीयता देते हो ?

उत्तर–सायन भचक्र की गणना सायन मेष के प्रथम बिन्दु अर्थात् बसंत सम्पात से आरम्भ होती है, जो प्रति वर्ष लगभग 50".3 की दर से नक्षत्रों के पीछे चला जाता है।

निरायन भचक्र की गणना स्थिर मेष के प्रथम बिन्दु (जो नक्षत्रों में स्थिर है) से की जाती है।

भारतीय फलित ज्योतिष नक्षत्रों और स्थिर राशियों पर निर्भर हैं प्राचीनकाल में नक्षत्रों की आकृति, स्वरूप, गुण एवं प्रभाव के कारण ज्योतिष की जाती थी। जन्म के समय के ग्रहों की निरायन राशि, नक्षत्र आदि से जातक के फलाफल ज्ञात किए जाते हैं इन राशियों के स्वभाव के अनुसार, भाव, दृष्टि, मारक आदि के अनुसार फल आदि मालूम किए जाते हैं।

सायन भचक्र के अनुसार (जो आजकल 24° के लगभग अधिक है) अधिकतर राशियों में अन्तर आ जाएगा। सारे वर्गों (नवांश, होरा, द्रेष्कोण आदि) में बहुत अन्तर हो जाएगा और फलित ज्योतिष के सारे सूत्र बेकार हो जाएँगे।

सायन भचक्र के अनुसार सूर्य का दक्षिणी गोलार्ध, विषुवत वृत्त, उत्तरी गोलार्ध आदि में प्रवेश व चलन होता है। इस भचक्र के अनुसार ही लग्न, दशम आदि ज्ञात किए जाते और बाद में निरायन भचक्र के भागों में बदला जाता है। इसी भचक्र के अनुसार ऋतुओं के परिवर्तन का ज्ञान होता है।

उपरोक्त विचारों को ध्यान में रखते हुए हम निरायन भचक्र को वरीयता देते हैं मगर सायन भचक्र को भी बिल्कुल नकारते नहीं।

प्रश्न 6. क्या हमें शनि से भी बाहृय ग्रहों (यूरेनस, नेपचून प्लूटो का प्रयोग करना चाहिए ? कारण बताइए।)

उत्तर–ब्रह्माण्ड में जितने भी द्रव्य हैं सब एक-दूसरे से सम्बन्ध रखते हैं। जो द्रव्य समीप हैं वह अधिक सम्बन्ध रखते हैं और प्रभाव डालते हैं। जैसे किसी प्राणी या मनुष्य पर सबसे अधिक प्रभाव माता का पड़ता है क्योंकि वह सबसे अधिक समीप जन्म से ही होती है, उसके पश्चात् पिता क्रमशः भाई-बहिन, समीप के वातावरण, गुरु, संगी-साथी, गाँव, प्रांत और देश, का प्रभाव आता है। उसी प्रकार समस्त प्राणियों पर ग्रहों और दूसरे आकाशीय पिंडों का उनकी दूरी व उनके द्रव्यमान आदि के कारण आकर्षण शक्ति, विकिरण, विद्युत चुम्बकीय तरंगों आदि का प्रभाव पड़ता है चाहे वह कितना ही नगन्य हो। बहुत-सी बार बहुत छोटी-सी वस्तु का प्रभाव मनुष्य और प्राणी की विचारधारा और उसके अस्तित्व को बिल्कुल बदल देती है।

नयूटन के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक वस्तु एक-दूसरे को द्रंव्यमान के गुणग्न और दूरी के वर्ग से भाग के अनुपात में आकर्षित करती है। सूर्य हमें प्रकाश व शक्ति देता हैं चन्द्रमा सबसे अधिक समीप होने के कारण हम पर बहुत प्रभाव डालता है। इसके पश्चात् दूसरे ग्रह बुध, शुक्र, मंगल, गुरु और शनि के प्रभाव को तो भारतीय ज्योतिष में माना ही गया है।

यूरेनस, नेप्टयून और प्लूटो पृथ्वी से काफी दूर हैं मगर इनका भी पृथ्वी और इसके वासियों पर बहुत प्रभाव होता है, यह एक सत्य है। इन्हें नंगी आँखों से देखा नहीं जा सकता, इस कारण हमारे पूर्वजों ने इनके प्रभाव का अध्ययन नहीं किया। अब इनको दूरदर्शी द्वारा देख लिया गया है, इनकी गति आदि का भी ज्ञान हो गया है। नक्षत्रों का प्रभाव भारतीय ज्योतिष में लेते हैं, जबकि यह ग्रह उनकी अपेक्षा हमारे बहुत अधिक समीप हैं, फिर इनके प्रभाव को क्यों नहीं लें। इस कारण इनके प्रभाव पर शोध करनी चाहिए और इनको भी फलित के प्रयोग में लाना चाहिए। पाश्चात्य ज्योतिष में इन्हें प्रयोग में लाया जाता है।

प्रश्न 7. चन्द्र सौर वर्ष क्या है ? मलमास कब और क्यों पड़ते हैं ? चन्द्र वर्ष कब प्रारम्भ होता है सौर वर्ष कब प्रारम्भ होता है ? इसका क्या महत्त्व है ?

उत्तर–पृष्ठ 74 पर देखें।

चन्द्र वर्ष जब चन्द्रमा के बारह मास पूरे हो जाते हैं, तब प्रारम्भ होता है। वह वर्ष के किसी भी मौसम में प्रारम्भ हो जाता है और लगभग 33 सौर वर्षों में इसका एक वर्ष अधिक हो जाता है।

चन्द्र सौर वर्ष का प्रारम्भ चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को होता है।

सौर वर्ष का प्रारम्भ–जब सूर्य मेष राशि में प्रवेश करता है तब सौर वर्ष प्रारम्भ होता है।

प्रश्न 8. ग्रह प्रणाली पर टिप्पणी लिखिए, भूकेन्द्रीय और सूर्यकेन्द्रीय की व्याख्या कीजिए।

उत्तर–पृष्ठ 29 पर तीसरी पंक्ति से पृष्ठ 30 के पहले पैरे के अन्त तक।

भूकेन्द्रीय–भूकेन्द्रीय में प्रेक्षक (दृष्टा) को पृथ्वी के केन्द्र में मानकर ग्रहों आदि के बारे में गणना की जाती है।

सूर्यकेन्द्रीय में प्रेक्षक (दृष्टा) को सूर्य के केन्द्र में मानकर ग्रहों आदि के बारे में गणना की जाती है इन्हें खगोल गणित के सूत्रों से एक-दूसरे में परिवर्त किया जा सकता है।

प्रश्न 9. ग्रहण क्या है ? ग्रहण का व्यक्ति तथा देश पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

उत्तर–जब पृथ्वी पर इसके किसी भाग में पूर्ण सूर्य या चन्द्र दिखाई नहीं दे तब सूर्य/चन्द्र ग्रहण कहते हैं। अमावस्या को जब पृथ्वी और सूर्य के मध्य चन्द्रमा इस प्रकार आ जाए की सूर्य का प्रकाश पृथ्वी के किसी भाग पर नहीं पहुँच पाए, तव पृथ्वी के उस भाग में **सूर्य-ग्रहण** होता है।

चन्द्र ग्रहण–चन्द्रमा में अपना प्रकाश नहीं बल्कि वह सूर्य के प्रकाश को परावर्त (reflect) करता है। जब पूर्णिमा को सूर्य और चन्द्र के मध्य पृथ्वी इस प्रकार आ जाए की पृथ्वी की छाया के कारण चन्द्रमा पर सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँच पाए, तब चन्द्र ग्रहण होता है।

ग्रहण का प्रभाव–ग्रहण के मध्य की कुण्डली वनाकर, पहले देखें ग्रहण किस राशि में है। राशियों के गुण धर्म के अनुसार इसका फल अनुभव में आता है।

चर राशि के ग्रहण का सम्वन्ध देश में राज्य व्यवस्था अन्तरर्राष्ट्रीय व राजकीय हलचल और सुधार से होता है।

द्विस्वभाव राशि के ग्रहण के प्रभाव देशवासियों की स्थिति, व्यापार, शिक्षण, देश के अपराध, हड़ताल पर पड़ता है।

स्थिर राशियों के ग्रहण का प्रभाव अधिक स्थाई होता है। इसका सम्वन्ध भौतिक संकट, देश की खनिज, फसल आदि से होता है।

ग्रहण की राशि पर शुभ और अशुभ प्रभाव के अनुसार और व्यक्ति अथवा देश की कुण्डली के किसी भाव में ग्रहण के अनुसार फल बताया जाता है।

प्रश्न 10. समय की माप एवं साप्ताहिक वार क्रम के आपसी सम्बन्ध पर टिप्पणी करें।

उत्तर–समय को दिन, सप्ताह, मास, वर्ष आद में मापा जाता है।

प्राचीन माप की कई विधियां हैं। सबसे अधिक प्रचलित पद्धति निम्नलिखित है। (सूक्ष्म समय की ईकाइयां यहां नहीं दी जा रही है।)

1 दिन = 60 घटि = 24 घंटे

1 घटि = 60 विघटि (पल) = 24 मिनट

1 पल = 60 विपल = 24 सैकिण्ड

7 दिनों का एक सप्ताह, 15 दिनों का एक पक्ष, 30 दिनों का एक मास

360 सावन दिनों का एक सावन वर्ष

आधुनिक कैलेण्डर के हिसाब से–

एक औसत सौर मास = 30.438 दिन

एक कैलेंडर सौर वर्ष = 365.2425 दिन

साप्ताहिक वार क्रम के पृष्ठ 42 व 43 देखें।

समय की ईकाइयों के लिये पृष्ठ 69, 70, 71 देखें।

प्रश्न 11. राहु और केतु को छाया ग्रह क्यों मानते हैं ? क्या इनकी गति वक्री और मार्गी दोनों प्रकार की है ? इनकी वास्तविक स्थिति (true position) से क्या तात्पर्य है?

उत्तर– पात उन विदुओं को कइहते हैं जहां चन्द्रमा या कोई ग्रह अपनी कक्षा में भ्रमण करता हुआ क्रांतिवृत को काटे। राहु और केतु चंद्रमा के पात हैं। जब चन्द्रमा क्रांतिवृत के नीचे से ऊपर की ओर अथवा दक्षिण से उत्तर की ओर जाते हुए जिस स्थान पर क्रांतिवृत्त को काटे वह बिन्दु 'राहु' और ऊपर से नीचे की ओर जाता हुआ क्रांतिवृत्त को काटे वह बिन्दु 'केतु' होता है। राहु और केतु सर्वदा 180° की दूरी पर होते हैं। इनका भौतिक अस्तित्व नहीं है। इस कारण उन्हें छाया ग्रह कहते हैं। इनकी गति वक्री और मार्गी दोनों प्रकार की होती है।

अधिकतर वक्री गति होती है। विदोंलन या अक्ष विचलन (Nutation) के कारण कभी कभी स्थिर और मार्गी हो जाता है।

राहु और केतु की वास्तविक स्थिति में यह बिन्दु गणित द्वारा क्रांतिवृत्त पर इनके भोगांश ज्ञात करने की है अर्थात उस समय इनके वास्तविक भोगांश क्या होते हैं। यह लगभग 18 वर्ष 220 दिन में वक्रगति से एक चक्र पूरा करते हैं। अक्ष विचलन के कारण इनकी गति सर्वदा सम समान नहीं रहती। कभी अधिक, कभी कम, कभी स्थिर और कभी मार्गी हो जाती है।

प्रश्न 12. राहु और केतु की वास्तविक और माध्यमिक स्थितियों में क्या अन्तर है? इनकी वास्तविक स्थिति की गणना किस प्रकार की जाती है।

उत्तर—राहु और केतु की वास्तविक स्थिति अर्थात वास्तविक भोगांश (true longitudes) वह होते हैं जिनमें अक्ष विचलन (Nutation) आदि के असर को गणना में लेकर इनके भोगांश ज्ञात किये जावें।

राहु और केतु की माध्यमिक स्थिति अर्थात माध्यम भोगांश (mean longitude) वह होते हैं, जिनमें इनके कुल अगण (revolution) या चक्कर लगाने के समय से 360° को भाग करने पर जो भोगांश आवें, वह गति इनके चलने की होती है। यह समान गति सर्वदा वक्री होती है। इनकी औसत गति 19°36' प्रतिवर्ष या लगभग 8 प्रति घण्टे हैं।

राहु के वास्तविक भोगांशों का अनुमान करने की विधि रेग्फेमैरीज़ 1900-1941 में पृष्ठ 106-107 पर दी हुई है।

आत्ममूल्यांकन

1. महायुग क्या है ? इसके कितने भाग हैं तथा उनके समय की गणना क्या है?

2. संक्षिप्त टिप्पणी लिखें–
(क़) सूर्य सिद्धान्त (ख) वराह सिद्धान्त (ग) आर्य सिद्धान्त।

3. भारतीय एवं पाश्चात्य खगोलविज्ञान के मतों में क्या भिन्नताएं हैं ?

4. संक्षिप्त टिप्पणी लिखें–
(क) गैलीलियो (ख) सर आइजक न्यूटन
(ग) निकोलस कापरनिकस (घ) सर विलियम हर्शल
(ड़) जान कॉच एडम्स।

5. दिन के समय किसी ग्रह का उन्नतांश सबसे अधिक कब होता है और क्यों?

6. आकाशीय गोल (calestial sphere) के चार वड़े वृत्तों के नाम बताएं। उनके महत्व क्या हैं ?

7. ग्रहों और सप्ताह के दिनों के नामों के बीच क्या संबंध है ?

8. क्या ग्रह वक्री गति से घुमते हैं ? अपने उत्तर के समर्थन में कारण बताएं।

9. सबसे अधिक प्रकाशवाला ग्रह कौन सा हे (सूर्य और चन्द्रमा को छोडकर)।

10. पृथ्वी के उत्तरी एवं दक्षिणी गोलार्द्ध पर अधिकतम कितने अक्षांशों तक के स्थानों से दोपहर को सूर्य शिरोबिन्दु पर देखा जा सकता है।

11. दिल्ली में सूर्य शिरो-विन्दु पर कभी नहीं देखा जाता। क्यों ? मद्रास में इसे शिरोबिन्दु पर कब देखा जा सकता है। अपने उत्तर की पुष्टि के लिए कारण बताएं

12. किन ग्रहों को नंगी आंखों से नहीं देखा जा सकता और क्यों ?

13. निम्नलिखित को परिभाषित करें–

(1) चल तथा स्थिर भचक्र (2) अयनांश (3) सम्पात का पीछे सरकना।

14. भचक्र और राशियों, नक्षत्र और उनके चरणों को चित्र के साथ स्पष्ट करें।

15. चल और अचल भचक्र में क्या अन्तर है ? भारत में निरायण प्रणाली को अधिक मान्यता क्यों दी गई है ?

16. भचक्र को मापने के लिए सायन और निरायण प्रणालियों में मूल अन्तर स्पष्ट करें।

17. सायन प्रणाली (जैसा कि पाश्चात्य देशों में किया जाता है) अपनाने के क्या लाभ हैं।

18. चंद्रमा पूर्णिमा को पूरा क्यों दिखाई देता है और अमावस्या को बिल्कुल नहीं ? स्पष्ट करें।

19. नक्षत्र समय (Sidereal Time) और स्थानीय समय; एवं न[illegible]काल (Sidereal Period) और संयुति काल के अन्तर को स्पष्ट करें।

20. पात, राहु एवं केतु शब्दों की व्याख्या करें। राहु, केतु को छाया ग्रह क्यों कहा जाता है ?

21. कोई ग्रह जब अपने पात पर होता है तो उसका विक्षेप कितना होता है?

22. क्या राहु एवं केतु उसी दिशाओं में भ्रमण करते हैं जिसमें अन्य ग्रह ? उनके पृथ्वी के चारों ओर एक बार घूमने में लगने वाला समय बतायें ?

23. सूर्य ग्रहण कैसे होता है एवं पूर्ण ग्रहण होने की अधिकतम समय-सीमा क्या है ? सूर्य ग्रहण कितने प्रकार का होता है ?

24. किन अवस्थाओं में चंद्र ग्रहण होता है तथा इसकी पूर्ण अवधि की सीमा क्या है ?

25. ग्रहण में राहु एवं केतु की क्या भूमिका है ? यदि चंद्रभा राहु या केतु के निकट नहीं हो तो क्या चंद्र ग्रहण हो सकता है ?

26. संक्षिप्त टिप्पणी लिखें–(क) स्थानीय समय, (ख) भारतीय मानक समय, (ग) क्षेत्रीय मानक समय।

27. तारों की दूरियां नापने के लिए कौन-कौन सी ईकाइयां प्रचलित हैं।

28. चान्द्र-सौर वर्ष क्या है ? यह किस प्रकार चान्द्र वर्ष या सौर वर्ष से संबंधित है।

29. चान्द्र सौर वर्ष में अधिक मास किस प्रकार रखे जाते हैं ? इसका नाम किस प्रकार रखा जाता है ?

30. पंचांग क्या है तथा तिथि एवं करण कैसे ज्ञात किया जाता है ? 12 दिसम्बर 2014 को 2 : 30 अप. (शाम) तिथि एवं करण ज्ञात करें।

31. नक्षत्र तथा योग किस प्रकार ज्ञात किये जाते हैं ? 28 दिसम्बर, 2014 को 5:30 अप. (शाम) में नक्षत्र एवं योग ज्ञात करें।

32. कभी-कभी एक तिथि का क्षय हो जाता है और कभी-कभी एक ही तिथि दो दिन चल जाती है। इसके क्या कारण हैं; उदाहरण सहित समझाएं।

33. पाठ में समझाए गये उदाहरण में दी हुई कैलेण्डर विधि से 19 फरवरी, 2014 को क्या वार होगा, निकालें।

ग्रहों के स्थिरांकों की सारणी

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18
ग्रहों के नाम	सूर्य से औसत दूरी (मीलों में)	कक्षा में औसत गति (मीलों में प्रति सैकेण्ड)	प्रकाशानुपात	सान्पातिक काल (पृथ्वी के दिनों में)	स्युति काल (पृथ्वी के दिनों में)	धुरी पर घूमने की अवधि (पृथ्वी के दिनों में)	भूमध्यीय व्यास (मीलों में)	कक्षा की उत्केन्द्रता	कक्षा का क्रांति वृत्त पर झुकाव	द्रव्यमान (पृथ्वी = 1)	घनत्व (जल = 1)	तलीय गुरुत्व (पृथ्वी = 1)	प्रमात्रा (volume) (पृथ्वी = 1)	पलायन वेग (मीलों में) प्रति सैकिंड	अधिकतम कांतिमान	ग्रह की भूमध्य रेखा का कक्षा पर झुकाव	चंद्रमा की संख्या
बुध	36,000,000	29.7	0.06	88	115.9	58.65	3,033	0.206	7°0'	0.055	5.5	0.38	0.055	2.6	(−)1.9	-	0
शुक्र	67,200,000	21.7	0.76	224.7	583.9	243.16	7,523	0.007	3°24'	0.815	5.25	0.90	0.86	6.4	(−)4.4	178°	0
						Hr:M:S.											
पृथ्वी	92,957,000	18.5	0.36	365.3	-	23:56:04	7,926	0.017	-	1.0	5.52	1	1	6.94	-	23°27'	1
मंगल	141,500,000	15.0	0.16	687	779.9	24:37:23	4,218	0.093	1°51'	0.107	3.94	0.38	0.15	3.2	(−)2.8	23°59'	2
गुरु	483,300,000	8.1	0.43	11.9 yrs	398.9	09:50:30	88,378	0.048	1°18'	318	1.33	2.64	1310	37.1	(-)2.6	3°5'	16
शनि	886,100,000	6.0	0.61	29.5 yrs	378.1	10:39:00	74,145	0.056	2°29'	95	0.71	1.16	744	22	(-)0.3	26°44'	20
यूरेनस	1,78,000,000	4.2	0.35	84.0 yrs	369.7	17:00:00	32,190	0.047	0°46'	14.6	1.7	1.17	67	13.9	3.6	98°	5
नेप्च्यून	2,793,000,000	3.4	0.35	164.8 yrs	367.5	17:57:00	30,760	0.009	1°46'	17.2	1.8	1.2	57	15.1	7.7	28°48'	2
प्लूटो	3,667,000,000	2.9	0.47	247.7 yrs	366.7	6 days	1,800	0.248	17°10'	-	-	Below	-	-	14	-	1
						9 hrs.						0.1					
						17 min.											
सूर्य	—	135	—	—	—	25.4days	8,65,000	-	—	330,000	1.41	28	1,300,000	384	-	-	-
चंद्रमा	2,39,000	1.02	7%	27,321	29.53	27.3 दिन	2,160	0.055	5°15'	1/81	3.34	0.16	-	1.5	(-)12.7	-	-
	पृथ्वी से	कि.मी./से															

NOTES

NOTES

NOTES

NOTES

NOTES

R.V.S. BOOK DISTRIBUTORS

G-4/30, Gali No-3, G Block, Paanchva Pusta, Sonia Vihar, Delhi-110094
Mobile : 9953918219

Distributors of the Books Published by Bharatiya Prachya Evam Sanatan Vigyan Sansthan & K.V.R. Publishers All Astrological Books also Available.

The following books are published for astrologers and students of astrology for having deep knowledge of the subject. The authors are learned teachers who are dedicated for the propagation of astrology and astrological researches.

English	Price	Author	Hindi	Price
Mathematical Astrology	300.00	Y.K. Bansal वाई. के. बंसल	गणित ज्योतिष 1	300.00
Astronomy Relevant to astrology	200.00	V.P. Jain वी. पी. जैन	खगोल शास्त्र	150.00
General Astrology	250.00	S.N. Kapoor & Others एस. एन कपूर व अन्य	सामान्य ज्योतिष	200.00
Predictive Astrology	400.00	M.N. Kedar एम. एन. केदार	फलित ज्योतिष	400.00
Nine Planets and Twelve Bhavas	310.00	M.N. Kedar एम. एन. केदार	द्वादशभाव एवं नवग्रह	280.00
Delineation and Dynamic Configuration	300.00	M.N. Kedar एम. एन. केदार	जन्मपत्री का चित्रण एवं गतिशील संरूपण	200.00
Textbook on Shadbala and Bhava Bala	80.00	V.P. Jain वी. पी. जैन	ग्रह बल एवं भाव बल	120.00
Judgement of Bhavas and Timing through dasha and Transit	260.00	M.N. Kedar एम. एन. केदार	भावनिर्णय, दशा एवं गोचर द्वारा समय निर्धारण	260.00
Medical Astrology	255.00			
Mundane Astrology	320.00	M.N. Kedar एम. एन. केदार	संहिता ज्योतिष	500.00
Timing of Marriage	200.00	M.N. Kedar and others	विवाह का समय	200.00
Annual Horoscopy	250.00	M.N. Kedar एम. एन. केदार	वर्षफल एवं भविष्य	120.00
Introduction to Vastu	100.00	M.N. Kedar		
Muhurta	200.00	Kusum Vashistha	मुहुर्त प्रकरण	200.00
Advanced Techniques		M.N. Kedar	फलित दर्पण-I	400.00
of Astrological Predictions-I	400.00	M.N. Kedar	फलित दर्पण-II	600.00
Advanced Techniques		ग्रहशांति तथा आध्यात्मिक उन्नति के लिए		
of Astrological Predictions-II	600.00	संकलनकर्ता	अमृतवाणी	151.00
		एम. एन. केदार	कल्पवृक्ष	201.00

श्री विमल प्रसाद जैन सुपुत्र स्वर्गीय लाला लख्मीचंद जैन सर्राफ का जन्म 31 अगस्त, 1931 को रेवाड़ी (हरियाणा) में हुआ। इन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से एम. ए. (गणित में खगोल शास्त्र सहित) 1953 में की। यह सेवानिवृत लेखा-परीक्षा अधिकारी है।

भारतीय ज्योतिष विज्ञान परिषद द्वारा संचालित भारतीय विद्या भवन में आयोजित द्विवार्षिक पाठ्यक्रम का अध्ययन करने के उपरान्त ज्योतिष प्रवीण और ज्योतिष विशारद् की परीक्षाओं में उच्च श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। इन्होंने भारतीय ज्योतिष विज्ञान परिषद् द्वारा संचालित कक्षाओं में 1992 से 1995 तक भारतीय विद्या भवन में और इसके पश्चात् दूसरे स्थानों पर परिषद की कक्षाओं में खगोल शास्त्र, षड्बल, आयुर्विज्ञान और फलित ज्योतिष का अध्यापन-कार्य कर रहे हैं। खगोल शास्त्र और षड्बल - एवं भावबल पर हिन्दी व अंग्रेजी में इनकी पुस्तकों के कई संस्करण छप चुके हैं। आपने कई शोधपत्र कार्यशालाओं में पढ़े हैं।

13 जनवरी, 1998 को भारतीय प्राच्य एवं सनातन विज्ञान संस्थान, दिल्ली ने आपको प्रबुद्ध लेखक होने पर सम्मानित किया।

इन्होंने देहली राज्य का राष्ट्रीय शतरंज प्रतियोगिताओं में बहुत बार प्रतिनिधित्व किया है। यह देहली राज्य शतरंज संघ के आजीवन सदस्य है तथा 10 वर्ष तक इस संघ के मुख्य सचिव रहे हैं। यह दिल्ली राज्य शतरंज संघ एवं अखिल भारतीय शतरंज संघ (*All India Chess Federation*) के उपाध्यक्ष भी रहे हैं। 1986 में भारतीय युवा शतरंज टीम के प्रबन्धक के रूप में ओखाम (इंगलैंड) गये थे, उस टीम के सदस्य आज के ग्रैंडमास्टर विश्वनाथन आनन्द भी थे।